

रेल रश्मि

अंक : 67, मार्च 2015



पूर्वोत्तर रेलवे राजभाषा विभाग की त्रैमासिक पत्रिका



19.03.15 को क्षेत्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक को संबोधित करते महाप्रबंधक श्री राजीव मिश्र साथ में श्री ज्ञान दत्त पांडेय, मुराधि व श्री संजय यादव, उप मुराधि



11.02.15 को यांत्रिक कारखाना इन्जतनगर के निरीक्षण दौरे पर 'यंत्रालय बुलेटिन' का विमोचन करते महाप्रबंधक श्री राजीव मिश्र साथ में श्री मनोज विश्वास, मुकाप्र



18.03.15 को 'मधुमेह रोग व हाइपर टेंशन' पर तकनीकी संगोष्ठी में दीप प्रज्वलित करते श्री एच.आर.राव, मुख्य यात्री परिवहन प्रबंधक, श्री संजय यादव, उपमुराधि व अन्य अधिकारीगण



18.03.15 को 'मधुमेह रोग व हाइपर टेंशन' पर तकनीकी संगोष्ठी में मधुमेह रोग के बारे में विस्तार से चर्चा करते डॉ. नंद किशोर, उप मुचिनि/मुख्यालय



18.03.15 को 'मधुमेह रोग व हाइपर टेंशन' पर तकनीकी संगोष्ठी में हाइपर टेंशन के बारे में विस्तार से चर्चा करते डॉ. डी.एल. चौरसिया, वरि. मंडल चिकित्सा अधिकारी, ल. ना. मिश्र रेलवे चिकित्सालय



17.04.15 को मुख्यालय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक को संबोधित करते मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री ज्ञान दत्त पांडेय साथ में श्री संजय यादव, उप मुराधि

रेल रश्मि

त्रैमासिक पत्रिका

अंक : 67

मार्च 2015

संरक्षक:

राजीव मिश्र

महाप्रबंधक



मुख्य संपादक:

ज्ञान दत्त पांडेय

मुख्य राजभाषा अधिकारी



उप मुख्य संपादक:

संजय यादव

उप मुख्य राजभाषा अधिकारी



संपादक:

वी. डुंगडुंग

वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी



सह संपादक:

ध्रुव कुमार श्रीवास्तव

राजभाषा अधिकारी



उप संपादक व समस्त संपादन:

सुनील कुमार

वरिष्ठ अनुवादक



पता :

राजभाषा विभाग

मुख्यालय कार्यालय परिसर

पुर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर-273012

टेलीफोन- 62852 एवं 62859 (रेलवे)

0551-2203396

E-mail- senior019@gmail.com

इस अंक में

विषय	रचनाकार	पृष्ठ सं.
आपने लिखा है		3
दिनकर: स्मृति के वातायन से (संस्मरण)	प्रभात कुमार राय	5
....बेचत फिरे कपूर (साहित्य)	बी. आर. विप्लवी	10
अंतर्भूत की सुंदरता (लेख)	बी. के. राय	17
साहित्य-सूत्र के वात्स्यायन: खुशवंत सिंह (श्रद्धांजलि)	डा. राजेश हजेल	19
साहित्यकार और प्रतिबद्धता (परिसंवाद)	कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव	24
आदर्श संत स्वामी विवेकानंद (लेख)	के. के. यादव	29
रेल यानों में यात्रा डाइजेस्टर-शीन टॉयलेट का प्रयोग (पर्यावरण)	कार्तिकेय सिंह	31
राष्ट्रपति डा. जाकिर हुसैन (व्यक्तित्व)	चंद्रभूषण ओझा	33
भारत में रेलवे का विकास (लेख)	हीरा लाल	34
श्रद्धा का प्रकटीकरण आवश्यक (लेख)	सुनील कुमार	40
मेरी बृजमनगंज यात्रा (यात्रा-वृत्तान्त)	श्याम बाबू शर्मा	42
शिक्षा और छात्र-शक्ति (लेख)	सुरेश महतो	45
साहित्य और मनोविज्ञान का अंतर्सम्बन्ध (शाश्वत)	डा. हरिशंकर कुमार सिन्हा	47
संबंध (लेख)		
रेल में रंगिस्तान (कहानी)	हुसैन तबस्सुम 'निहॉ'	49
फिक्र की कहानी (थाई-लोककथा)	कु. सुमति मिश्र	52
आधुनिक जीवनशैली में मोटापे से रोकथाम के उपाय (स्वास्थ्य)	कु. अंजना लाल	53
मेरे अवतार बनने की संभावना (व्यंग्य)	रण विजय सिंह	55

कविता, गीत एवं गूज़ल

आवारा कुत्ता (कविता)	ठाकुर अतुल्य कुमार श्रीवास्तव	57
कविताएँ	ओमप्रकाश पांडेय आचार्य जी	58
गूज़लें	डा. कृष्ण चंद्र लाल	59
गूज़लें	टी.एन. श्रीवास्तव 'वफा गोरखपुरी'	59
कविताएँ	अनिल कुमार दत्ता	60
कविताएँ	रीभा तिवारी	61
कविताएँ	अरुण कुमार मिश्र	62
राष्ट्र को क्या चाहिए (कविता)	अनामिका सिंह	62
कविता	सुधीर कुमार 'चंदन'	63
कविताएँ	शंभू नारायण	63
फागुनी दोहे	दीनानाथ तिवारी	64
रेलवे स्टेशन के अनाम मेहनतकश (कविता)	शिवेंद्र कुमार मिश्र	65
कविता	तारकेश्वर शर्मा 'विकास'	65
गतिविधियाँ		66

निःशुल्क वितरण हेतु

(पत्रिका के अंतर्गत प्रकाशित लेखों में व्यक्त किए गए विचार लेखकों के अपने हैं)



संपादक की कलम से...

आज के तकनीकी युग में कंप्यूटरीकरण, लैपटॉप, मोबाइल फोन आदि के माध्यम से सूचना आदान-प्रदान किए जाने के कारण समय की बचत अत्यधिक बढ़ गई है। अधिकांश लोग समय की बचत के लिए इसी पर भरोसा रखते हैं। तकनीकी युग होने के बावजूद भी पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं का अपना अलग ही संसार है जिसके कारण इनकी महत्ता कभी कम नहीं होगी।

हम पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं के जरिये अपनी अभिव्यक्ति को विस्तार से पाठकों के समक्ष रख सकते हैं। एक रचनाकार का सीधा संवाद अपने पाठकों से होता है। वैसे तो संचार माध्यमों के रूप में दूरदर्शन, रेडियो, समाचार-पत्र अपनी अहम् भूमिका निभाते हैं। पर ये आईने के सदृश एक झलक दिखा जाते हैं जबकि पत्रिकाओं की महत्ता दूरगामी है। ये पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएँ आपके रेल या बस की लंबी सफर में भी एकांतता को दूर कर देती हैं। इन पत्रिकाओं के नियमित सेवन से आपके सोचने की शक्ति एवं कल्पनाशीलता में वृद्धि होती है।

मुझे विश्वास है कि 'रेल रश्मि' का प्रस्तुत अंक आपके लिए निश्चित रूप से उपयोगी साबित होगा। हमारी कोशिश है कि सूचना क्रांति के इस दौर में भी यह पत्रिका अपनी इंद्रधनुषी छटा बिखेरती रहेगी।

(वी. डुंगडुंग)

वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी

◆ आपने लिखा है ◆

सादगी का सौंदर्य

‘रेल रश्मि’ का अंक 66 (दिसंबर 2014) मिला। इस अंक का रूप-रंग बहुत सादा पर आकर्षक है। यही सादगी का सौंदर्य है। इसमें प्रकाशित लेख/रचनाएँ स्तरीय एवं पठनीय हैं। ‘लोक संस्कृति’ (राकेश त्रिपाठी), ‘संतुलित जीवन’ (वी.के.राय), ‘ट्रेन की छत पर अंतिम यात्रा’ (अरुण कुमार त्रिपाठी), ‘डा. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में सांस्कृतिक चेतना’ (कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव) जैसी रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। एम. प्रसाद मधुप, यशवीर सिंह और अन्य कवियों की कविताएँ भी अच्छी हैं। राजभाषा हिंदी से संबंधित जानकारीयों भी काफी उपयोगी और ज्ञानवर्द्धक हैं। इतनी अच्छी सामग्री के साथ एक स्तरीय पत्रिका का प्रकाशन सराहनीय है। पत्रिका संपादक एवं प्रबंधक को बधाई।

प्रो. कृष्ण चंद्र लाल

पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग

पूर्व अधिष्ठाता, कला संकाय

दी.द.उ.गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

डी-55, सूरजकुंड कालोनी, गोरखपुर

संपर्क: 9451958715

को बड़-छोट कहत अपराधू

‘रेल रश्मि’ का 66वाँ अंक मिला। रचनाएँ ऐसी हैं कि उनके बारे में ‘को बड़-छोट कहत अपराधू’ जैसा बोध होता है; फिर भी अंक की सर्वोत्तम रचनाओं में रण विजय सिंह का व्यंग्य ‘बाई प्रोडक्ट’ सबसे पहले पढ़ा और पढ़ कर मजा आ गया। छोटे-छोटे चुटीले वाक्य जिनके माध्यम से भारत में खेलों की दुर्दशा पर कई पैने प्रहार किए गए हैं। ‘डा. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों’ पर कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव का एवं ‘रेणु’ पर डा. कृष्ण चंद्र लाल का लेख पर्याप्त जानकारीयों देने में सफल है। ‘महर्षि विश्वामित्र’ पर सुनील कुमार का लेख, ‘भारतीय लोक संस्कृति’ पर राकेश त्रिपाठी एवं वी.के.राय का ‘संतुलित जीवन’ लेख सराहनीय है। दीनानाथ तिवारी, ए.के.दत्ता एवं यशवीर सिंह की कविताएँ पठनीय तथा रोचक हैं।

दीपक चक्रवर्ती ‘निष्ठांत’

सचिव आधारशिला

हुमायूँपुर उत्तरी, गोरखपुर

संपर्क: 9455058120

आद्योपांत सुरुचिपूर्ण

त्रैमासिक पत्रिका ‘रेल रश्मि’ का दिसंबर अंक देखने एवं अध्ययन करने का सुअवसर मिला। पत्रिका आद्योपांत सुरुचिपूर्ण एवं मनोहर ढंग से प्रस्तुत की गई है जिससे आपके कुशल संयोजन एवं संपादन की पूर्ण झलक मिलती है। पत्रिका में राकेश त्रिपाठी का लेख ‘लोक संस्कृति’, सुनील कुमार का ‘महर्षि विश्वामित्र’, राजीव शर्मा का ‘हिंदी की बदलती दशा’, डा. कृष्ण चंद्र लाल का ‘रेणु के मैला आँचल का यथार्थ’, कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव का ‘डा. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में सांस्कृतिक चेतना’ उपयोगी, पठनीय, सोद्देश्य और सार्थक है वहीं रण विजय सिंह का व्यंग्य ‘बाई प्रोडक्ट’ भारत में खेलों की दुर्दशा का खाका खींचने में पैने व्यंग्य के जरिये अपनी मिसाल आप हैं। इस अंक में किरन श्रीवास्तव, यशवीर सिंह, दीनानाथ तिवारी, प्रवीण सिंह की कविताएँ ध्यान आकृष्ट करती हैं। भारतीय नववर्ष की हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

जगदीश चंद्र श्रीवास्तव

सचिव, पी. एन. बी. डी.

जनसेवा संस्थान, सूरजकुंड, गोरखपुर

संपर्क: 9696706842

मनोरंजक, विचार-प्रधान

दिसंबर 2014 का अंक इस बार अपेक्षाकृत विलंब से प्राप्त हुआ; किंतु जब अंक का अवलोकन और अध्ययन-मनन किया, तब सारा मनोमालिन्य खेद, हताशा, कुंठा जाने किस अदृश्य गवाक्ष से तिरोहित हो उठी।

दिसंबर अंक में ‘महर्षि विश्वामित्र’ (सुनील कुमार), ‘डा. लक्ष्मी नारायण लाल के नाटकों में सांस्कृतिक चेतना’ (कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव), ‘रेणु के मैला आँचल का यथार्थ’ (डा. कृष्ण चंद्र लाल) समेत राकेश त्रिपाठी का लेख ‘लोक संस्कृति’, वी.के.राय का ‘संतुलित जीवन’ और रण विजय सिंह का ‘बाई प्रोडक्ट’ पठनीय और मनोरंजनपूर्ण तथा विचार-प्रधान आलेख है। इस अंक में प्रवीण सिंह, किरन श्रीवास्तव, दीनानाथ तिवारी एवं यशवीर सिंह की काव्य रचनाएँ विशेष रूप से पसंद आयीं। ‘भारतीय दोहे’ वास्तव में रोचक रहे।

एम. जे. श्रीवास्तव

ए.आई.पी.एन.बी.ओ.ए.

मंडल सचिव, गोरखपुर

संपर्क: 9450882600

कुष्ठाल संयोजन

‘रेल रश्मि’ पत्रिका का 66वाँ पुष्प प्राप्त हुआ। अंक अत्यंत सुरुचिपूर्ण और कुष्ठाल संयोजन से युक्त है। इस अंक में जहाँ फणीष्ठवरनाथ ‘रेणु’ के बारे में डा.कृष्ण चंद्र लाल का लेख कई रोचक जानकारियाँ देने में सक्षम है, वहीं ‘महर्षि विष्टवामित्र’ (सुनील कुमार) एवं ‘डा. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में सांस्कृतिक चेतना’ (कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव) और ‘लोक संस्कृति’ (राकेश त्रिपाठी) के लेख ज्ञानवर्द्धक हैं।

दिसंबर 2014 अंक की कविताओं में दीनानाथ तिवारी, यशवीर सिंह, किरन श्रीवास्तव और एम. प्रसाद मधुप की रचनाएँ पसंद आयीं। अंक संग्रह करने योग्य है।

भारतीय नव वर्ष की शुभकामनाएँ

सुरेंद्र जायसवाल

पूर्व उप सभापति, नगर निगम

सुरेंद्र मण्डीनरी स्टोर्स

धर्मशाला बाजार, गोरखपुर

संपर्क: 9839962734

ज्ञानवर्द्धक एवं पठनीय

पत्रिका का दिसंबर अंक देखने-पढ़ने का अवसर मिला। इस अंक में तकनीकी और साहित्यिक लेखों का उत्तम संयोजन है। विशेष रूप से राकेश त्रिपाठी का लेख ‘लोक संस्कृति’, एम. फारूकी का ‘एक अनुरोध’, सुनील कुमार का ‘महर्षि विष्टवामित्र’ सहित डा. के.सी.लाल का ‘रेणु’ पर तथा कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव का ‘डा. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों’ पर लेख अत्यंत ज्ञानवर्द्धक एवं पठनीय रहे। रण विजय सिंह का व्यंग्य लेख ‘बाई प्रोडक्ट’ खासा मनोरंजक है। इसी अंक में दीनानाथ तिवारी, किरन

श्रीवास्तव, यशवीर सिंह की काव्य रचनाएँ पठनीय और मन की उदासी दूर करने में सक्षम हैं।

डा. मनोज कुमार

संयुक्त मंत्री

गुआकटा, गोरखपुर

संपर्क: 9450884071

पठनीय और उपयोगी

त्रैमासिक पत्रिका ‘रेल रश्मि’ पर्याप्त पठनीय एवं सुरुचिपूर्ण ज्ञानवर्द्धक रचनाओं से भरपूर है। इससे समूचे परिवार का बौद्धिक मनोरंजन होता है। दिसंबर अंक में मैंने सबसे पहले रण विजय सिंह का रोचक व्यंग्य ‘बाई प्रोडक्ट’ पढ़ा। स्वयंभू अध्यक्ष की कारस्तानियों से खूब अवगत हुआ। तैराकी में पदक मिलने की तमाम संभावनाएँ ज्ञात हुईं। ‘देखन में छोटे लगत, घाव करे गंभीर’ यों हैं रण विजय सिंह के पैने तीर।

अन्य लेखों में ‘महर्षि विष्टवामित्र’ (सुनील कुमार), ‘रेणु के मैला आँचल का यथार्थ’ (डा. कृष्ण चंद्र लाल); ‘डा. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में सांस्कृतिक चेतना’ (कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव) समेत कहानियों में ‘पहला मुकदमा’ (घनश्याम आई. काने) और ‘तीर्थस्नान’ (के.एल. पांडेय) विशेषरूप से पठनीय और उपयोगी हैं। काव्य-खंड में दीनानाथ तिवारी, यशवीर सिंह, ए.के.दत्ता की कविताएँ रोचक लगीं।

प्रियंबदा ओझा

सी/117/127

जगन्नाथपुर, गोरखपुर

संपर्क: 8081818488

पूर्वोत्तर रेलवे पर राजभाषा संबंधी गतिविधियों
का दिन-प्रतिदिन का अपडेट सोशल मीडिया
फेसबुक पर आप देख सकते हैं। इसे आप
<http://www.facebook.com/rajbhasha.ner>
पर देख सकते हैं।

◆ संस्मरण ◆
दिनकर स्मृति के वातायन से

प्रभात कुमार राय

(उक्त संस्मरण 42 साल पहले उनसे हुई मुलाकात पर आधारित है)

बचपन में

अक्षर-ज्ञान के बाद जब हिंदी पढ़ना शुरू किया उसी वक्त से दिनकर की बालोपयोगी किताबें, 'मिर्च का मजा', 'सूरज का ब्याह', 'चित्तौड़ का शाका' बड़े चाव से पढ़ता था। फिर मध्य एवं उच्च विद्यालय के पाठ्यक्रम में दिनकर की कविताएँ 'सिपाही का आदर्श', 'कलम या कि तलवार', 'शक्ति और सौंदर्य' तथा 'कलम! आज उनकी जय बोल' गहनता से पढ़ने का मौका मिला। मेरे पिताजी (स्व. धर्मदेव राय) 1938 से ही, जब वे आठवें वर्ग के छात्र थे, दिनकर जी के संपर्क में थे। दिनकर जी अपने क्षेत्र के लोगों से काफी घुल-मिल कर तथा सहृदयता से बातें करते थे। बाद में पटना कॉलेज में पढ़ाई के दरम्यान पिताजी की आत्मीयता दिनकर जी से प्रगाढ़ हुई। दिनकर साहित्य के प्रति पिताजी का अद्भुत सम्मान था। मेरे घर के पुस्तकालय में पूरा दिनकर साहित्य उपलब्ध है। पिताजी का दिनकर जी के साथ बराबर पत्राचार होता था। पत्र का जवाब देने में दिनकर जी काफी तत्परता दिखाते थे। दिनकर जी के पत्र अधिकांशतः छोटे और पोस्टकार्ड पर हुआ करते थे लेकिन तथ्यों से भरपूर होते थे। हमलोग उत्सुकतावश उनकी चिट्ठियाँ पढ़ा करते थे। उनके पत्रों में अंतरंगता जीवन पद्धति, अपना सुख-दुःख तथा वैयक्तिक विचार आदि सुस्पष्ट होते थे। पिताजी को संबोधित दिनकर जी के कुछ पत्र कन्हैया लाल फूलफगर जी की पुस्तक 'दिनकर के पत्र' में संकलित किया गया है। बानगी के तौर पर एक छोटे पत्र को उद्धृत कर रहा हूँ—

5, सफदरजंग लेन, नई दिल्ली

03.10.1968

प्रिय धर्मदेव जी,

आपका 23 सितंबर का पत्र आज मिला। शुभकामनाओं के लिए धन्यवाद देता हूँ।

रोग निकट तनु, जरठ पनु, तुलसी संग कुलोग।
राम कष्टा लै पालिए, दीन पालिबे जोग।

आपका
दिनकर

तुलसी दिनकर के प्रिय कवि थे तथा तुलसी के उपकार को वे सदा स्वीकार करते थे।

श्रौष्टावावस्था में मैं आकाशवाणी पटना से प्रसारित दिनकर की राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत कविताएँ, 'लहूँ में तैर-तैर कर नहा रही जवानियाँ', 'वह जो दिख रहा है झिलमिल, दूर नहीं हैं; थककर बैठ गए क्यों भाई! मंजिल दूर नहीं है।' दिलचस्पी से सुना करता था। गाँव में घर पर कविवर आरसी प्रसाद सिंह, डा. राम खेलावन राय, डा. वचनदेव कुमार, डा. राम त्वक्या शर्मा, लक्ष्मी नारायण शर्मा 'मुकुर', ब्रह्मदेव शर्मा 'विमुक्त', वशिष्ठ नारायण सिंह 'विंदु', भागवत प्रसाद सिंह एवं अन्य साहित्य-प्रेमी कभी-कभी आते थे तो दिनकर के व्यक्तित्व और कक्षित्व की चर्चा होती थी। पटना साइंस कॉलेज के प्राक्-विज्ञान के पाठ्यक्रम में 'रश्मिर्माथी' पुस्तक शामिल था जिसके कुछ अंश को डा. जगदीश नारायण चौबे जी तथा शेष को प्रो. राम खेलावन राय बड़े ही विस्तार से तथा रोचक ढंग से पढ़ाते थे। व्याख्या के वक्त वे दिनकर जी से अपनी अंतरंगता तथा उनकी कुछ पंक्तियों से असहमति भी जताते थे। इन सबके कारण मुझे इस महाकवि से मिलने की उत्कट इच्छा थी। मैंने पिताजी से भी आग्रह किया था कि जब भी मौका मिले मुझे भी साथ ले चलें ताकि उनका दर्शन कर सकूँ।

दिनांक 23.09.1972 को स्थानीय साहित्य-प्रेमियों ने दिनकर जी की 64वीं जयंती के अवसर पर उन्हें अभिनंदन करने हेतु एक समारोह का आयोजन फुलवरिया(बरौनी) उच्च विद्यालय में किया था। मैं उस वक्त बिहार कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, पटना का छात्र था। संयोगवश उस दिन मैं अपने पैतृक निवास (बछवाड़ा, जिला-बेगूसराय) पर था। पिताजी ने मुझे भी बरौनी चलने को कहा। मेरे गाँव और उसके आस-पास के काफी लोग दिनकर जी को देखने और सुनने बछवाड़ा से रेलगाड़ी से बरौनी के लिए प्रस्थान किए। बरौनी स्टेशन पर ट्रेन से उतरते ही तेज सी आवाज आई— 'देखिए, काका हाथरसी जा रहे हैं।' आगे बढ़ने पर

सचमुच पाया कि लंबी दाढ़ी एवं खास केश-विन्यास वाले लोकप्रिय हास्य-कवि कानपुर जाने वाली मीटर गेज की गाड़ी के डिब्बे में खिड़की के पास बैठे थे। लोगों ने उन्हें दिनकर जयंती समारोह के बारे में बताया तथा अपनी यात्रा को स्थगित कर भाग लेने हेतु आग्रह किया। लेकिन काका हाथरसी को कानपुर जाना आवश्यक था। इतने में गाड़ी रवाना होने लगी। उन्होंने झट से अपनी जेब से कागज और कलम निकाल कर रेंगते ट्रेन से त्वरित कुंडलियाँ दिनकर जी पर लिखकर अपने विलक्षण आशु-कवित्व का परिचय दिया। उसकी कुछ पंक्तियाँ अभी भी याद हैं-

मिली बरौनी में खबर, हुआ हृदय को हर्ष।

राष्ट्र कवि दिनकर करें जीवन में उत्कर्ष॥

हास्य कवि काका हाथरसी की हस्तलिखित फौरी कविता को जयंती समारोह में उन्हीं की छौली में सबों को सुनाया गया था।

राष्ट्र कवि से मिलने की अभिलाषा पूरी होते देख मैं बहुत उत्साहित था। निर्धारित समय पर विद्यालय के प्रांगण में दिनकर जी का आगमन हुआ। उनका देदीप्यमान व्यक्तित्व, गौर वर्ण, सुलंब देहयष्टि, दिव्य ललाट, दीप्त चेहरा, शुभ्र कुर्ता एवं धोती, भव्य अंगवस्त्रम्, सजा-सँवारा केश-विन्यास, दाहिने हाथ में लंबी छड़ी और बायें हाथ से अपने सुपौत्र अरविंद कुमार सिंह को पकड़े हुए देख कर हम सब मंत्र-मुग्ध थे। समारोह-स्थल पर काफी भीड़ थी। मंच पर जनपद के साहित्यकार एवं कला-प्रेमियों में राष्ट्रकवि के करीब पहुँचने के लिए होड़ लगी थी। मैं भीड़ और अफरा-तफरी देखकर थोड़ा निरुत्साहित हो गया था कि शायद मेरी मुलाकात दिनकर जी से नहीं हो पाएगी। पिताजी मंच पर दिनकर जी के निकट बैठे थे। मैं दूर खड़ा था। मेरी उदासी और मनोभाव को भाँपकर पिताजी ने हाथ हिलाकर मुझे मंच पर आने का इशारा किया। मैं यह मौका चूकना नहीं चाहता था। भीड़ को चीरते हुए मैं मंच पर दिनकर जी के पास पहुँच गया। पिताजी ने मेरा परिचय राष्ट्रकवि से करवाया। मैंने राष्ट्रकवि का चरण-स्पर्श कर आशीर्वाद लिया। उन्होंने मुझे स्नेह-पूर्वक अपने पास बैठाया और गौर से मुझे देखने के बाद पिताजी को कहा- 'धर्मदेव! तुम्हारा लड़का तो तुम्हारी तरह दुबला-पतला है। तुम्हारे शरीर पर माँस नहीं चढ़ेगा? जैसे कॉलेज में थे वैसे के वैसे ही

रह गए?' फिर मेरी ओर मुखातिब होकर कहा- 'खूब मेवा खाओ और दूध पीओ। तुम इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहे हो। इसमें तो कड़ी मेहनत करनी पड़ेगी। सुना है वर्कशॉप में हथौड़ा भी चलाना पड़ता है।' युवकों के कष्टकाय शरीर को देखकर दिनकर जी बुरी तरह झुँझला जाते थे। उनको पिचका हुआ गाल और दुबला शरीर बिल्कुल पसंद नहीं था। मैं मन ही मन सोच रहा था-

पत्थर-सी हो माँसपेष्टियाँ, लोहे से भुजदंड अभय;

नस-नस में हो लहर आग की, तभी जवानी पाती जाए।

पंक्तियों के रचनाकार को किसी युवक के क्षीण शरीर को देखकर ऐसी प्रतिक्रिया स्वाभाविक थी। महाकवि के पास बैठकर उनके आकर्षक व्यक्तित्व और चेहरे की आभा से काफी पुलकित और विस्मित था। प्रारंभ में मैं काफी असहज महसूस कर रहा था लेकिन उनकी प्रकृति की सरलता तथा स्नेह-वर्षा ने मुझे सहज बना दिया। सहसा मुझे यह ख्याल आया कि क्यों नहीं दिनकर जी से कुछ साहित्यिक चर्चा कर लूँ? मंच संचालन में व्यवस्थागत कमी के कारण विलंब हो रहा था। यह मेरे लिए वरदान साबित हुआ। मैंने हिम्मत जुटाकर कहा- 'महाशय, आपकी लोकप्रिय रचना एवं सर्वश्रेष्ठ सहज कृति 'रश्मिरथी' हमलोगों को पटना साइंस कॉलेज में पढ़ाया गया है। मुझे और मेरे सहपाठियों को इस काव्य के अधिकांश अंश कंठस्थ हैं। कविता का प्रवाह विलक्षण है- पीसा जाता जब इक्षुदंड, बहती रस की धारा अखंड; जब फूल पिरोये जाते हैं, हम उनको गले लगाते हैं; मेंहदी जब सहती है प्रहार बनती ललनाओं की शंभार...।

क्या ये पंक्तियाँ स्वतः आपके अंतस्थल से प्रस्फुटित होकर निकली हैं? उन्होंने गंभीरतापूर्वक कहा- 'तुम कविता को आसान समझ लिए हो। वास्तव में कवि-धर्म अत्यंत कठिन है। कवि का प्रधान कर्म अनुभूतियों का ग्रहण एवं उसकी सम्यक अभिव्यक्ति है। तुम्हें आश्चर्य होगा कि जिन पंक्तियों को तुमने एक श्वास में सुनाया है, उन्हें अंतिम रूप देने में मुझे रात भर जग कर कई बार काटना-छाँटना पड़ा ताकि भाव एवं अनुभूति को प्रबलतम एवं निकटतम ढंग से व्यक्त कर सकूँ।' मुझे मन ही मन अंग्रेजी का सूत्रवाक्य 'जीनियस एक प्रतिष्ठत प्रतिभा और 99 प्रतिष्ठत पसीना

का जोड़ होता है' (जीनियस इज वन परसेंट इंसपेरेशन् एंड नाइटीनाइन परसेंट परस्पेरेशन्) का मर्म समझ में आ गया। जिसमें अध्यवसाय, लगन और धीरज नहीं है, वह प्रतिभा-संपन्न होकर भी कोई बड़ा काम संपादित नहीं कर सकता है। मुझे उनकी रचनाओं को पढ़कर उस प्रभूत प्रस्वेद का ध्यान आता है जिसे दिनकर जी ने बहाया होगा। बाद में उनकी पुस्तक 'शुद्ध कविता की खोज' पढ़ने पर कविता के संबंध में उनकी विचारों से अवगत हुआ। उन्होंने लिखा है- 'कवि का कार्य छंद और तुकों की घूस देकर पाठकों को रिझाना नहीं है। उसका काम अनुभूतियों को उसके सही रूप में ग्रहण करना है।'

मेरी पहली जिज्ञासा पर राष्ट्रकवि की गंभीर प्रतिक्रिया से मैं काफी उत्साहित हो गया तथा मेरा आत्मबल भी मजबूत हो गया। इससे तमाम झिझक दूर हो गया और मैं दिनकर जी की गर्विष्ठ उपस्थिति में बिल्कुल सहज महसूस करने लगा जिससे मुझे दूसरे प्रश्न पूछने की इच्छा जागृत हुई। बहुत से उपस्थित साहित्यकार एवं साहित्य-प्रेमी मुझे ईर्ष्या-युक्त नजरों से घूर रहे थे कि कौन नवयुवक राष्ट्रकवि से घुल-मिल कर आत्मीयता से बातें कर रहा है? मैंने पूछा- 'महाशय अपनी श्रृंगारिक रचना 'उर्वशी' में आपने लिखा है- 'शिखरों का जो मौन, वही झरनों में गरज रहा है।' मेरे जानते इन पंक्तियों का भावार्थ ऊर्जा के संरक्षण के सिद्धांत को प्रतिपादित करती है। शिखर से ऊँचाई का भान होता है और यह स्थितिज ऊर्जा (पोटेंशियल एनर्जी) का द्योतक है। झरना गतिशीलता के कारण गतिज ऊर्जा (काइनेटिक एनर्जी) को इंगित करता है। शिखर पर स्थितिज ऊर्जा महत्तम होता है और गतिज ऊर्जा शून्य। इसके विपरीत झरना में गतिज ऊर्जा महत्तम होता है और स्थितिज ऊर्जा शून्य।' इसे सुनते ही दिनकर जी ने कहा- 'तुम विज्ञान के विद्यार्थी हो। मैं इतिहास पढ़ा हूँ लेकिन विज्ञान के संबंध में मेरी निष्ठित धारणा है जिसे मैं कई निबंधों में व्यक्त किया हूँ। तुम्हारा ऊर्जा के संरक्षण संबंधी विष्टलेषण मेरे दिमाग से परे है।' इतने में मंच संचालन आरंभ हो गया तथा कई साहित्यिक दिनकर जी की ओर बढ़ने लगे। मैं पुनः चरण-स्पर्श कर श्रोताओं की पिछली पंक्ति में खिसक गया। दिनकर जी की विचारोत्तेजक बातें मुझे यह सोचने को बाध्य कर

दिया कि ज्ञान की सारी छाखाएँ अंततः एक जगह कन्वर्ज हो जाती हैं। कालांतर में दिनकर जी के एक निबंध में पढ़ा कि 'विज्ञान स्थूलता की कला है। किंतु, कविता वस्तुओं के सूक्ष्म रूप का मूल्य ढूँढ़ती है जो गणित की भाषा में व्यक्त नहीं किए जाते हैं।'

इस समारोह की बड़ी खासियत थी कि कविवर आरसी प्रसाद सिंह, जो दिनकर के अंतरंग मित्र थे समारोह का सभापतित्व करने अपने गाँव एरौत (समस्तीपुर जिला) से आये थे तथा इन दोनों महाकवियों का मिलन लगभग 20 साल बाद हो रहा था। मंच पर लक्ष्मी नारायण शर्मा 'मुकुर', महेंद्र नारायण शर्मा, भागवत प्रसाद सिंह, वशिष्ठ नारायण सिंह 'विंदू', ब्रह्मदेव शर्मा 'विमुक्त' आदि उपस्थित थे। जनपद के कवियों द्वारा दिनकर जी को समर्पित कविताओं का पाठ एवं भाषण के बाद सभापति महोदय द्वारा 'राका' पत्रिका का 'दिनकर अंक' दिनकर जी को समर्पित किया जाना था। जब आरसी जी उठकर पत्रिका का विशेषांक समर्पित करने वाले थे, अचानक दिनकर जी चिल्लाये- 'अरे, कोई फोटोग्राफर नहीं है जो इस दृश्य को कैमरे में कैद कर लेता?'

कार्यक्रम के अंत में जब दिनकर जी को बोलने के लिए अनुरोध किया गया तो मैं सोच रहा था कि अपनी ओजस्वी वाणी में कविता पाठ करेंगे लेकिन उन्होंने अपना भाषण कुछ इसतरह आरंभ किया...

गोस्वामी तुलसीदास ने एक जगह लिखा है-
'तुलसी वहाँ न जाइए, जहाँ जन्मस्थान
गुण-अवगुण सब कोई जाने, धरे तुलसिया नाम।'
लेकिन मैं तुलसीदास जी से सहमत नहीं हूँ। मैं उनसे क्षमा-याचना के साथ उनके पदों में कुछ संशोधन कर रहा हूँ-

'तुलसी निष्ठचय जाइए, जहाँ जन्मस्थान
प्यार सहित सब कोई धरै, जहाँ तुलसिया नाम।'
फिर उन्होंने कहा कि मेरा अभिनंदन मेरे साहित्यिक अवदान के लिए नहीं होना चाहिए। वरन इसलिए होना चाहिए कि मैंने दस कन्याओं का ब्याह करवाया है। यह दहेज प्रथा जैसी सामाजिक कुरीति पर राष्ट्रकवि का व्यंग्यात्मक प्रहार था।

अपने अभिभाषण के क्रम में दिनकर जी बड़े रोचक तरीके से कला, व्यक्तित्व, उपयोगिता, टॉल्स्टॉय,

कवींद्र रवींद्र, इकबाल, गाँधी जी तथा मार्क्स की चर्चा की। धारा-प्रवाह और सारगर्भित भाषण में दिनकर की वाणी में समाया तेज उनके आकर्षक चेहरे पर दीप्त हो उठता था। उन्होंने कहा कि कला को व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है (आर्ट इज एक्सप्रेषन ऑफ पर्सनालिटी)। लेकिन व्यक्तित्व क्या है?

‘टॉल्स्टॉय और इकबाल कला में सत्य एवं शिव की स्थापना चाहते थे। टॉल्स्टॉय के अनुसार केवल आनंद देने वाली कला उस भोजन के समान है जो केवल चबाने में अच्छा लगता है। इकबाल कला में उपयोगिता खोजते थे। टॉल्स्टॉय और इकबाल कला के नैतिक पक्ष को महत्वपूर्ण मानते थे लेकिन कवींद्र रवींद्र कला को आनंद का पर्याय मानते थे। इकबाल का मानना था कि कला का दर्शन और विज्ञान की तरह जीवन में स्वास्थ्य एवं शक्ति की वृद्धि में निश्चित रूप से योगदान होना चाहिए। जिस कला से दुर्बलता का बोध होता है वह इकबाल के लिए सर्वथा त्याज्य था।

रवींद्रनाथ मानते थे कि उपयोगिता कला से भिन्न है। जब तक हम उपयोगिता की परिधि से बाहर नहीं निकलते हमारा व्यक्तित्व नहीं पनप सकता। उदाहरणस्वरूप उन्होंने लिखा है कि नारी की उपयोगिता माता, बहन, पत्नी आदि के तौर पर अत्यधिक है लेकिन इसे उसका व्यक्तित्व नहीं कहा जा सकता। इसका व्यक्तित्व तो चलने-फिरने की अदाओं, भंगिमा और नाना प्रकार के हाव-भाव हैं। चूँकि रवींद्र सत्य को प्राप्त कर चुके थे इसलिए उन्होंने निःसंकोच इस तरह का दृष्टान्त दिया। सैनिकों के व्यक्तित्व की अभिव्यंजना युद्ध-कौशल में कतई परिलक्षित नहीं होता है। सैनिकों का वर्दी पहन कर बाजे के साथ कवायद की चाल आदि उनके व्यक्तित्व को दर्शाता है। श्रेष्ठ साहित्य वह नहीं जिसका जीवन में प्रत्यक्ष उपयोग है। यह वह है जो उपयोगिता के घेरे को लाँघ कर उत्पन्न होता है। जब तक मनुष्य उपयोगिता के वश में है वह कला की सृष्टि नहीं कर सकता।

शुरू से ही रवींद्र और इकबाल मेरे हृदय को आंदोलित करता रहा है और उनके समान बनने की मुझमें उमंग थी। हालाँकि वे दो परस्पर विरोधी क्षितिज से बोलते थे। मैंने निःसंदेह इकबाल और रवींद्रनाथ टैगोर

से बहुत कुछ ग्रहण किया है।’

भाषण के अंत में उन्होंने अपने बारे में महत्वपूर्ण खुलासा किया- ‘जिस तरह जवानी भर मैं रवींद्र और इकबाल के बीच झटके खाते रहा, उसी तरह जीवन भर गाँधी और मार्क्स के बीच झूलता रहा। इसलिए उजले को लाल से गुणा करने पर जो रंग बनेगा, वही रंग मेरी कविता का है और शायद अपने देष्टा का भी भविष्य में ऐसा ही रंग होगा।’

कालांतर में 01.12.1973 को भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा ‘उर्वशी’ पर विज्ञान भवन में आयोजित पुरस्कार समर्पण में तथा ‘रष्टिमलोक’ (1974) पुस्तक की भूमिका में भी दिनकर जी ने उपर्युक्त आशय के गंभीर एवं दार्शनिक पक्ष को मर्मस्पर्शी ढंग से उजागर किया था। वस्तुतः उनकी कविता का दर्शन गाँधी और मार्क्स के सामंजस्य से सृजित है।

उनके गूढ़ वैचारिक भाषण सुनने के बाद मुझे दिनकर की पंक्ति- ‘सरस्वती की जवानी कविता है और उसका बुढ़ापा दर्शन है’ की यथार्थता का बोध हो रहा था। इसके बाद मेरी अभिरुचि दिनकर जी के गद्य में तीव्र रूप से जगी।

मेरे पिताजी ने अपने आलेख ‘आरसी: अमर चेतना का शिल्पी’ में कविवर आरसी प्रसाद सिंह का दिनांक 23.09.1972 को दिनकर जी से मुलाकात की विशेष चर्चा की है।

उन्हीं के शब्दों में- ‘बाद में मैंने आरसी जी से पूछा कि उस रात दिनकर जी से लंबे अंतराल के बाद मिलने पर क्या-क्या बातें हुईं तो आरसी जी बोले- ‘अरे, पूछिए मत दिनकर जी दो बजे रात तक बातें करते रहे। वे तो सोने का नाम ही नहीं लेते थे। जब मुझे अलसाते देखा तो उन्होंने नींद की गोलियाँ लीं और सो गए।’ इस बात को सुनकर अचंभा हुआ कि ‘राष्ट्रकवि को भी नींद का सहारा लेने के लिए नींद की गोलियाँ लेनी पड़ती है।’

उनकी वैचारिक गंभीरता, ओजस्वी वाणी और तेजस्वी मुद्रा मुझ पर अमिट छाप छोड़ गया है। उनकी उक्ति- ‘साहित्य में किसी वर्ण्य वस्तु के साथ कवि की निजी भावनाओं के सम्मिश्रण में ही सत्य और कल्पना का परस्पर आलिंगन होता है’ की सार्थकता का बोध हो रहा है।

दुर्भाग्यवश मेरी मुलाकात के लगभग डेढ़ साल बाद तिरुपति दर्शन के क्रम में मद्रास में दिनांक 24.04.1974 को दिनकर जी का देहावसान हो गया और मेरी पहली मुलाकात अंतिम मुलाकात में परिणत हो गई। यह मेरे जीवन की अविस्मरणीय घटना है। यह प्रभा-पुंज हमारे बीच नहीं रहा लेकिन युगों तक उनके साहित्यिक एवं सञ्चनात्मक कक्ष से हमारी नई पीढ़ी को

प्रेरणा और मार्गदर्शन मिलता रहेगा। महाकवि से दैव संयोग से मेरी छोटी लेकिन प्रभावोत्पादक मुलाकात एवं साहित्यिक चर्चाएँ मेरी स्मृतियों की मंजूषा में चिरसंचित रहेगा।

मुख्य मंत्री, बिहार के ऊर्जा सलाहकार
फ्लैट नं. 403, वासुदेव झारी अपार्टमेंट
वेद नगर, रूकनपुरा
बेली रोड के सामने बी.वी.कॉलेज
पटना-800014 (बिहार)

लेखकों/रचनाकारों से निवेदन

‘रेल रश्मि’ में प्रकाशनार्थ तकनीकी, गैर-तकनीकी, लेख, कहानी, कविता, गज़ल, संस्मरण, यात्रा-वृत्तान्त, योग, अध्यात्म आदि अनेकानेक विधाओं/विषयों पर स्तरीय रचनाएँ आमंत्रित की जाती हैं। रचनाओं पर उचित मानदेय देने की भी व्यवस्था है। कष्टया नोट करें कि रचनाएँ टाइप की हुई अथवा कंप्यूटर के माध्यम से स्वच्छ टंकित की हुई हो। रचना हार्ड कापी के साथ सी.डी./पेन ड्राइव के द्वारा भी दी जा सकती है। रचना कागज के एक ही ओर दोनों तरफ पर्याप्त हाशिया छोड़ कर लिखें और दो पंक्तियों के बीच पर्याप्त स्थान अवश्य छोड़ें। रचना स्पष्ट और सुपाठ्य हो। रचना को भेजने से पूर्व एक बार पढ़कर पाठ अवश्य शुद्ध कर लें और मूल प्रति ही भेजें। रचनाओं के साथ इस आश्रय का प्रमाण/घोषणा पत्र भी होना चाहिए कि यह लेख/रचना लेखक/रचनाकार की मौलिक कृति है और यह इससे पहले प्रकाशित नहीं हुई है। रचना के साथ पिन कोड संख्या व संपर्क नंबर अवश्य उद्धृत करें।

कई रचनाएँ एक साथ न भेजें। साथ ही रचना दो से तीन फुल स्कैप के आकार के पृष्ठों से अधिक न हो। यदि किसी कारणवश किसी रचना को पत्रिका में शामिल करना संभव न हुआ तो उसे लौटाया नहीं जाएगा।

रचनाएँ निम्न पते पर भी भेज सकते हैं-

संपादक
रेल रश्मि
केंद्रीय हिंदी अनुभाग
मुकाधि कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे
गोरखपुर-273012
ईमेल: seniorol9@gmail.com

◆ साहित्य ◆
...बेचत फिरै कपूर

बी.आर.विप्लवी

अपने समय

की नक्काली-वंचक परंपरा को बे-नकाब करते हुए कबीर ने जिन जुमलों का इस्तेमाल किया है वे आम-जन को शोषण के दलदल से बचे रहने के लिए बा-ख़बर करने वाले हैं। सदियों से चली आ रही वंचक परंपरा के नित्य बदलते नये पैतरे से चौकसी बरतने की अपील उनकी बानियों में जगह-जगह देखी जा सकती है। इस क्रम में वे संभावित छद्म रूपों की निष्ठानदेही करते चलते हैं और इससे आम-जन का परिचय भी करवाते हैं।

‘मन रे जागत रहिए भाई/ गाफ़िल होई बसत मति खोयै, चोर मुसै घर जाई’ का उद्घोष करते हुए कबीर केवल प्रज्ञामय नेत्रों को खोल कर हर संभावित ख़तरे से सावधान रहने की ही चेतावनी देते हैं। यहाँ ‘गाफ़िल’ शब्द द्वारा समाज को हर तरह के संश्रय, भ्रम, आडंबर और बाहर-भीतर के दोहरे चरित्र के झाँसे में न आने की ही व्यंजना की गई है। इतनी सघनता और साफ़गोई से सामाजिक वंचना को चिह्नित करना कबीर की उन चिंताओं में सम्मिलित है जिनमें श्रमजीवी एवं कामगार वर्ग अपने ही उत्पादन का उपभोग करने से वंचित कर दिया जाता है। ‘मैं कहता हूँ जागत रहिए, तू कहता है सोय रे’ ऐसी उक्तियों में भी शोषक द्वारा निरीह जन को यत्नपूर्वक सुलाए रखकर उन्हें लूटने/ लुटवाने के प्रति चौकस रहने का अनुस्मारक है। बाहरी तौर पर एक होते हुए भी यह सुलाए जाने का तर्क और उद्देश्य एक-दूसरे से बिल्कुल अलग हैं इसीलिए सोने वाला कदाचित् उद्देश्य से अनभिज्ञ है या अलग उद्देश्य की गफ़लत में रखा गया है। इन्हीं संदर्भों में भारतीय समाज के एक बड़े वर्ग के मेहनत की कमाई को लूटते रहने का उपक्रम ऐसा ऐतिहासिक सत्य है जिससे वंचित समाज ने अभी तक पर्याप्त सीख नहीं हासिल की है। यही कारण है कि आज भी कबीर की उक्ति कि ‘बिन देखे वहि देस की बात करत है क्रूर/ आपै खारी खात है बेचत फिरै कपूर’ से आम-जन को आगाह करने की ज़रूरत पड़ रही है ताकि वह बदले हुए समय में हर मिथक, आडंबर, चाल और भेष को अपने विवेक से पहचानें। ऐसे में वर्तमान के कई मिथकीय,

आयातित और धोखे भरे शब्दों के तथाकथित अर्थ, उद्देश्य और उसकी मंशा की पड़ताल और तदनुसार अपनी तैयारी की समीक्षा ज़रूरी है।

मिथकीय घटाटोप

सभ्य समाज और नगरीय समाज समानार्थक नहीं हैं। कदाचित् समानार्थी अर्थ-बोध की यह विकृति पूर्वाग्रहपूर्ण और सोद्देश्य होकर भ्रामक शब्द-जाल बुनती है। साफ़ तौर पर हर नगरीय व्यक्ति या समाज सभ्य भी हो यह ज़रूरी नहीं। यह भी ज़रूरी नहीं कि हर ग़ैर-नगरीय व्यक्ति और समाज असभ्य ही हो। ऐसे में सिविल सोसायटी और सिविलाइज्ड सोसायटी के बीच की विभाजक रेखा पहचानी जानी चाहिए। प्रायः शोषक-वंचक समाज भाषा और भावों के बीच ऐसी गड्ड-मड्ड पैदा करते हुए इसे समय और परिस्थिति के अनुसार अपने मनमाफ़िक परिभाषित करने के लिए इसे लचीला बनाये रखना चाहता है। वह कथनी और करनी में अंतर आने के पूर्व ही कथनी और कथानक को स्वेच्छाचारी ढंग से व्याख्यायित करता है तथा अपने कथन में बदलाव को तर्क-सम्मत करार देने में तनिक भी संकोच नहीं करता। इसप्रकार सभी तरह के नैतिक-अनैतिक, सत्य-असत्य, न्याय-अन्याय, शुभ-अशुभ, मंगल-अमंगल तथा करणीय-अकरणीय के मानदंड भी अलग-अलग रखता है- अपने लिए अलग तथा औरों के लिए अलग।

भारतीय संदर्भ में सिविल सोसायटी एक आयातित विचार और अभिधारणा है। इसे भारतीय परिप्रेक्ष्य में पुनर्परिभाषित किए बिना यह शब्द या अन्य कोई भी शब्द बहुसंख्यक आम-जन का हित साधनेवाला नहीं बन सकता। मसलन भारतीय समाज में श्रेष्ठ जाति एवं धन-वैभव ही कुलीनता का सर्वोपरि मापदंड है जिसमें शिक्षा, ज्ञान और मानवीय सरोकारों का या तो कोई स्थान नहीं है या इसे केवल कुलीन के पक्ष को मज़बूत करने के लिए ही कभी-कभी इस्तेमाल किया जाता है। इस प्रकार की कुल-श्रेष्ठता से पैदा हुई भारतीय सिविल सोसायटी, किसतरह के लोगों का हितसाधक बनेगी, इसे आसानी से समझा जा सकता है। प्रकारांतर से नगरीय समाज की ग़रीबी, अशिक्षा, अज्ञानता तथा कुलहीनता जैसे

कारक नगरीय मानदंडों के बावजूद ग्रामीण-कुलीनता पर भी भारी नहीं पड़ सकते। भारतीय समाज की यही मान्यता अब तक की विरासत रही है। दोनों ही परिवेष्टों में नगरीय कुलीनता और ऐश्वर्य ही फौरी तौर पर सभ्यता की कसौटी हैं। स्पष्टतः ऐसी ही तथाकथित सिविलाइज्ड सोसायटी भारतीय परिप्रेक्ष्य में सिविल सोसायटी का प्रतिनिधित्व एवं नेतृत्व करती है। ऐसी सिविल सोसायटी के ज़रिए लोकपाल या इसके समानांतर किसी भी नाम से कोई भी व्यवस्था अपनी भेद-भाव पूर्ण निर्मिति के कारण वर्तमान समाजवादी-संवैधानिक तंत्र के ऊपर सुशासन की गारंटी नहीं हो सकती। इसतरह के दावे और इन दावों के लिए भ्रामक जन-आंदोलन, स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों हेतु जमावड़ा और प्रोपगैंडा से अधिक कुछ भी नहीं है। ऐसे छद्म आंदोलन कुलीन भद्रजनों के लिए कूट-परिभाषित (Defined in codes) और कार्यान्वयन के गोपनीय एजेंडे हैं। आम-जन का इससे क्या लेना-देना हो सकता है। ऐसे प्रयास संवैधानिक व्यवस्थाओं को कमतर बताकर उसके समानांतर मनचाही व्यवस्थाएँ लाने के लिए एक मुहिम जैसे हैं। ऐसी मुहिम जीवन के हर क्षेत्र में चलायी जाती रही है तथा लोगों का ध्यान मुख्य मुद्दे से हटाने के लिए इस्तेमाल की जाती रही है। कतिपय स्वार्थी तथाकथित कुलीन वर्गों की बदनीयती ही वर्तमान समस्याओं को हल करने की बजाय स्वनिर्मित वायवीय एवं काल्पनिक सब्ज़बाग़ से लोगों का मन बहलाने और फुसलाने में सन्नद्ध रहती है। ऐसा करने की एक व्यवस्थित परंपरा क्रमशः संस्थागत होकर अधिसंख्य भारतीय जनता एवं भारतीयता की राष्ट्रीय भावना के विकास में दुर्गति का मूल कारण है।

ऐतिहासिक रूप से भारतीय समाज-व्यवस्था में प्रायोजित रूप से सुख-दुख, स्वर्ग-नरक, पुण्य-पाप, सत्य-असत्य, हिंसा-अहिंसा, दया-हत्या, अमीरी-गरीबी, विद्या-अविद्या और जीवन के अन्य सभी प्रतिमानों को किसी अदृश्य सत्ता की इच्छाशक्ति से संचालित होने का मिथक जनमानस के मनो-मस्तिष्क में गहराई से समाविष्ट किया गया है। निष्ठित रूप से ऐसे मिथक पर विष्वास या अविष्वास के मूल प्रश्न व्यक्ति के ज्ञान-स्तर एवं तर्क-शक्ति पर निर्भर करते हैं। ज्ञानार्जन को लेकर मिथकीय स्थापनाएँ भी सीमित लोगों तक शिक्षा की पहुँच का ही नियमन करती हैं। ऐसे मिथकों में विकल्प या चुनाव की गुंजाइश न के बराबर छोड़ी गई है फलतः इसकी जकड़न से मुक्ति के सारे रास्ते प्रायः बंद हैं। ऐसी स्थापनाओं को

जन-जन के मनो-मस्तिष्क में भरने हेतु और इसकी विष्वासनीयता बढ़ाने के लिए योजनाबद्ध ढंग से जीवन की प्रत्येक घटनाओं और आयोजनों के अवसर पर इनका पूजा-पाठ-प्रवचन, कथा-वाचन, प्रहसन, नाटकीय प्रस्तुतीकरण एवं मुहावरों-कहावतों के ज़रिए स्व-घोषित ईश्वरीय सत्ता के नुमाइंदे अफ़वाह-तंत्र का संचालन प्रायोजित करते हैं।

समय के साथ वैश्विक स्तर पर आई वैज्ञानिकता के कारण दृष्टिकोणों में लगातार परिवर्तन एक स्वाभाविक विकास-क्रम है। स्पष्टतः निहित स्वार्थपरक प्रभुता को बरकरार रखने के लिए अवैज्ञानिकता भरे मिथकों का महिमा-मंडन अभी भी प्रकारांतर से प्रचारित-प्रसारित होना भी लाज़मी है। शायद इसीलिए बदस्तूर जारी भी है। ऐसी अवैज्ञानिक सोच को कृत्रिम ईश्वरीय सत्ता के डर से ज़बरन स्वीकार कराने की बाध्यता पैदा कर दी जाती है। ऐसी बाध्यता थके-हारे सर्वहारा वर्ग के लिए आसानी से छोड़ते नहीं बनती। ईश्वरीय सत्ता को चुनौती देने वाली वैज्ञानिक सत्ता अज्ञान के अंधेरे को पूरी तरह मिटाने में आज भी सक्षम नहीं हो पा रही है। फलतः अफ़वाह-तंत्र का वर्चस्व बरकरार है। व्यक्ति के नफ़ा-नुकसान से जुड़ी ईश्वरीयता का प्रचार-प्रसार प्रायः अज्ञानी और अशक्तजनों में वैज्ञानिकता के सत्य की पैठ और स्वीकार्यता नहीं होने देता है।

विज्ञान बनाम आस्था का विज्ञान

मनुष्य एवं मनुष्यता के विकास के पुरातन अध्यायों को सावधानीपूर्वक जाँचने से यह स्पष्ट हो जाता है कि सीखने की प्रक्रिया ने उत्तरोत्तर ज्ञानार्जन और प्राकृतिक गुत्थियों को सुलझाने में मदद की है। आज भी कई तरह की प्राकृतिक घटनाओं को पूरी तार्किकता से न समझ पाने के कारण किसी ईश्वरीय सत्ता की कल्पना और उसमें विष्वास को प्रश्रय मिलना कोई आश्चर्यजनक नहीं है। पुरातात्विक अवशेषों से सिद्ध है कि मनुष्य ने अपने श्रम और हिकमत से अपने रहन-सहन और सुख-सुविधा में लगातार सुधार किया है। इसमें कदाचित किसी ईश्वर का कोई सहयोग नहीं लिया गया है। विष्णाल कोटे-परकोटे, नदियों के बाँध, सड़कें, जल परिवहन तथा अन्य प्राकृतिक संपदाओं का अनुकूलन एवं संपोषण अनुभवों और कला-कौशल पर आधारित उसकी अपनी खोज है। प्राकृतिक आपदाओं के बरअक्स संसाधनों की लघुता या अप्रचुरता ने उसे हतोत्साहित और विस्थापित करने का भी बार-बार प्रयत्न किया है।

कदाचित इन्हीं प्राकृतिक दुर्भिक्षों एवं आपदाओं ने किसी अदृश्य शक्ति के विष्वास को बल दिया होगा। ऐसे विष्वास को स्वाभाविक ज्ञान की पहुँच से बाहर के प्रकरणों और संस्कारों के रूप में सञ्चित कर मनुष्य के नित्य जीवन-क्रम से जोड़ कर ईश्वर और भाग्य के डर का मनोविज्ञान रचना कुछ अनायास तथा कुछ सायास किंतु बेहद कुटिल एवं विकास-विरोधी अतिक्रमणों का परिणाम है। ऐसी ही मान्यताओं ने विभिन्न कालक्रमों में ऐतिहासिक-भौगोलिक और सामाजिक विवक्षाताओं का फायदा उठाकर अपने नये-नये संस्करणों में मनुष्य के द्वारा मनुष्य के शोषण का हथियार गढ़ा है।

यद्यपि समय-समय पर ऐसी भ्रम-धारणाओं को चुनौती देने का काम भी होता रहा है किंतु अज्ञान और अशिक्षा ने बार-बार ग़रीबी, कुपोषण और अन्याय से संतप्त मनुष्य को उसी कुचक्र के सुपुर्द कर दिया है। बारह सौ ईसा पूर्व तक के ज्ञात एवं लिखित दस्तावेजों के द्वारा जिस श्रमण-परंपरा का ज्ञान मिलता है, वह श्रमशक्ति की महत्ता और श्रेष्ठता को रेखांकित करता है। यह श्रम-सत्ता अभावों पर विजय प्राप्त करती हुई मनुष्य के अवसादों के लिए उसे खुद का आत्मनिरीक्षण करने की शिक्षा देती है। भ्रामक ईश्वरीय और पुरोहितवादी सत्ता को यहीं से कड़ी चुनौती मिलती है। परिणाम स्वरूप अंधविष्वास और अंधभक्ति की सत्ताएँ कमजोर पड़ने लगती हैं। स्वभावतः स्वयं को नई ज़मीन पर स्थापित करने की अनिवार्यता या विवक्षाता के कारण ही अपने नये कूटनीतिक और अनैतिक प्रयत्नों से वैदिक सत्ताओं ने ऐसी परंपराओं का निर्माण और नियमन किया जिसमें श्रमिक एवं श्रम-सत्ता की निंदा-गर्हा एवं अवमानना से श्रम के उपार्जन का अपने पक्ष में दोहन करने का जीवन-आदर्श परिभाषित किया जा सके। कामचोरी और जन्म-आधारित कुलीनता के तथाकथित ईश्वरीय सम्मान और पूजनीय आख्यान का अवतरण यहीं से होता है। श्रमण परंपरा के छः सौ वर्षों की उठा-पटक के बावजूद भी उत्तर वैदिक ब्राह्मण-परंपरा को जड़ से मिटाना संभव नहीं हुआ। फलतः महावीर स्वामी एवं भगवान बुद्ध के रूप में श्रमण एवं वैज्ञानिक परंपरा के नये अध्येता एवं प्रवक्ता सामने आये। इस विचारधारा ने पौरोहित्यवाद की चूलें हिला दीं। फिर भी इस वायवीय किंतु परजीवी परंपरा ने कहीं न कहीं अपने बीज संरक्षित रखे। निष्ठित ही शिक्षा-साधन-विहीन और प्राकृतिक अपदाओं

के शिकार लोगों का ध्यान ईश्वरीय सत्ता में लगाये रखना अपेक्षाकृत आसान बना रहा होगा।

वैज्ञानिक एवं बौद्धिक विकास के क्रम में अपनी अवैज्ञानिक सोच को चुनौती मिलते देख यह अफ़वाह-तंत्र अपने अस्तित्व को बचाने हेतु बार-बार वैज्ञानिकता को नेस्तानाबूद करने के तमाम उपक्रम करता रहता है। वह बार-बार इस वैज्ञानिकता को इंजीनियर करके (Engineered) इसे पूर्व जन्मों के फल, ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध जन्मगत हिंसा और मनुष्य की मनुष्य पर श्रेष्ठता को प्राकृतिक और ज़रूरी सिद्ध करते हुए इस अंधे युग को समाप्त होने से भरसक रोकता है। राजाओं, महाराजाओं, क्षत्रपों और ओहदेदारों को भी इस अंध-विष्वास में सहयोगी बनाते हुए वह शोषण द्वारा राज्य-सत्ता को वैभवशाली बनाकर हुए उनका विष्वास जीतता है। फलतः स्वार्थपूर्ण और उद्देश्यपूर्ण अवैज्ञानिकता का घटाटोप अंधेरा सत्यपरक सोच के सूरज का गला घोटता रहता है। इसवी सन् के आठ सौ वर्षों तक समाज को कई विष्वासों और अंधविष्वासों के गड्ड-मड्ड में डाल कर अलग-अलग मत-मतांतर तथा उनके बीच प्रतिस्पर्द्धा से आगे बढ़कर, ईर्ष्या के बीज बोकर हर तरह से बीच-बचाव और न्यायिक मजिस्ट्रेट की भूमिका में आकर वह अपना उल्लू सीधा करता है। श्रोतव्य है कि इन्हीं खेमे-बंदियों ने एक कमजोर, विभाजित और राष्ट्रीय भावना से उदासीन समाज को पश्चिमी आक्रमणों के हवाले कर दिया था। मजे की बात यह कि इन आक्रमणों और लूट-पाट में भी एक वर्ग अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए किसी भी तरफ़ से अफ़वाह फैलाने या चुगलखोरी करने में बढ़कर भूमिका निभाता रहा है। ऐसे ही परजीवी समाज ने मौके की तलाश करते हुए भारतीय भू-भाग पर आक्रमणकारी सत्ताओं का विरोध तो नहीं किया बल्कि विरोधियों का साथ देते हुए षड्यंत्र में शामिल हो कर अपने ही भू-भाइयों का सत्यानाश कराने का काम करता गया। वह अपने हर कष्ट को ईश्वर की इच्छा कह कर उचित ठहराता रहा। सन् आठ सौ से सोलह सौ तक का इतिहास धर्मसत्ता के इसी दोगले चरित्र का गवाह है। इस्लामिक सत्ताओं के साथ मिलकर अपने सुखोपार्जन हेतु गठबंधन और अपनी अंध-चाल में फँसाये गये स्वदेशी भाइयों का विनिमय पौरोहित्य चिंतन का पर्यायवाची और चरित्र बनता गया। परिणामतः इस प्रकार का अंध-अनुकरण एवं परजीवी प्रलोभन का लेन-देन और अनुशीलन आचरण इस्लामिक सत्ता में भी धीरे-धीरे घुल-मिल गया। वहाँ के नवोदित पौरोहित्य ने आम आदमी के शोषण

के अपने अलग तरीके ईजाद किए। सत्ता के प्रभाव में धर्मातिरित श्रमजीवी आबादी एक कुचक्र से निकल कर दूसरे कुचक्र में फँसती रही है और यह बहुसंख्यक जनता बार-बार अपने दुःखों के त्राण हेतु इनपर विष्ठवास जताती-धोखा खाती हुई भी स्वयं को ही दोषी मानने की श्लास्त्रीय स्थापनाओं से आज भी उबर नहीं पाई है।

बारहवीं ईस्वी सन् और सोलहवीं ईस्वी सन् के बीच पीर-पैगंबर, सूफी-संत, मस्जिद-मज़ार, गंडा-ताबीज़, झाड़-फूँक और कई तरह के करिष्ठमों का बाज़ार गर्म रहा। इन आवाज़ों के हल्ले-गुल्ले में ज़्यादातर आवाज़ें या तो घुल-मिल कर समा गयीं या श्लांत करा दी गईं। कबीर, रैदास, पलटू, दादू, पीपा जी, नानक, बुल्लेशाह आदि समाजश्लास्त्रियों ने वैज्ञानिकता की अलख जगाये रखनी चाही किंतु मिथ्या आध्यात्मिक-आग्रहों ने ऐसे परिवर्तनों की गति बार-बार बाधित की। ऐसे तमाम उदाहरण हैं जहाँ इस तरह की अवैज्ञानिक, अताकिर्क और अकल्याणकारी विचारधारा को बार-बार चुनौती मिली। प्रतिक्रियावादी ताकतों ने इसतरह के समस्त प्रयासों और परिवर्तनों के विरुद्ध लगातार नई तरह की प्रतिकारक श्लांतियाँ फैलाने और यथास्थिति बनाए रखने का हरसंभव उपाय किया। इस संबंध में वर्तमान इक्कीसवीं सदी के वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधानों और जीवन में उनके उत्तरोत्तर बढ़ते प्रभाव के बावजूद भी समय-समय पर इन्हें दोयम दर्जे का ठहराने तथा अंधश्रद्धा एवं अकर्मण्यता को महिमामंडित करने वाले आचार-विचारों को प्रोन्नत करने की बेष्टार्मी इसका उदाहरण है। चंद्रमा और मंगल ग्रह के विजय अभियानों में सफलता का दावा करने वाला देश रातों-रात पत्थर की मूर्तियों को दूध पिलाने लगता है। यदि इस काम में केवल अनपढ़, अक्षम और मासूम ग्रामीण जनता ही लगी होती तो एक बात थी। किंतु यहाँ तो स्वयं को बुद्धिवादी, इंटिलेक्चुअल, न्यायविद्, पेशे से वैज्ञानिक, इंजीनियर, डॉक्टर और राजनीतिज्ञ भी इस महापर्व में श्लाामिल होकर इस घटना की अपने मुँह से तारीफ़ करते नहीं थकते हैं। हमारी इस जड़ता से आगे के प्रश्न भी स्वमेव खड़े हो जाते हैं। क्या इस तरह की श्लांतियाँ और अफ़वाहें फैलाने वाला कुलीन एवं भद्रजन उन भेड़ों की अगुवाई करता है जो अपने नायक और अगुआ के प्रति गहरा विष्ठवास रखती हैं? क्या इस तरह के प्रोपगैंडे से इन गैर-पुरोहित तथाकथित भद्र जनों का फायदा होने वाला है? क्या ऐसे

प्रदर्शनों से वे पुरोहितत्व के ज़्यादा नजदीक जाने के इच्छुक हैं? क्या ऐसे पुरोहितवादी संक्रमणों को फैला कर वे अपने को सुरक्षित महसूस करते हैं? या क्या ऐसे प्रदर्शनों और विज्ञापनों के ज़रिए पूजा-पाठ में आई मंदी को उछाल देने का यह एक प्रयास है? ऐसी दुकानों और विपणन-केंद्रों पर कौन लोग सौदा करके और अपना सर्वस्व लुटाकर भी धन्य महसूस करते हैं? कदाचित्त इन सबके पीछे अपना सबकुछ लुटाने के कपटपूर्ण आदर्श का महिमामंडन ही प्रेरक तत्व है। ऐसी हर चीज़ जिससे श्रमिक, खेतिहर-मज़दूर, कारीगर और सर्वहारा-वर्ग के हर साधन को प्रभु वर्ग के लिए न्यौछावर करवाती है (उसका महिमामंडन, उसकी तारीफ़ करते हुए अर्जक को याचक बना देने के लिए प्रतिबद्ध हर घटना को परंपरा बना देने की तैयारी के साथ उनका कार्यान्वयन कराती है। चाहें तो आठवीं सदी के बाद के श्रमण-परंपरा के पराभव और पुरोहित-परंपरा के उत्कर्ष की निशानदेही कर लें। इसतरह के छल-प्रपंच और सुनियोजित प्रचार-तंत्र को आसानी से समझा जा सकता है। दूरस्थ तीर्थ-स्थलों पर एक साथ तथाकथित दैवीय श्लाक्तियों का प्राकट्य और अहिंसक, सत्यवादी, करुणावादी परंपरा का दानवीकरण अतीत की हकीकत ही नहीं वर्तमान की भी सच्चाई है।

जन्नत का ख़ाब

ख़ाबों को आँखों की ज़रूरत नहीं होती। हाँ! आँखों देखी चीज़ों को पाने या उस तक पहुँचने की हसरत श्लाायद ज़्यादा बेचैन करने वाली होती है। झूठे ख़ाबों पर विष्ठवास तोड़ने वाले कबीर के दो टूक श्लाब्द आँखें खोलने वाले हैं। वे इस रूढ़ परंपरा को यदि चुनौती देते हैं तो उसके अस्तित्व को मिटा देने का प्रयत्न भी होता है। कबीर की उत्पत्ति को ही नाजायज़ और उनके विचारों को फूहड़ गालियाँ कहकर सामंती व्यवस्था उन्हें नज़रअंदाज करने की व्यवस्था करती चलती है। और तो और मनगढ़ंत किस्से कहानियों के ज़रिए कबीर को ब्राह्मण का श्लािष्य और विधवा ब्राह्मणी का पुत्र कह कर उनकी सामाजिक मर्यादा और उनकी परंपरा के लोगों के ज़मीर को खंडित करने का प्रयास किया जाता है। कबीर अपने समय की षड्यंत्रकारी विचारधाराओं का पर्दाफ़ाश करता है (वह लोकजीवन में मनुष्य के सुख-दुख संबंधी परंपरागत मान्यताओं को पुनर्पारिभाषित करता है। निष्ठिचत ही उसकी इन बातों

को खरी-खोटी कह कर नाजायज़ और नहीं सुनने लायक करार दिया जाता है। कबीर हर झूठी प्रवृत्ति का जवाब रू-ब-रू देते हैं। यह उनके सच और नैतिक सफ़ाई की आंतरिक ऊर्जा है। स्वर्ग-नरक की सुविधा और दुविधा पर उनका कटाक्ष है। 'बिन देखे वहि देस की बात करत है क्रूर/ आपै खारी खात है, बेचत फिरै कपूर' यह कपूर बेचने की परंपरा सदियों से चली आई है। जिसे केवल ग्राहकों के लिए ही बनाया गया है। कैसी अजीब बात है कि बेचने वाला उस वस्तु के रूप-गुण की तारीफ़ चिल्ला-चिल्लाकर करता है, औरों के लिए लाभकारी बताता है किंतु स्वयं उससे परहेज करता है। वंचक अपने सारे ज्ञान को परोपकारी मुद्रा में पेछा करता है। यह व्यक्ति के दोहरे चरित्र का सार्वजनीकरण है जहाँ एक बड़े उत्पादक वर्ग को उसके प्राप्य से वंचित कर उसे भविष्य के सुंदर सपनों के भरोसे मरने को छोड़ देने का ही उपक्रम है। इसे की पहचानने की अंतर्दृष्टि और बहिर्दृष्टि का संयोग कबीर के बयानों में है। वे ऐसे चरित्रों को यदि क्रूर कहकर संबोधित करते हैं तो उन्हें विक्षिप्त, पागल और संकुचित मानसिकता का घोषित करते हुए उनकी वाणी को छोटे खाने में महदूद कर दिया जाता है। इसके पीछे डर होता है कि ऐसी बानी के अर्थ और प्रयोग प्रभु-वर्ग के लिए असुविधाजनक हो सकते हैं। इसीलिए कबीर मान्य नहीं हैं, कबीर पूज्य नहीं हैं, कबीर सेव्य नहीं हैं, कबीर आदर्श नहीं हैं। कबीर का सवाल वंचक वर्ग को असुविधा में डालता है। यदि तुमने उस स्वर्ग या नरक को देखा नहीं, जाना नहीं, समझा नहीं, भोगा नहीं, तो वहाँ की बात और वहाँ का पता तुम्हें मालूम कैसे हुआ? खुद तो तुम इस दुनिया के सारे सुखों का उपभोग करना चाहते हो और एक बड़े वर्ग को अनजाने देष्टा, अनजानी परिस्थिति की काल्पनिक गुफा में धकेलना चाहते हो। ऐसा क्यों? ऐसा करते हुए वंचित वर्ग के तात्कालिक दुःखों से उसका ध्यान हटाकर ऐसे भविष्य की मोहक उम्मीदों पर टिकाकर फौरी संकट या विद्रोह की संभावना को नष्ट करने का अनूठा आयोजन है।

छल का आदर्श

ऐसे उदाहरणों से तथाकथित पवित्र वाङ्मय और ऐतिहासिक साहित्य भरा पड़ा है। राजा बलि के संपूर्ण राज्य को एक भिखारी (वाराह-मन) द्वारा दान में प्राप्त

किए जाने और इससे पैदा हुई राजा की दरिद्रता का महिमामंडन ऐसी ही अपेक्षा करता है। ऐसा आदर्श भी ऐसी ही डिमांड करता है कि कोई भी धन, राज्य या भोग्य वस्तु केवल पुरोहित वर्ग के लिए है। संपत्ति चाहे दान में मिल जाए, छलपूर्वक या बलपूर्वक ले ली जाए या दो राजाओं के बीच लड़ाई करवाकर ले जी जाए, जैसे भी हो पृथ्वी के सुख इस पृथ्वी के देवता के द्वारा भोगने योग्य ही हैं। इसी में उस वस्तु के मालिक का कल्याण भी निहित है। यह केवल दान करने की अपील ही नहीं बल्कि येन-केन-प्रकारेण अपना वर्चस्व एवं स्वामित्व कायम करने की धूर्त योजना है। ऐसे ही उदाहरणों में कदाचित् मिथकीय चरित्र राजा हरिश्चंद्र को स्वप्न में अपना संपूर्ण राज्य दान करने के बाद षमश्रान घाट की चौकीदारी करनी पड़ती है। इसके एवज़ में उन्हें देवलोक की मुफ्त हवाई यात्रा-सुख प्राप्त करने की कथा जोड़कर, उनके पारलौकिक सुख का मिथ्या किंतु लुभावना स्वप्न है। यह वही देवलोक है जहाँ कबीर के लिए भौतिक शरीर कफ़न के नीचे फूल छोड़कर उड़ (अंतर्ध्यान हो) जाता है। लाज़िम है ऐसे अज्ञात गुप्त स्थान पर, सभी महान दलित-शूद्र नायकों को भेज देने पर इस धरती का राज्य पृथ्वी के जन्मना देवता को निर्विरोध मिल सकेगा। इसीप्रकार के उदाहरणों के परिप्रेक्ष्य में मंदिरों, मठों, नदियों, पर्वतों, कुंभों, निकुंभों पर जुटने वाली भीड़ और मेले तमाश्यों को भी समझा जाना चाहिए। ऐसे अनुष्ठानों में वर्ष भर की मेहनत की कमाई को दान कर देना कितने बड़े पुण्य का काम है? देव-दर्शन की लालसा में जुड़ी भीड़ में पागल हाथी आने की अफ़वाह यूँ ही नहीं फैलती। श्रद्धालुओं के मरने पर उन्हें स्वर्ग का कंपनसेष्ठान जो मिलता है। किसी प्रकार के झगड़े, उलाहने, दावे, शिकावे और शिकायतें करने के सारे दरवाज़े बंद। ऐसी घटनाओं के बाद भी ऐसे आयोजनों में कोई कमी नहीं होती। जिस प्रयाग-कुंभ में महाराजा हर्ष अपने राज्य की सार्वजनिक संपत्ति को ज़रूरतमंद लोगों में बाँटने का काम करते थे, उसी स्थान पर ज़रूरतमंदों को लूटने की परंपरा परवान चढ़ती है। दान और लूट की परिभाषाएँ अपनी सुविधा के अनुसार गढ़ ली जाती हैं। जनसामान्य को भेड़ों के चरवाहे अपनी परिभाषाओं से संचालित करते हैं या तो फुसलाने वाले शब्दों के ज़रिए या दंडों के ज़रिए।

अब, ऐसी परंपराओं के अस्तित्व पर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नज़र डालते हैं। जीवन के विभिन्न कार्य-व्यापार में ऐसे भ्रामक प्रचार की पड़ताल करते हुए हम सबसे पहले राजनैतिक स्थिति एवं परिदृश्य का जायज़ा लेते हैं। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में जनता अपेक्षा करती है कि उसकी सुख-सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए उसके द्वारा चुने गये प्रतिनिधि अग्रणी भूमिका निभायेंगे। इन्हीं बातों का भरोसा देकर प्रतिनिधिगण चुनाव जीतने में सफलता भी प्राप्त करते हैं। हर चुनाव-क्षेत्र में स्थानीय कठिनाइयों के मद्देनज़र इनसे निज़ात पाने के लिए लंबे-चौड़े प्लान और परियोजनाओं के खाके तैयार किए जाते हैं, वह भी इनकी व्याहारिकता एवं कार्यान्वयन हेतु धन-उपलब्धता को जाँचे बिना। इसका आशवासन दिया जाना तथा उस पर यकीन कर लेना, इसीतरह की समस्याओं के हल से दूर हटाने की कोशिश का हिस्सा है। धार्मिक, राजनैतिक और जातीय वर्गों में बैठा भारतीय समाज एक दूसरे से लड़ने-लड़ाने और बदला लेने के लिए लगातार इस्तेमाल किया जाता रहा है। यहाँ साझी संस्कृति का कोई राष्ट्रीय एजेंडा उतना महत्वपूर्ण नहीं जितना उनके सामुदायिक एजेंडे हैं। ऐसे में जनता को भविष्य के अच्छे सपना दिखाकर तथा उनपर विश्वास दिलाने के लिए बाकायदा पेड़ प्रचारक-एजेंट्स की रणनीति अख़्तियार की जाती है। राजनैतिक सफलताओं को पाने के लिए युद्ध का डर, पड़ोसी देशों का डर, राष्ट्रीय अहम के अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक धार्मिक मुद्दे तथा युवाओं के सुखमय भविष्य की बातें आमतौर पर लुभावनी होती हैं। मदारी की लच्छेदार भाषा बार-बार भीड़ जुटा लेती है।

अफ़वाह का बाज़ार

निष्ठित ही किसी भी विचार, मान्यता, परंपरा और यहाँ तक की अफ़वाह को भी जन-जन तक फैलाने के लिए एक मज़बूत प्रचार-तंत्र की आवश्यकता होती है। रोज़ी-रोटी की चिंता में उलझा आम आदमी इस तिकड़म से प्रायः अनभिज्ञ रहता है। ख़बर देने और लेने वाले लोग (जिन्हें बातों की रोटी खाने का हुनर मालूम है) उनके खेत-खलिहान और दरवाज़े तक जाकर बार-बार उसे अपनी बातों के पक्ष में करने का प्रयास करते हैं। आवश्यकतानुसार पहली बार, दूसरी बार और बार-बार झूठ को सच मनवा लेने की परिणति तक। इसप्रकार के तंत्र के ज़रिए परिभाषाएँ, जीवन-मूल्य और मान्यताएँ बदल दी जाती हैं। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

में भी परिजीवी-वर्ग के पास केवल लिप सर्विस (Lip Service) ही थी जिससे वे अपने निहितार्थ मनमानी मान्यताएँ गढ़ते और स्थापित करते रहें। उदाहरण के लिए कविता, कहानी, नाटक, कथा, उपदेष्टा, पूजा-पारायण और मंचीय अभिव्यक्तियों के ज़रिए अनेक वायवीय चरित्रों का निर्माण किया गया जिनका कोई वास्तविक वजूद ही नहीं। ऐसे काल्पनिक मिथकों को इतिहास से जोड़ना या फिर इतिहासों का भ्रामक लेखन भी इसी योजना की एक कड़ी है। यही कारण है कि पढ़ा-लिखा होने के बावजूद भी एक तबका सोची-समझी रणनीति के तहत पुरातात्विक साक्ष्यों को दरकिनार करके ऐतिहासिक कथाओं को सच बनाने में जुटा रहता है। चाहे मंदिर-मस्जिद के झगड़े हों, मन्नार खाड़ी के समुद्री-मार्ग के चौड़ीकरण का मामला हो या सिंधु-सभ्यता के बरअक्स सरस्वती-सभ्यता का मनगढ़ंत किस्सा, लगातार ऐसे दुराग्रह पेष्टा किए जाते रहे हैं। आज भी कोई साधु-संन्यासी भू-गर्भीय भविष्यवाणी करता है तो सोने के भंडार के लिए खुदाई करते हुए लाखों रुपये इस अफ़वाह की भेंट चढ़ जाते हैं। ऐसा इसी देश में संभव है। इसप्रकार की अवैज्ञानिक मान्यताएँ बार-बार वैज्ञानिक प्रतिबद्धताओं पर कुठाराघात करती हैं। पुष्पक विमानों और अग्नि-वाणों से समुद्र सुखाने जैसी ग़ल्पें जन-मानस में विश्वसनीयता ही हद तक स्थापित कर दी जाती है। नई फ़स्लों की उपज के अभिनंदन में नई ऋतुओं के साथ नष्ट-गान की परिपाटी आज भी ग्रामीण, आंचलिक और जनजातीय परंपराओं में किसी न किसी रूप में लगभग हर राज्य में जीवित है। गुजरात से असम तक और कश्मीर से कन्याकुमारी तक ऐसी पारंपरिक मान्यताओं के तीज-त्योहार मुख़लिफ नामों से आसानी से पहचाने जा सकते हैं। इनमें प्रहलाद और होलिका-दहन के मिथक, धम्म-विजय को रावण-वध की विजयादशमी के रूप में तथा दीप-उत्सव को कल्पित कथानकों में निर्मित चरित्रों से जोड़ने का काम इसीतरह की अफ़वाहों से स्थापित करने का प्रयास होता रहा है जो एक लंबे समय में अधिकांश लोगों की मान्यता तक प्राप्त कर चुका है। आज उसके इतर कोई भी बात लोगों को आसानी से पचने वाली नहीं है।

आज इलेक्ट्रानिक मीडिया, प्रिंट मीडिया एवं अन्य प्रचार-तंत्र ऐसी ही सुविधा-भोगी परजीवी संस्कृति के हाथों अपनी पूर्व भूमिका में हैं बल्कि अधिक

भयावहता लिए हुए है। मुट्ठी-भर लोगों द्वारा प्रायोजित रूप से स्वास्थ्य, धन, बल और संपन्नता की खोज में हस्त-रेखाओं, टोने-टोटकों और ललाट पर लिखी भाग्य-रेखाओं के ज़रिए बाँचने, बाँटने और काटने हेतु तरह-तरह की दुकानों एवं व्यापारिक केंद्रों पर उपभोक्तावादी भौतिक सामग्री बनाकर बेचा जा रहा है। देवी-देवताओं के नये-नये अवतार और उनसे संबंधित पूजा-प्रतिष्ठान की नई परंपराएँ मीडिया द्वारा लोगों के मनो-मस्तिष्क में भरने का काम बदस्तूर जारी है। वैज्ञानिक सोच एवं वैज्ञानिकता के सारे मुहावरों को नीचा दिखाने की बेष्णर्म मुहिम के खिलाफ़ आवाज़ उठाना सांप्रदायिकता करार किया जाता है। तरह-तरह के तथाकथित योगियों-महर्षियों, संतों-महंतों, भविष्य-द्रष्टाओं और बाबाओं की आध्यात्मिक दुकानें न केवल मंदिरों, मठों, आश्रमों और सेवाश्रमों में खुली हैं बल्कि आधुनिक टी.वी. चैनलों पर भी धृष्टता से हावी हैं। देश की प्रतिभा और स्वतंत्र चिंतन का यह अधोमुखी प्रयास है। ऐसे विकास का गुण-गान और उस पर इतराने की हद तक महिमा-मंडन कहाँ रुकेगा (कहना कठिन है)। इस प्रचार-तंत्र का काम ही है वैज्ञानिकता की आँखों में धूल झाँककर प्राचीन संस्कृति के नाम पर अंध-विश्वासों को बढ़ाना एवं लोगों को ऐसा खरीददार बनाना जो किसी न किसी बहाने अपनी मेहनत की कमाई देकर सुख-शान्ति खरीदने के लिए आसानी से ऐसी सत्ताओं के शरणागत हो जाएँ। ये कितने मूर्ख लोग हैं जिन्हें भोला-भाला कहकर वहीं बने रहने के लिए प्रेरित किया जाता है। ऐसे मूर्खों की जमात बढ़ाने में लगा अफ़वाह-तंत्र 'कपूर बेचने' की एक आवाज़ पर अच्छें-अच्छों को सम्मोहित किए हुए है। वह कपूर की तमाम खासियतों के साथ उन्हें सुख एवं आनंद से सराबोर करने की गांठें देता है। जो खुद तो दर-दर फिर रहा है और लोगों को सुखी जीवन की भभूत बेच रहा है (उसकी समाज-सेवा, करुणा, दान और त्याग को जाँचने की ज़रूरत नहीं समझी जाती।) बातों में उलझाकर अपना अर्थ-तंत्र मज़बूत करना ही मीडिया-संचालक का एक मात्र उद्देश्य होता है। धर्म-अधर्म, सच एवं झूठ में विभेद करने हेतु शिक्षा-तंत्र को पंगु बनाकर वैज्ञानिक सोच की धार को कुंद करने के उद्देश्य से ही कई समानांतर शिक्षा व्यवस्थाएँ चल रही हैं। जिसे सभी धर्मों से ऊपर एवं सभी कर्तव्यों से श्रेष्ठ कहा जाता है (चाहे वह शिक्षा व्यवस्था हो, स्वास्थ्य हो, उत्पादन हो, विपणन हो, कृषि कार्य हो, या खनिज दोहन हो) ऐसा गुप्त-ज्ञान फैलाते हुए

इसतरह का परजीवी-तंत्र प्रत्येक सेक्टर में लगा हुआ है। यह तंत्र जो परिस्थिति, स्थान और व्यक्ति की सामाजिक हैसियत के मुताबिक, मुनासिब और माकूल हथकंडा अख़्तियार करता है। ईश्वर एवं व्यक्ति के बीच के ये बिचौलिये या दलाल कभी भी लोगों को सच के पास पहुँचने नहीं देना चाहते। ये किसान एवं मंडी के बीच, श्रम एवं उत्पाद के बीच बड़ी नफ़ासत के साथ जुड़कर घुल-मिल गये हैं। जहाँ भी, जैसे भी, जिसके साथ भी इसतरह की मुफ़्तखोरी एवं कामचोरी की गुंजाइश बनती है तथा अवसर प्राप्त होता है ये जीव सक्रिय हो उठते हैं। श्रमिक संगठनों के अगुआ बनकर, ग्रामीण संगठनों के मुखिया बनकर, धार्मिक संगठनों के सर्वेसर्वा बनकर, भूख, ग़रीबी, कुपोषण हेतु सब्सिडी प्राप्त करने के लिए नामी एवं बेनामी संस्थाओं के सदस्य बनकर, बेज़बानों के अधिवक्ता बनकर इन्होंने बदलते ज़माने में भी अपनी सुख-सुविधा सुनिश्चित कर रखी है।

वैश्वीकरण के दौर में ऐसी परजीवी संस्कृति के नायाब भारतीय संस्करण अब विश्व-बाज़ार में भी उपलब्ध होने लगे हैं। यह संस्कृति व्यक्ति स्तर से लेकर विश्व-स्तर तक व्याप्त है। आज विश्व-समाज के कर्ता-धर्ता तथाकथित सुविधा-संपन्न राष्ट्रों के मुखिया भी इस तंत्र के शिकार हैं। दुनिया की बड़ी अर्थव्यवस्थाएँ चंद लोगों के हाथों में आ गई हैं और ऐसे ही निजीकरण के प्रताप और महिमा को बढ़-चढ़ कर प्रचारित-प्रसारित किया जा रहा है। निजीकरण के सोपानों पर चढ़कर तानाशाही तक पहुँचने के रास्ते साफ़ किए जा रहे हैं। पिछले डेढ़ सौ वर्षों के सामाजीकरण में स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व के लिए लड़ी गई लड़ाई एवं तमाम कुर्बानियों से निकले निर्मल स्रोत को उल्टा मोड़ने का प्रयत्न जारी है। ऐसे तानाशाही माहौल का प्रचार-प्रसार करके मीडिया इसीप्रकार के सुगंधित सपनों को बेचने का काम कर रही है। दूसरों को सुगंध के सपनों में बेहोश करने का यह अमूल्य मंत्र है। कल की गफलत आज भी बरकरार है। शायद आने वाले कल को भी अपने गिरफ्त में लेने के लिए अपने नये पैतरे की योजना में लगी है।

अपर मंडल रेल प्रबंधक
पूर्व मध्य रेलवे
मुगलसराय-232101(उ.प्र.)
संपर्क: 09794848001

◆ लेख ◆
अंतर्मन की सुंदरता
वी.के.राय

इस संपूर्ण ब्रह्मांड के जीव सौंदर्य से किसी न किसी रूप में प्रभावित होते रहते हैं। यह सौंदर्य जीवों में सबसे अधिक मनुष्य को प्रभावित करता है। यह एक ऐसा भाव है जो इस प्रकार का आकर्षण पैदा करता है कि जीव इस आकर्षण से एक-दूसरे के करीब आना चाहता है एवं इस भाव में विलीन होना चाहता है। इस सौंदर्य के आकर्षण के दो रूप दिखते हैं। एक अंतर्मन की सुंदरता तथा दूसरी बाह्य सुंदरता। व्यक्ति की बाह्य सुंदरता अच्छी बात है परंतु यदि व्यक्ति अंतर्मन से सुंदर नहीं है तो बाह्य सौंदर्य अर्थहीन हो जाता है।

व्यक्ति के बाह्य एवं अंतर्मन के सौंदर्य के विषय में श्रीरामचरितमानस में पर्वतराज हिमाचल जी द्वारा अपनी पुत्री उमा (माता पार्वती जी) के विवाह के विषय में ऋषिवर नारद जी से पूछे गए प्रश्नों की तरफ आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ जिसमें नारद जी कहते हैं कि उमा (माता पार्वती जी) का विवाह जिससे होगा उसका वेष देखने में अमंगल है तथा बाह्य रूप भयावह है—

कह मुनि विहसि गूढ़ मधु बानी। सुता तुम्हारि सकल गुन खानी॥
सुंदर सहज सुसील सयानी। नाम उमा अंबिका भवानी॥
सब लच्छन संपन्न कुमारी। होइहि संतत पियहि पिआरी॥
सदा अचल एहि कर अहिवाता। एहि तैं जसु पैहहिं पितु माता॥
होइहि पूज्य सकल जग माहीं। एहि सेवत कछु दुर्लभ माहीं॥
एहि कर नाम सुमिरि संसारा। त्रिय चढ़िहिं पतिव्रत असिधारा॥
सैल सुलच्छन सुता तुम्हारी। सुनहु जे अब अवगुन दुइ चारी॥
अगुन अमान मातु पितु हीना। उदासीन सब संसय छीना॥

जोगी जटिल अकाम मन नगन अमंगल वेष।
अस स्वामी एहि कहैं मिलिहि परी हस्त असि रेख॥

-बालकांड-67

उपरोक्त प्रसंग में श्रीनारद जी कहते हैं कि जिससे माता पार्वती जी का विवाह होगा वह बाह्य रूप में सुंदर वेषधारी नहीं है परंतु इस बाह्य रूप से अमंगल वेषधारी के अनुसार देखा जाए तो यदि यह विवाह भगवान शंकर जी के साथ हो जाए तो यह असुंदर एवं अमंगल वेष भी सुंदर एवं मंगलमय हो जाएगा। इसलिए क्योंकि शंकर

जी बाह्य रूप में अमंगल वेष में रहते हैं परंतु उनका अंतर्मन अति सुंदर एवं मंगलमय है। परम पूज्य श्री गोस्वामी जी ने बालकांड में लिखा है—

प्रभु समरथ सर्वग्य सिव सकल कला गुन धाम।

जोग ग्यान बैराग्य निधि प्रनत कलपतरु नाम॥-107

बाह्य रूप से सुंदर नहीं होने पर भी जीव यदि अंतर्मन से सुंदर है एवं परोपकारी तथा कल्याणमय कार्यों एवं सत्कर्म में लगा हुआ है तो उस जीव के सत्कर्मों का सर्वश्रेष्ठ फल प्राप्त होता है। इस संबंध में गोस्वामी जी द्वारा श्रीरामचरितमानस में माता सीता जी के हरण के संबंध में वर्णन किया गया है कि जब रावण माता सीता जी का हरण कर विमान पर बैठकर लंका की तरफ ले जाता है तो उस समय माता सीता जी का विलाप सुनकर श्री जटायु जी महाराज ने तुरंत दौड़कर रावण को ललकारते हैं तथा कहते हैं कि हे रावण! माता सीता जी को तुरंत छोड़ दो अन्यथा भयानक युद्ध होगा, परंतु रावण माता सीता जी को नहीं छोड़ता है तो जटायु जी रावण से युद्ध प्रारंभ कर देते हैं एवं इस युद्ध में घायल होकर असमर्थ हो जाते हैं। परम पूज्य गोस्वामी जी इस प्रसंग का वर्णन श्रीरामचरितमानस में इसप्रकार करते हैं—

सीता कै बिलाप सुनि भारी।

भए चराचर जीव दुखारी॥

गीधराज सुनि आरत बानी।

रघुकुलतिलक नारि पहिचानी॥

सुनत गीध क्रोधातुर धावा।

कह सुनु रावन मोर सिखावा॥

तजि जानकिहि कुसल गह्व जाहू।

नाहिं त अस होइहि बहुबाहू॥

धरि कच बिरथ कीन्ह महि गिरा।

सीतहि राखि गीध पुनि फिरा॥

चोचन्ह मारि बिदारेसि देही।

दंड एक भइ मुरुछा तेही॥

काटेसि पंख परा खग धरनी।

सुमिरि राम करि अदभुत करनी॥

हे विद्वतजन! आप स्वयं भी जानते हैं कि गीध

राज श्री जटायु जी जीवों में सबसे अधम जीव गीध थे तथा वाह्य रूप से अत्यंत कुरूप थे, स्वभाव से वह सड़े मांस का भक्षण करते थे। ऐसे योनि में उत्पन्न होने पर भी अंतर्मन से इतने सुंदर थे कि माता सीता जी की रक्षा में अपने प्राण गँवाए। उनके इस परोपकार, प्रभुसेवा एवं सत्कर्मों का श्रेष्ठ फल प्राप्त हुआ एवं उन्हें भगवान श्रीराम का गोद प्राप्त हुआ तथा उनका स्नेह मिला एवं श्रीराम जी की कक्षा से गीधराज श्री जटायु जी को परम पद प्राप्त हुआ। परम पूज्य श्री गोस्वामी जी श्रीरामचरित मानस में इसका बहुत सुंदर वर्णन करते हुए लिखते हैं—
पूरनकाम राम सुख रासी। मनुजचरित कर अज अबिनासी॥
आगें परा गीधपति देखा। सुमिरत राम चरन जिन्ह रेखा॥

कर सरोज सिर परसेउ कष्ठासिंधु रघुबीर।

निरखि राम छबि धाम मुख बिगत भई सब पीर॥

अरण्यकांड-30

सो मम लोचन गोचर आगें। राखौं देह नाथ केहि खाँगें॥
जल भरि नयन कहहिं रघुआई। तात कर्म निज तैं गति पाई॥
परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहूँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥
तनु तजि तात जाहु मम धामा। देउँ काह तुम्ह पूरनकामा॥

अरण्यकांड

इसीप्रकार श्री गोस्वामी जी ने वेष्टा धारण के विषय में कहा है कि साधु का वेष्टा कुवेष्टा होता है तथा वाह्य रूप से सुंदर नहीं होता है परंतु अंतर्मन से साधु होने के कारण सभी लोग उनका सम्मान करते हैं। जैसे संसार में श्री जामवंत जी महाराज एवं श्री हनुमान जी महाराज का सम्मान होता है। श्रीरामचरितमानस के बालकांड

में गोस्वामी जी द्वारा वर्णन किया गया है—

किएहुँ कुबेषु साधु सनमानू। जिमि जग जामवंत हनुमानू॥
हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहुँ बेद बिदित सब काहू॥

इसीप्रकार से सुंदरकांड में परम पूज्य श्री गोस्वामी जी श्री हनुमान जी एवं श्री विभीषण जी के संवाद का वर्णन करते समय श्री हनुमान जी द्वारा कहे वचनों का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबहीं बिधि हीना॥
प्रात लेह जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा॥

अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।

कीन्ही कष्ठा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर॥-7

श्री हनुमान जी ने अपने शरीर को अधम कहा है, फिर भी सत्कर्म, उत्तम एवं कठोर सेवा-भाव से तथा अंतर्मन की सुंदरता से ही श्री हनुमान जी महाराज इस कलिकाल में प्रत्यक्ष देवरूप में पूजे जाते हैं।

इसप्रकार जो भी जीव या मनुष्य चाहे वह स्त्री हो या पुरुष यदि वाह्य रूप से सुंदर नहीं है फिर भी अंतर्मन से सुंदर होने पर उसे सर्वश्रेष्ठ उत्तम फल की प्राप्ति होती है। अतः प्रत्येक मनुष्य को वाह्य रूप से सुंदर होने पर भी अंतर्मन से सुंदर रहकर उत्तम फल की प्राप्ति करनी चाहिए।

उप मुख्य इंजीनियर/निर्माण/पुल

पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

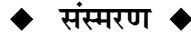
संपर्क: 9794844275

ब्रह्मा स्वयंभूषचतुराननो वा
रुद्रास्त्रिनेत्रस्त्रिपुरांतको वा।
इंद्रो महेन्द्रः सुरनायको वा
स्थातु न शक्ता युधिराघवस्य॥

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणे

सुंदरकांड 51/44

अर्थात् चार मुखों वाले स्वयंभू ब्रह्मा, तीन मुख वाले त्रिपुरनाष्टक रुद्र अथवा देवताओं के स्वामी महान् ऐष्टवर्यशाली इंद्र भी समरांगण में श्री रघुनाथ के सामने नहीं ठहर सकते।



संस्मरण

साहित्य-सूत्र के वात्स्यायन: खुष्टावंत सिंह

डॉ. राजेश्वर हजेल

बहुआयामी

व्यक्तित्व, कौतूहलमय कक्षित्व एवं रोचक टिप्पणियों से जनमानस को सोचने पर विवश कर देने वाले खुष्टावंत सिंह अपनी रचनात्मकता के कारण आज भी हमारे बीच जीवन्त हैं। उनका शरीर भले ही पंचतत्व में विलीन हो गया है; लेकिन वे किसी न किसी रूप में हमारे लिए प्रेरणास्रोत हैं। यद्यपि उनका लेखन विवादों का विषय रहा है तथापि उनके लेखन में देश के निवासियों की मूलभूत समस्याओं का समावेश होने के साथ-साथ उनके समाधान का प्रयास भी दृष्टिगोचर होता है। अपनी जीवन में सेक्स, धर्म और ऐसे ही विषयों पर की गई बेबाक टिप्पणियों के कारण वे सदैव आलोचना के केंद्र में बने रहे। इतना सब होने पर भी वे अत्यंत विनम्र और अकिंचन दिखाई देते थे। समय-समय पर देश में उठने वाली महत्वपूर्ण समस्याओं एवं उनसे त्रस्त जनमानस की दृष्टि एवं दिष्टि को समझने का मनोविज्ञान उनके वक्तव्यों में उजागर होता था। यद्यपि पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी और उनके परिवार से उनकी घनिष्ठता चर्चा का विषय रही है तथापि उन्होंने उनसे किसी भी प्रकार का राजनैतिक लाभ नहीं उठाया। वे सदैव तटस्थ रह कर अपने संबंधों में निःस्वार्थ और निरपेक्ष रहे हैं।

खुष्टावंत सिंह का जन्म 02 फरवरी 1915 को पंजाब के हदाली (अब पाकिस्तान) में हुआ था। इनके पिता का नाम सोभा सिंह था। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें सर की उपाधि प्रदान की थी। सर सोभा सिंह जाने-माने ठेकेदार थे और उन्हें आधी दिल्ली का मालिक कहा जाता था। खुष्टावंत सिंह की शिक्षा माडर्न स्कूल, दिल्ली, गवर्मेन्ट कालेज, लाहौर, सेंट स्टीफन कालेज, दिल्ली, किंग्स कालेज व इंटरटैपल, लंदन में हुई। उन्होंने लंदन से ही कानून की डिग्री ली। उन्होंने प्रोफेसर, अधिवक्ता, अधिकारी, पत्रकार, संपादक, लेखक, उपन्यासकार, कथाकार, स्तंभकार, राजनैतिक विश्लेषक, टिप्पणीकार, अनुवादक, राजनयिक एवं संसद सदस्य के रूप में अपने जीवन को विविध आयामों के साथ जीया और प्रत्येक क्षेत्र में अपना अविस्मरणीय योगदान दिया।

समाज में कुछ व्यक्तित्व ऐसे भी होते हैं जो अपने कक्षित्व और यश के कारण कभी भी मरते नहीं। ऐसे भी

जीवनधर्मा व्यक्तित्व के धनी थे। खुष्टावंत सिंह जो अपनी श्रुताधिक कक्षियों के माध्यम से आज भी जीवन्तता के साथ हमारे मध्य अपनी उपस्थिति का एहसास कराते हैं। उनके समग्र जीवन में उनका प्रमुख कार्य पत्रकारिता होने के बावजूद भी वे अच्छे मित्र और प्रभावी वक्ता थे। उन्होंने जिस सामाजिक समस्या को उठाया उसका मनोवैज्ञानिक ढंग से समीचीन समाधान भी प्रस्तुत किया है। वे अपने व्यक्तित्व के अनुरूप ही अपने लेखन में भी सिद्धहस्त रहे हैं।

प्रमुख अंग्रेजी समाचार-पत्र 'हिंदुस्तान टाइम्स' में प्रकाशित होने वाला उनका बहुचर्चित नियमित लोकप्रिय स्तंभ 'विद मैलिस टुवर्ड्स एंड ऑल' था। इस स्तंभ में उन्होंने जहाँ एक ओर सत्ताधीशों के चकाचौंध भरे जीवन के विविध पहलुओं पर चर्चा की वहीं दूसरी ओर उनकी खामियों और आलोचनात्मक विषयों को बेबाक ढंग से उठाया। इसके साथ ही इस स्तंभ में उन्होंने अपनी लौह-लेखनी से समाज के चित्रों को भी उकेरा जिनको लोग प्रायः नजरअंदाज करते हैं। उनका यह स्तंभ कभी-कभी विवाद का विषय बन जाने के बावजूद भारत में सबसे लंबे समय तक चलने वाले और सर्वाधिक लोकप्रिय स्तंभ था। यह स्तंभ पचास वर्षों तक लगातार प्रकाशित होता रहा। इस स्तंभ में बड़ी से बड़ी और छोटी से छोटी घटनाओं तक का उल्लेख होता था और उन घटनाओं पर उनकी सामयिक चर्चा होती थी। इस स्तंभ में मारियो मिरांडा का बनाया हुआ एक कार्टून भी प्रकाशित होता था। इस कार्टून में खुष्टावंत सिंह को एक बल्ब के अंदर बैठे हुए दिखाया जाता था।

गंभीर विषयों वाले उन स्तंभों के अंत में सामान्य पाठकों को गंभीरता के माहौल से बाहर निकालने के लिए प्रायः संता-बंता नामक दो काल्पनिक पात्रों के बीच चुटीले संवादों वाला रोचक चुटकुला होता था। हास्य की दुनिया में संता-बंता की इस जोड़ी ने तहलका मचा दिया है। संता-बंता के इन रोचक चुटकुलों पर कई पुस्तकें बाजार में आ गई हैं। खुष्टावंत सिंह ने संता-बंता को हास्य-जगत में ऐसे चरित्रों के रूप में स्थापित कर दिया है जो अपनी लोकप्रियता के कारण अमर हो गए हैं तथा उनके देहावसान के उपरांत भी लोगों का

मनोरंजन कर रहे हैं। प्रमुख हिंदी समाचार-पत्र 'दैनिक जागरण' में यही स्तंभ 'ना काहू से दोस्ती ना काहू से बैर' शीर्षक से भी साप्ताहिक अंतराल पर प्रकाशित होता था। हिंदी में प्रकाशित होने के कारण इस स्तंभ की लोकप्रियता इतनी ज्यादा हो गई थी कि बहुत से पाठक 'दैनिक जागरण' खरीद कर अथवा मांग कर सबसे पहले इस स्तंभ को पढ़ते थे।

इन स्तंभों में जनजीवन से संबंधित कुछ ऐसे तथ्यों का भी उल्लेख होता था जिनसे प्रायः गुरेज किया जाता रहा है। सही बात तो यह है कि उनके ये स्तंभ लोगों से लेकर आम आदमी तक की किसी न किसी समस्याओं को उठाते हुए दृष्टिगोचर होते थे। विशेषता यह है कि उनके ये स्तंभ आज भी समीचीन हैं। किसी विषय को उठाते समय स्वयं को तटस्थ रखना संयम का परिचायक है और इस दृष्टि से उसमें उन्होंने वास्तव में सफलता पाई है।

एक बिंदस बुजुर्ग के रूप में खुशवंत सिंह अपनी समता नहीं रखते। स्कॉच की बोतल और सौंदर्यमयी महिलाओं के सान्निध्य के तथाकथित रसिया माने जाने वाले खुशवंत सिंह अपनी पत्नी के प्रति पूर्णतः सहृदय थे। अपनी पत्नी श्रीमती कँवल मलिक के संबंध में उनका आत्मकथ्य है कि 'मुझे इस बात का भरोसा था कि मेरी पत्नी मेरे बाद वर्षों जीवित रहेगी, अब मुझे ऐसा यकीन नहीं होता। मुझे अंदर ही अंदर महसूस होता है कि अगर वह मुझसे पहले चली गई तो मैं अपनी लेखनी को एक किनारे रखकर लेखन से विदा ले लूँगा।' अपनी आत्मकथा में पत्नी के प्रति कहे गए उनके यह शब्द इस बात का प्रमाण है कि खुशवंत सिंह अपनी पत्नी के बिना स्वयं को नितांत एकाकी, सारहीन और सक्रियता से रहित समझते थे। खुशवंत सिंह की अपनी पत्नी के प्रति तल्लीनता और तन्मयता उन्हें एक आदर्श पति प्रमाणित करती है। उनकी जीवन-शैली और लेखन-क्रम परस्पर समानांतर चलते दिखाई देते हैं। उन्होंने सदैव यथार्थ को ही महत्व दिया। उनके जीवन में शुष्क कल्पनाशीलता का कोई स्थान नहीं है। वे जिस भाव-भूमि के बारे में चिंतन करते रहे हैं उसे अपनी लेखनी के माध्यम से लेखों में उजागर करते रहे हैं। उन्होंने जीवनभर समस्याओं से संघर्ष किया और उनका यथार्थ समाधान प्रस्तुत किया। इसप्रकार अपने संपूर्ण जीवन में उन्होंने जो कुछ भोगा, जो कुछ सहा और जो अनुभव किया उसका सार रूप अपने लेखों में व्यक्त

करने का सफल प्रयास किया। खुशवंत सिंह कहते हैं- 'मेरे लिए यह सबसे बड़ा पुरस्कार है कि मैं कभी न कभी अपने पाठकों के चेहरे पर मुस्कान लाने में सफल रहा।' उनके चाहने वाले भी बहुत बड़ी संख्या में हैं तो उनके विरोधी भी; लेकिन वे अपने विरोधियों के प्रति किसी भी प्रकार की दुर्भावना नहीं रखते। वास्तव में वह अपने आलोचकों को भी गंभीरता से लेते रहे हैं।

अपनी स्पष्टवादिता और उन्मुक्त लेखन के लिए प्रसिद्ध रहे खुशवंत सिंह ने सन् 2000 में ब्रिटिश ब्रॉडकास्टिंग कारपोरेशन (बी.बी.सी.) के लिए एक विशेष साक्षात्कार में खुशवंत सिंह से पूछा था कि 'आप अपने जीवन के 85-86 वसंत देख चुके हैं, क्या आपको लगता है कि जिंदगी में आपकी ज्यादातर ख्वाहिशें पूरी हो गई हैं या अभी कुछ बाकी रह गई हैं?' इस प्रश्न पर खुशवंत सिंह ने कहा था कि- 'तमन्ना तो बहुत रहती है दिल में, वो कहाँ खत्म होती है, जिस्म से तो बूढ़ा हूँ; लेकिन आँख तो अब भी बदमाश है, दिल अब भी जवान है, दिल में ख्वाहिशें तो रहती हैं, आखिरी दम तक रहेंगी, पूरी नहीं कर पाऊँगा ये भी मुझे मालूम है।' अपनी बेबाकी और बिंदसपन पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा था कि- 'मेरे अंदर किसी चीज को छुपाने की हिम्मत नहीं है, शराब पीता हूँ तो खुल्लम-खुल्ला पीता हूँ, नास्तिक हूँ छिपाया नहीं कभी, मैं कहता हूँ कि मेरा दीन-ईमान, धर्म-बरम कुछ नहीं है। मैं सुबह चार बजे उठकर काम करना शुरू कर देता हूँ। चूँकि मेरा पूजा-पाठ में यकीन नहीं है तो मैं उसमें वक्त जाया नहीं करता हूँ।' उन्होंने कहा था कि- 'शाम को उनके पास कई खुबसूरत लड़कियाँ आती थीं; लेकिन 20-25 मिनट से ज्यादा नहीं ठहरती थीं क्योंकि मैं उनसे कह देता था- 'लेट मी गेट बैक टू माई बुक्स।' यह थी खुशवंत सिंह की स्पष्टवादिता।

दृढ़ आत्मविश्वास के धनी खुशवंत सिंह ने 95 वर्ष की आयु में अपनी प्रसिद्ध अंग्रेजी उपन्यास 'द सनसेट क्लब' की रचना की। इस उपन्यास का हिंदी अनुवाद 'सनसेट क्लब' नाम से वरिष्ठ साहित्यकार महेंद्र कुलश्रेष्ठ ने किया है। इस उपन्यास के संबंध में उनका कहना था कि- 'मैं यह उपन्यास लिखना नहीं चाहता था। 95 वर्ष का हो रहा था और पता नहीं था कि इसे पूरा कर सकूँगा या नहीं; लेकिन कुछ करने को नहीं था, इसलिए परेशानी होने लगी।' 'आउटलुक' पत्रिका की शीला रेड्डी ने सुझाव दिया कि मैं अपने

उन पुराने मष्ठ मित्रों के संबंध में लिखूँ, जिनकी सदैव चर्चा करता रहा। विचार दिमाग में जमा और मैंने यह लिखना शुरु किया। इसमें मैंने तथ्यों में कल्पना की मिलावट की है।' इसप्रकार दिवंगत मित्रों की स्मृतियों को छाब्दों में गूँथने की सलाह पर पुरानी यादों में कल्पना के रंग भरकर अस्तित्व में आया 'द सनसेट क्लब'। 'द सनसेट क्लब' के तीन सदस्य हैं- पं. प्रीतम शर्मा, नवाब बरकतुल्ला बेग देहलवी और सरदार बूटा सिंह। ये तीन उम्रदराज दोस्त हर शाम दिल्ली के लोदी गार्डन में सैर के लिए आते हैं। बाग में लगी एक बेंच उनका अड्डा है जहाँ वे रोज कुछ देर गपशप करके अपनी जीवन संध्या में रंग भरने की कोशिश करते हैं। खुशवंत सिंह के अनुसार- पाठकों को लगेगा कि जो मैंने लिखा है, वह कुरुचिपूर्ण है- भद्र समाज उसे स्वीकार नहीं करता। कोई बात नहीं। मैं कभी लीपापोती या दिखावे की अच्छाई के लिए मशहूर नहीं रहा। अगर आपको इस किताब में कुछ अच्छा न लगे, उसे न पढ़ें।

खुशवंत सिंह ने जब 98 वर्ष की अवस्था पूर्ण की तब उन्होंने कहा था- 'अब समय आ गया है कि वह अपने बूटों को टाँकर एकबार पीछे मुड़कर देखें और अंतिम यात्रा के लिए तैयार हो जाएँ; लेकिन जिंदगी यह सिलसिला खत्म करने की इजाजत ही नहीं देती।' उन्होंने पारंपरिक पद्धति की पत्रकारिता को छोड़कर नये प्रकार की पत्रकारिता प्रारंभ की। वे जितने लोकप्रिय भारत में थे उतने ही लोकप्रिय पाकिस्तान में भी थे। इसके साथ ही साथ उन्हें प्रकृति प्रेमी के रूप में भी जाना जाता था। उनकी पुस्तक 'नेचर वाच' इसका स्पष्ट प्रमाण है। सुप्रसिद्ध इतिहासकार रामचंद्र गुहा के अनुसार- 'खुशवंत सिंह को व्हिस्की से प्यार के लिए जाना जाता था, लेकिन वे प्रकृति को उससे भी ज्यादा प्यार करते थे। वे जाने-माने पक्षी विशेषज्ञ एवं बर्ड मैन के नाम से प्रख्यात सलीम अली तथा विख्यात भूगर्भशास्त्री महाराजापुरम सीथारमन कृष्णन को अपना नायक मानते थे।'

यदि आप यह जानना चाहते हैं कि सबसे पहले कौन आया- लव या लस्ट, या बहस करना चाहते हैं अविवाहित जीवन, सती-साध्वी पर या फिर अरेंज मैरेज पर तो जो कुछ खुशवंत सिंह ने बेजोड़ ढंग से उद्घाटित किया है उससे आपको गुजरना होगा। उन्होंने अपने विष्टलेषण में अष्टलीलता, पोर्नोग्राफी और इरोटिका के बीच की विभाजक-रेखा को व्याख्यायित किया है। वह

भारतीय महिलाओं की तुलना पूरे विश्व की महिलाओं से करते हुए एक अलग अंदाज में नजर आते हैं। अद्भुत रूप से पठनीय पुस्तक 'खुशवंत सिंह ऑन वुमैन, सेक्स, लव एंड लस्ट' में प्यार, कामेच्छा और जीवन में यथार्थ का अद्भुत सम्मिश्रण है। यह भारतीय और विदेशी मिथकों, किंवदंतियों, मुहावरों तथा कहावतों से भरपूर है। इसके गई हैं, जो इसे प्रामाणिक और तथ्यपूर्ण बनाते हैं। लेखन का यह बोल्ट और रोचक तरीका सिर्फ खुशवंत सिंह के लेखन में मिलता है।

दृष्टांतों से खुशवंत सिंह की छवि स्वतः ऐसी बन गई थी कि उनकी आगामी पुस्तक में कुछ न कुछ नया और विवादास्पद अवश्य होगा। उनके इस अंदाज से पाठक आज तक कभी भी निराशा नहीं हुए। उनकी पुस्तक 'भगवान बिकाऊ नहीं' का पहला अध्याय है- 'एक नये धर्म की आवश्यकता- बिना भगवान के'। इस पुस्तक में वह भगवान की आवश्यकता पर प्रश्न उठाते हैं। वह व्याख्या करते हैं कि धर्म किस तरह प्रमाणित करेगा कि वह लाभदायक से अधिक हानिकारक भी हो सकता है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत भविष्यवाणी करने वाले ज्योतिषी व 'तथाकथित भगवान के अवतार' हैं। इसके बावजूद वह धर्म को बेदखल नहीं करते बल्कि अपने विष्टद लेखन में श्रीमद्भगवद्गीता, कुरआन शरीफ और गुरु ग्रंथ साहिब जैसे धर्मग्रंथों से चुन-चुन कर शाश्वत मूल्य की पंक्तियों को उद्धृत करते हैं।

खुशवंत सिंह की चर्चित पुस्तकों में एक 'औरतें' एक ऐसे सहज, सामान्य, उच्च शिक्षित एवं स्वयं व्यापार करके धनी बने व्यक्ति की कहानी है जो अपनी झगड़ालू पत्नी से तलाक हो जाने के बाद हर रात अपनी नैसर्गिक कामेच्छा की पूर्ति के लिए एक के बाद एक महिला का उपभोग करते हुए अनेक महिलाओं से संबंध स्थापित करता है। उसका मानना है कि कामेच्छा ही सच्चे प्यार की मूल आवश्यकता है और इस उद्देश्य से वह समाचार-पत्रों में विज्ञापन देकर अपने लिए संगिनियों की तलाश करता है। खुशवंत सिंह के अनुसार- 'औरतें उनके दिवा-स्वप्न हैं, उनकी कल्पनाएँ हैं, जिन्हें उन्होंने कलमबद्ध कर दिया है।' अद्भुत रूप से पठनीय इस पुस्तक में प्यार, कामेच्छा और जीवन के छिपाने योग्य यथार्थ का अभूतपूर्व चित्रण है।

खुशवंत सिंह का चर्चित उपन्यास 'समुद्र की लहरों में' अंग्रेजी में प्रकाशित हुआ और प्रकाशित होते

ही चर्चा का विषय बन गया। इसका कारण यह है कि यह उपन्यास प्रच्छन्न रूप में देश के प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के जीवन पर आधारित है। इसमें उन्होंने ऐसी अनेक बातें लिखी हैं जो इससे पहले कभी प्रकाश में नहीं आईं। इस पुस्तक में नेहरू जी के बचपन से लेकर लंदन में किशोर जीवन तक तथा भारत आने पर और बाद में प्रधानमंत्री रहने के कार्यकाल के कई अनछुए प्रसंगों का चित्रण किया गया है। यद्यपि ऐसे उपन्यास लिखना अत्यंत साहस का कार्य है तथापि उन्होंने यह कार्य पूरी निर्भीकता के साथ किया।

खुशवंत सिंह की प्रसिद्ध पुस्तक 'द व्यू ऑफ इंडिया' अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। बाद में प्रसिद्ध साहित्यकार डा. भगवतीश्वर मिश्र ने 'मेरा भारत' नाम से इसका हिंदी में अनुवाद किया। भारत को जानने के लिए खुशवंत सिंह की यह पुस्तक प्रामाणिक है। इस पुस्तक में उन्होंने भारत का इतिहास, संस्कृति, जन-जीवन, राजनीति आदि विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा-परखा है और इतिहासकार की दृष्टि से भारत के विस्तृत इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि डाली है। इसमें देश और देशवासियों की प्राचीन काल से वर्तमान समय तक की दास्तान प्रस्तुत की गई है। पाँच हजार वर्षों में इस महाद्वीप में जो उथल-पुथल हुई, उसने सदियों का सफर तय करते हुए किस तरह आज के भारत को ढाला, इसका बहुत व्यापक और सजीव वर्णन किया गया है।

खुशवंत सिंह ने अपने उपन्यास 'वुमैन एंड मेन इन माई लाइफ' में अपने जीवन में आने वाली बारह महिलाओं व पंद्रह पुरुषों के विषय में लिखा है जिनसे उनका जुड़ाव रहा। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में हजारों महिलाएँ एवं पुरुष आते हैं; लेकिन प्रगाढ़ संबंध केवल कुछ गिने-चुने लोगों से ही बन पाते हैं और शेष पीछे छूट जाते हैं। पारिवारिक संबंधों के अतिरिक्त जिन लोगों से संबंध बनते हैं वे अच्छे तो लगते हैं परंतु उनका कार्यकाल छोटा होता है। इस पुस्तक में उन्होंने देवयानी चौबल, सादिया देहलवी, इंद्राणी आइकथ ज्याल्तसेन, गयरुनिसा हफीज, अनीस जंग, धर्म कुमार, निर्मला मथ्यन, कामना प्रसाद, प्रेमा सुब्रमण्यम, अमृता शेरगिल, रीता देवी वर्मा, चेतन आनंद, रमेश चंदर, बलवंत गागी, आई. एस. जौहर, गोपाल दास खोसला, प्रेम किरपाल, प्रताप लाल, ए.जी.नूरानी, रजनी

पटेल, मंजूर कादिर, भरत राम, कृष्ण शंगलू, चरनजीत सिंह, एन. इकबाल सिंह, सतेंद्र सिंह जैसे नामचीन हस्तियों के संबंध में लिखा है।

खुशवंत सिंह आधुनिक काल के भारतीय लेखकों में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। कारण चाहे कोई भी हो उनका नाम सफलता का पर्याय बन चुका है। एक के बाद एक बेस्ट सेलर किताबें लिखने के बाद वह सबसे ज्यादा बिकने वाले भारतीय लेखकों में एक बने रहे। वे भारत के सर्वाधिक पढ़े जाने वाले लेखकों और पत्रकारों में से एक रहे और बहुधा अपने अनिष्टपूर्ण और विवादास्पद विचारों के लिए समान रूप से चर्चित, प्रशंसित और आलोचित रहे। उनके प्रबल आलोचक भी इससे सहमत होंगे कि वे सर्वाधिक स्पष्टणीय रूप से पठनीय रहे हैं। उनके द्वारा लिखी गई कई पुस्तकें बहुत प्रसिद्ध और चर्चित हुईं। उन्हें अपने पहले ही उपन्यास 'ट्रेन टू पाकिस्तान' (1956) से साहित्यिक ख्याति मिली। बाद में साहित्यकार उषा महाजन ने 'पाकिस्तान मेल' नाम से इसका हिंदी में अनुवाद किया। 'ट्रेन टू पाकिस्तान' उपन्यास इतना ज्यादा लोकप्रिय हुआ कि उस पर फिल्म तक बन गई। इस उपन्यास के लिए उन्हें ग्रोव प्रेस इंडिया फिक्शन प्राइज भी मिला। 'द मार्क ऑफ विष्णु एंड अदर स्टोरीज' (1950), 'द व्यायस ऑफ गॉड एंड अदर स्टोरीज' (1957), 'आई थ्रैल नॉट हियर द नाइटिंगल' (1959), 'ए हिस्ट्री ऑफ सिख्स' (1963), 'ए ब्राइड फार द साहिब एंड अदर स्टोरीज' (1967), 'ब्लैक जैस्मिन' (1971), 'गुड पीपुल बैड पीपुल' (1977), 'वी इंडियन्स' (1982), 'देहली' (1989), 'सेक्स, स्काँच एंड स्कालरशिप: सलेक्टेड राइटिंग' (1992), 'नॉट ए नाइस मैन टू नो' (1993), 'वुमैन एंड मेन इन माई लाइफ' (1995), 'द कंपनी ऑफ वुमैन' (1999), 'टुथ लव एंड ए लिटिल मैलिस' (2002), 'द सनसेट क्लब' (2010), 'मेरा भारत' (2012), 'खुशवंतनामा: द लेसंस ऑफ माई लाइफ' (2013), 'रंजीत सिंह: द महाराजा ऑफ पंजाब', 'माई ब्लिडिंग पंजाब', 'नेचर वाच', 'इंदिरा गाँधी रिटर्न्स', 'ट्रेजडी ऑफ पंजाब', 'औरतें', 'समुद्र की लहरों में', 'खुशवंत सिंह आन वुमैन, सेक्स, लव एंड लस्ट', 'भगवान बिकाऊ नहीं' सहित अनेक विषयों पर उनकी 100 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। उनकी आत्मकथा 'टुथ

लव एंड ए लिटिल मैलिस' का हिंदी अनुवाद 'सच, प्यार और थोड़ी सी शरारत' नाम से प्रकाशित हुआ। उनकी यह पुस्तक अपने रोचक प्रसंगों के कारण बहुत चर्चित हुई थी।

खुशवंत सिंह ने अपने कैरियर का प्रारंभ लाहौर लॉ कालेज में हिंदू लॉ के प्रोफेसर से किया। इसके बाद लाहौर में वकालत प्रारंभ की। सन 1947 में आई.एफ. एस. अधिकारी के रूप में भारत के विदेश मंत्रालय में अनेक महत्वपूर्ण पदों पर कार्य किया तथा इंग्लैंड में भारत के राजनयिक रहे। वे तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के प्रेस अटैची भी रहे। टोरंटो व कनाडा में भारत सरकार के सूचना अधिकारी रहे। युनाइटेड किंगडम में भारत के उच्चायोग में तथा आयरलैंड के दूतावास में प्रेस अटैची व जनसंपर्क अधिकारी रहे। सन 1951 में सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत आकाशवाणी (ऑल इंडिया रेडियो) में अधिकारी रहे। सन 1951 से 1953 तक सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार के प्रकाशन विभाग की पत्रिका 'योजना' के संस्थापक-संपादक रहे। सन् 1969 से 1980 तक बंबई (मुंबई) से प्रकाशित होने वाली अंग्रेजी साप्ताहिक 'इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया' के संपादक रहे। सन् 1980 से 1983 तक दैनिक अंग्रेजी समाचार पत्र 'हिंदुस्तान टाइम्स' के संपादक रहे। इसके बाद में वे 'द नेशनल हेराल्ड' व 'न्यू डेलही' के संपादक रहे। 'सूर्या' पत्रिका के सलाहकार रहे। इसके साथ ही साथ वे समाचार-पत्रों में स्तंभ भी लिखते रहे। वे यूरोप में यूनेस्को के मास कम्यूनिकेशन डिवीजन में सहायक प्रमुख रहे। इसके साथ ही वे विष्व-स्तरीय प्रमुख प्रकाशन संस्थान 'पेंगुइन वाइकिंग' के सलाहकार रहे।

सन् 1974 में राष्ट्रपति वी.वी.गिरि ने उन्हें साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए पद्म भूषण सम्मान प्रदान कर सम्मानित किया। सन् 1980 में राष्ट्रपति नीलम संजीव रेड्डी ने उन्हें राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया। सन् 1984 में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी द्वारा अमृतसर (पंजाब) के स्वर्ण मंदिर में भारतीय सेना को 'आपरेशन ब्लू स्टार' की अनुमति दिए जाने के विरोध में उन्होंने पद्म भूषण सम्मान भारत सरकार को वापस कर दिया। सन् 1996 में भारत सरकार से रेल मंत्री रामविलास पासवान ने उन्हें उत्तर रेलवे की क्षेत्रीय रेल उपयोगकर्ता परामर्शदात्री समिति

(जेड.आर.यू.सी.सी.)का सदस्य मनोनीत किया। सन् 2007 में राष्ट्रपति ए.पी.जे.अब्दुल कलाम ने उन्हें साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए पद्म विभूषण सम्मान प्रदान कर सम्मानित किया। सन् 2010 में उन्हें भारत सरकार से स्वायत्तशासी संस्थान 'साहित्य अकादमी' का महत्तर सदस्य मनोनीत कर गौरव प्रदान किया गया। गुरुनानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर (पंजाब) ने उनकी रचनाधर्मिता का सम्मान करते हुए साहित्यिक सेवाओं के लिए उन्हें डी.लिट. की उपाधि से सम्मानित किया। देश के अनेक विश्वविद्यालयों में उनके व्यक्तित्व एवं कक्षित्व पर शोध कार्य हो चुके हैं। 20 मार्च 2014 को 99 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया।

इसप्रकार खुशवंत सिंह का संपूर्ण जीवन मानवीय समस्याओं का लेखा-जोखा है। इसमें आदर्श को यथार्थ से जोड़ने का सफल प्रयास किया गया है। उनका संपूर्ण व्यक्तित्व भले ही सत्ता की चकाचौंध में बीता हो अथवा सुरा और सुंदरी के शौकीन एक बिंदस बुजुर्ग के रूप में प्रस्तुत हो तो भी उनमें मानवीय संवेदनाओं का अभाव कहीं भी नहीं है। यदि उनके संपूर्ण कक्षित्व का सिंहावलोकन किया जाए तो उसमें कुछ ऐसे तथ्य उभर कर सामने आते हैं जिनसे मानवीय संवेदनाओं को बल मिलता है और देश के चिंतन को नई दिशा प्राप्त होती है। इन्हीं सबके साथ वे आज भी हमें नवचेतना और जीवंतता की शिक्षा देते दृष्टिगोचर होते हैं। उनको भारत के बौद्धिक जगत में प्रतिष्ठित एवं स्थापित स्तंभ के रूप में मान्यता दी जाती है। वे राजनैतिक पूर्वाग्रह से दूर तथा किसी भी प्रकार के दुराग्रह से दूर आत्मचेता विचारक थे। विभिन्न विधाओं के माध्यम से उनका जो चिंतन युवाओं को मिलता था, वह निश्चित रूप से उद्वेलित करने वाला होता था। उन्होंने अपनी पहचान को सब प्रकार के प्रलोभनों से दूर रखते हुए अक्षुण्ण बनाये रखा। उनके अवसान से हमारे बौद्धिक जगत में जो रिक्तता उत्पन्न हुई है उसकी उसी रूप में भरपायी संभव नहीं है।

सदस्य, जे.आर.यू.सी.सी.

पूर्वोत्तर रेलवे

4/105, नवाब न्यामत खाँ पश्चिम

फर्रुखाबाद-209625 (उ.प्र.)

संपर्क: 09415146194

◆ परिसंवाद ◆
साहित्यकार और प्रतिबद्धता
कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव

साहित्यिक क्षेत्र में अप्रतिम योगदान देने वाली विचारोत्तेजक साप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' के लिए आयोजित इस विशिष्ट परिसंवाद में कविता, कथा-उपन्यास समेत नाट्य-जगत, समीक्षा एवं व्यंग्य विधा से जुड़े पाँच प्रतिनिधि साहित्यकारों के महत्वपूर्ण विचार आमंत्रित किए गए थे। 'धर्मयुग' पत्रिका अकस्मात् बंद हो गयी; तब पांडुलिपि भी अनुपलब्ध हो गयी थी। दैवयोग से पिछले दिनों पांडुलिपि पुनः प्राप्त हुई जिसे साहित्यानुरागियों की सेवा में अविकल प्रस्तुत किया जा रहा है। यह भी एक विचित्र संयोग है कि जिस तरह से 'धर्मयुग' पत्रिका अब नहीं प्रकाशित होती; उसी तरह ये पाँचों ही साहित्यिक मनीषी अब हमारे बीच सशरीर उपस्थित नहीं हैं। उनके विचार क्रमवार प्रस्तुत हैं—
प्रतिबद्धता-प्रेम, श्रान्ति, मानव-मूल्यों के प्रति- भवानी प्रसाद मिश्र

प्रतिबद्धता को स्पष्ट करने के लिए यदि मैं कहूँ कि अनेक महत्वपूर्ण कार्यों एवं जीवन की व्यस्तताओं के बीच/ बावजूद मैंने आपके लिए समय निकाला और यह आलेख भेज दे रहा हूँ; तो यह भी प्रतिबद्धता का एक उदाहरण है— अन्योक्ति नहीं होगी। ऐसी प्रतिबद्धता क्यों? एक तो इसलिए कि आपको ही नहीं; पढ़नेवाले सभी लोगों को अच्छा लगे— दिल को न तोड़िए कि खुदा का मुकाम है— अर्थात् कुछ कर्म इसलिए या इसतरह भी किए जाते हैं कि विषम परिस्थितियों में भी प्रेम/ जीवन/ साहित्य— जिसको भी आप महत्व देते हों— किसी तरह बना रहे। टूट जाए कोई बात नहीं; पर बँधा रहे तो और भी अच्छा। यही है हमारी प्रतिबद्धता।

साहित्य से भी और मसिजीवी हूँ; अतः इसे और भी स्पष्ट करना होगा कि साहित्य में हमारी प्रतिबद्धता क्या है? इसके सही मायने क्या हैं? यदि यह प्रतिबद्धता हमारी है तो किसके प्रति? क्या विशिष्ट सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक अथवा विशिष्ट वर्ग अथवा व्यापक मानवीय मूल्यों के प्रति? अथवा इनमें से किसी के प्रति भी नहीं— केवल अपनी अंदरूनी ही प्रतिबद्धता है— रचना अथवा रचना-प्रक्रिया के प्रति?

मेरे विचार से साहित्य तो मनुष्य को सुख देने का एक सहज और विशिष्ट माध्यम है। जब हम किसी को दुःखी करते हैं तब हम निश्चित ही भीतर ही भीतर स्वयं भी दुःखी होते हैं। यह बात और है कि व्यावसायिकता और व्यावहारिकता के तहत हम अपनी इस अनुभूति को मारने अथवा दबाते चले जाने में पारंगत हो जाते हैं। ऐसी दृष्टि में कवि और साहित्यकार को सर्वत्र प्रसन्नता एवं सुख-संतोष के भाव प्रसारित करने के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहिए।

अब जब तक लेखक-या व्यापकता के लिए कह लें, तो कोई भी खुद ही प्रसन्नचित न हो, तब वह दूसरे को भला कैसे प्रसन्न कर सकता है? वह तो प्रसन्न हो सकता है मात्र चीजों को देखकर। जिसको देखना आ जाता है उसको सही मायनों में सोचना भी आ जाता है। सोचने के बाद सही तरीके से स्वयं को अभिव्यक्त कर ले जाए, तो वह कहलाएगा रचनाकार। उसकी जो दृष्टि होगी, वह उसकी रचनाओं में बार-बार झलकेगी किसी मूल्य अथवा जीवन-पद्धति के प्रति, वह होगी उसकी प्रतिबद्धता।

उदाहरण के लिए समझ लें, कोई फूल है कहीं। अब यह तो मानेंगे आप भी कि 'फूल हो जाना' अथवा 'पुष्पित हो जाना', 'खिल जाना' आसान है; किंतु उसके मूल को यदि सही मिट्टी अथवा खाद समय रहते मिल जाए तो उसका खिलना सार्थक हो जाए और सफल भी। यहाँ तो दुनिया में जो कुछ भी है, उसका अस्तित्व ही बनाए रखना मुश्किल हो जाता है। प्रतिकूल प्रभाव उसको प्रायः बाधित करते रहते हैं। ऐसे में काँटेदार झाड़ को रास्ते से काटकर गिरा देना चाहिए— कुछ ऐसी प्रतिबद्धता है और होनी चाहिए।

अब तक एक प्रचलित मुहावरे के अनुसार, जो काटते हैं; तलवारों से खेलते हैं; देर-सवेर उन्हें भी तलवार की राह उतर कर कटना होता है। ऐसे कई उदाहरण देख-विदेष्ट के इतिहास में भी मिल जाएँगे। उनके शस्त्र भी ऐसे होते हैं जो उलटकर वार कर दिया करते हैं। तब ऐसे में हमारी प्रतिबद्धता प्रेम के प्रति होनी चाहिए। श्रान्ति और मानव-मूल्यों के प्रचार-प्रसार के प्रति भी।

यदि कोई अपने से प्रेम करता है तो दूसरों से तो और भी ज्यादा करे, यह अपेक्षित है; किंतु ऐसा प्रायः होता नहीं है। कहा है न- 'रंज लीडर को बहुत है, मगर आराम के साथ।' एक लीडर आपको बहुत दूर ले जाना चाहता है; किंतु जिसतरह वह ले जाएगा, उससे आपको आराम या सुख नहीं होगा क्योंकि उसके सुख की परिभाषा आपसे-हमसे भिन्न है। सच तो यह है कि सबका सुख अलग-अलग है। एक का दुःख सच्चा है तो दूसरे को वही झूठा भी लग सकता है।

ऐसे में एक साहित्यकार किसको सुख मानें? असल में एक नीड़, एक विश्वास अथवा घर चाहिए साहित्यिक को- जान तो सबको मिलती है, निष्ठा सबको नहीं। यह निष्ठा ही सबके लिए सबके मन में पैदा होना जरूरी है। प्रकारांतर से कहूँ तो- यही वह क्षण है कि जब मरना मुझे था- ऐसा किसी के प्रति संवेदन हो जाए, यह जरूरी है अर्थात् आपका चलना-फिरना, हरतरह का व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि दूसरे को दुःख न होने पाए उससे।

यह प्रतिबद्धता केवल साहित्यकार की ही नहीं, सबकी है कि वह यदि स्वयं भी सुख चाहता है तो पहले सब का सुख चाहे। चाहे वह कवि, समीक्षक, कथाकार, नाटककार या कैसा भी कृषिकार क्यों न हो! कविता या साहित्य क्या है? बस एक निवेदन मात्र है जिसे स्वीकार करें तो ठीक; न करें तो... तो? बस, फिर यह एक महा-लाचार-सी चीज है। यानी शब्दों के माध्यम का यह जगत, स्वयं में एक लाचार-सा, किंतु सजग पाठक, श्रोता या दर्शक वर्ग के लिए सशक्त व प्रीतिकर माध्यम है। यही इसकी शक्ति है और लाचारी भी कि उसे पता तो हो कि उसके सही पाठक, श्रोता अथवा दर्शक कहाँ हैं?

प्रतिबद्धता तो शार्टकट है-डा. लक्ष्मी नारायण लाल

प्रतिबद्धता- यह शब्द सन् 1956 में पहली बार इलाहाबाद में 'परिमल' की किसी विचार गोष्ठी में किसी से सुना था; किंतु स्पष्ट है कि यह शब्द तब से धीरे-धीरे 'फैलाया' ही गया है। निष्ठचय ही इस 'प्रयोजन' के पीछे एक कुचक्र अथवा षड्यंत्र का आभास-सा मिलता है। तब सी.पी.आई. से सी.पी.एम. बन रहा था, जबकि आजादी मिलते ही यह मुल्क जिस चेतना को साथ लेकर चला, वह अपेक्षाकृत महात्मा गाँधी से प्रभाव

ले रही थी। ऐसी दृष्टा में पश्चिम के विकसित राष्ट्रों के मन में यह चिंता व्याप्त हुई कि यदि स्वतंत्र भारत ने अपने-आप को प्राचीन लोक-संस्कृति और भारत की मनीषा के साथ जोड़ लिया, तब तो उनके लिए जुल्म ही हो जाएगा।

समझ लें कि पश्चिमी देशों में तो साहित्य पूरी तरह से एक 'नॉलेज इंडस्ट्री' के रूप में बदल चुका था- एक संपूर्ण उद्योग। उन्हीं के शब्द ग्रहण करने की परंपरा भारत के कुछ लोगों ने ग्रहण कर ली- महज एक शार्टकट जैसी; किंतु यह यहाँ की मनीषा के विरुद्ध था। हमारे यहाँ की संस्कृति में कोई चीज 'बद्ध' नहीं होती। हमारे यहाँ तो विकास है। 'कमल' जिस विकास का प्रतीक है। विकसित, पुलकित, पल्लवित होकर सर्वत्र सौंदर्य बिखरने के लिए और बाद में उसी 'इदम्' में मिलकर समाप्त हो जाने के लिए। हमारे यहाँ की विडंबना रही है जो बिना इस राजनीतिक कुचक्र को जाने-समझे इस शब्द 'प्रतिबद्धता' को हमारे साहित्यकार ने ग्रहण भी कर लिया।

अब प्रश्न उठता है कि हमारे यहाँ प्रतिबद्धता नहीं, तब भला क्या है? हमारे यहाँ है 'संकल्प'। जप, तप एवं दान में हमारे यहाँ तभी संकल्प किया जाता है। इसमें एक ही मंत्र कहा जाता है- 'न मम'। अब यह मेरा नहीं है अर्थात् अब यह अन्य सबका है। यह संकल्प कहाँ से आता है? उत्तर है इसका- 'स्वत्व को पा करके'। यह स्वत्व कहाँ है? हमारे मुल्क को उसकी वैचारिक जमीन पर पुनः रोपित करने का काम किया था महात्मा गाँधी ने। गाँधी जी के काम को उनके दो उत्तराधिकारियों- डा. राम मनोहर लोहिया और जयप्रकाश नारायण ने आगे बढ़ाया। उनकी लड़ाई राजनीतिक से कहीं ज्यादा सांस्कृतिक स्तर पर थी।

हमारे यहाँ एक शब्द है- 'उच्छिन्न होना'। यह क्या है? यह है अतीत में जाना। हमारा अतीत कैसा भी रहा हो- हमें वर्तमान में रहना, जीना और देखना होगा, वही होगी हमारी चैतन्य कर्मठता। हमेशा अपने मन के जगत में रहने वाला वर्तमान में रह ही नहीं सकता। अब जिज्ञासा हो सकती है- संकल्प क्यों? इसलिए कि जब तक हम संकल्पित नहीं होंगे- रचना का कर्म संभव नहीं होगा। संकल्प माने रचना। वर्तमान में रह कर रचना अथवा सत्य से जुड़ना। यही शाश्वत है- वर्तमान में रहो,

वर्तमान में रचो। वर्तमान में रहनेवाले को भविष्य के आलोक के लिए जलना होगा। इसलिए हमारे यहाँ शिव की कल्पना है जिसका काम ही है- गरल पीना, जलना। क्यों? ताकि यह जलना अन्य को आनंदित करे, खुद आपकी कुंठा को काटे। अज्ञान-अंधकारादि को दूर करे।

व्यक्ति तो अहंकार में बँधा होता है। उसे 'अहम्' से एक 'इदम्' बना देना ही साहित्य का प्रमुख कार्य अथवा उद्देश्य है। आप देखें कि इसीलिए हमारे यहाँ नाटकों में 'दर्शक' या 'व्यक्ति' नहीं है, 'सामाजिक' है। इसीतरह हमारे साहित्य का काम है- 'व्यक्ति' को 'सामाजिक' बनाना। यह संकल्प लेकर कि अब यह रचा हुआ मेरा नहीं रहा- 'इदम् न मम'।

यह मेरा नाटक है, मेरी कविता अथवा कृति है- यह तो आधुनिक रचनाकार या साहित्यकार की परिणति है; जबकि किसी भी रचनाकार का सहज धर्म है- आदमी को 'स्थूल' से हटाकर 'सूक्ष्मतम' से जोड़ना। कुछ लोग शब्दों की लाचारी की बात आज कह बैठते हैं- क्यों? क्योंकि शब्द 'अक्षर' होने के बावजूद स्वयं में अत्यंत ही सूक्ष्म है। इनका विस्फोट करना ही किसी का रचनाकार होना है अर्थात् इस सूक्ष्म के विस्फोट द्वारा व्यक्ति को सामाजिक बनाना, यही है इसका मर्म। जो जितनी बड़ी चीज से जुड़ेगा, उतना ही समर्थ रचनाकार होगा।

प्रतिबद्धता, मुक्तता के बीच संतुलन जरूरी- जैनेंद्र कुमार

सच तो यह है कि आज तक 'प्रतिबद्धता' शब्द साहित्य के परिप्रेक्ष्य में मेरी समझ में ही नहीं आया है। मुझे आज भी लगता है कि हमारी साहित्य-संस्कृति के पीछे 'बद्धता' नहीं, एक प्रकार की मुक्ति अथवा मुक्तता रही। वह मुक्तता भी किसके प्रति? इसका उत्तर हम तलाशें तो पाएँगे कि सर्वदा एकबद्धता तो थी ही।

यह विरोधाभास इसलिए कि बिना प्रतिबद्धता का दायित्व-बोध अपने साथ रखे भी, आप दूसरों को/से आनंद दे/पा सकते हैं। दायित्व-बोध वह रखता है जिसमें संकल्प जगता है। संकल्प जिसका कोई विकल्प नहीं होता- वह अनेक व्यक्तियों और समाज सुधारकों में भी है। हमारे ही यहाँ श्रीकृष्ण ने द्वापर युग में अर्जुन को युद्ध के लिए कुरुक्षेत्र की रणभूमि में तत्पर कर दिया था, किंतु 'सबको छोड़कर अनन्यभाव से मुझको पकड़ लो' यह भी कहा था। अर्जुन ने श्रीकृष्ण को पकड़ भी

लिया था अनन्य भाव से, किंतु क्या उनकी पकड़ और परिभाषा में आ सके थे कृष्ण? कहना दुष्कर है।

आप 'प्रतिबद्धता' अथवा जिस भी शब्द, दर्शन अथवा व्यक्तियों की मान्यता को पकड़ें, उसे अंतिम रूप से जान लेने की कोशिश अवश्य करें। यहीं एक अंतर्विरोध भी है कि यदि आप अंतिम रूप से जान लें जहाँ कि आपको जाना है तो शायद आपका चलना ही रुक जाएगा। अंतिम अज्ञात तत्व ही तो आपको, आपके जीवन को गतिशील रखे हुए है। लोग जानने पर जोर देते हैं- देखा और समाज को कैसे जाना जाए? मैं समझता हूँ कि ज्ञाता और ज्ञेय के संबंध द्वारा अपने ज्ञान का मालिक आपको ही बनना पड़ेगा। जीना भी आपको, जानना भी आपको। जीना और जानना- दोनों को जीवन में साथ लेकर चलना पड़ता है।

यही मनुष्य का दुर्भाग्य अथवा कह लें कि संघर्ष है। पशु-पक्षी ही ऐसे होते हैं जिन्हें अपना जीवन स्वयं को जाने बिना जीना है। यहीं बता दूँ कि ज्ञान वही सार्थक होगा जो सहज ही घुल जाए। जीवन में घुले। जीने के द्वारा, अनुभव के द्वारा जानना ही सार्थक होता है। 'प्रतिबद्धता' शब्द का व्यवहार करने वाला शायद जरूर जानता होगा कि उसे किसके प्रति प्रतिबद्ध होना है।

तो मुक्तता अथवा मुक्ति कहाँ है? क्या है? मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मनमानापन या यह मुक्तता-सरलता का ही प्रतिरूप है। साहित्य या साहित्यकार का संबंध परस्पर अभिन्नता का है। बीच में पाठक की जगह हम किसी भी 'वाद' को लाएँ, तभी पार्थक्य होता है। इसलिए प्रतिबद्धता व मुक्तता के बीच संतुलन जरूरी है।

प्रतिबद्धता- स्वीकार की चेतना, अस्वीकृति का साहस- डा. परमानंद श्रीवास्तव

पिछले कुछ वर्षों में 'प्रतिबद्धता' शब्द को लेकर काफी चर्चा हुई है और अलग-अलग रूपों में यह सवाल पूछा गया है कि प्रतिबद्धता क्यों? और किसके प्रति? यह सवाल अकारण नहीं उपस्थित हो गया है। न सिर्फ यह पश्चिमी विचार होने से हमारे लिए अप्रासंगिक हो जाता है। यह पाश्चात्य आलोचनात्मक शब्दावली की उपज है; बल्कि एक समय सार्त्र भी अपने आप से पूछते हैं; किंतु सिर्फ इसलिए हमारे वास्ते यह शब्द

अप्रासंगिक नहीं हो जाता।

सन 1956-57 के आस-पास हिंदी में 'अज्ञेय' और 'परिमल' के मंच से 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' की मांग अचानक ही इतने जोर-शोर से की गई कि 'स्वतंत्रतावाद' एक खास तरह का अभिजात्यवर्गीय आत्म-रक्षात्मक मुहावरा या कांसेप्ट (अवधारणा) बन कर सामने आया। कहा यही जा रहा था कि इस तरह की अवधारणा पर बल देने का अर्थ सामाजिक दायित्व की अस्वीकृति नहीं है, किंतु इस पर अतिरिक्त बल देने का दुष्परिणाम अंततः यह हुआ कि एक विशिष्ट प्रकार के साहित्य से 'समाज' ही गायब हो गया। ऐसी रचनाएँ सामने आईं जो समय और स्थान के यथार्थ का अर्थात् ऐतिहासिक यथार्थ का निषेध करती हैं और अमूर्तन को ही कलात्मक सिद्धि मानती हैं।

उधर राजनीतिक यथार्थ एक कठिन चुनौती के रूप में सामने आया और नये लेखक को अनिवार्यतः उससे टकराना पड़ा। यही वह प्ररिप्रेक्ष्य है जिसमें निर्मल वर्मा जैसे कलाधर्मी और रूपवादी लेखक को भी इस प्रष्ठन से पलायन असंभव प्रतीत हुआ। कविता में 'प्रतिबद्ध कविता' नामक एक संपूर्ण आंदोलन ही चल पड़ा जिसका सीधा प्रभाव वर्तमान दौर की कई कविताओं पर है। मैं तो कहूँगा कि 'प्रतिबद्धता' एक सार्थक शब्द है। साहित्यकार के संदर्भ में यह खंड-खंड रूप में नहीं उभरता। किसके प्रति, अपने प्रति। विचारधारा अथवा रचना के प्रति? इस तरह के प्रष्ठन मात्र टालने वाली सतही बातें हैं।

वास्तव में 'प्रतिबद्धता' स्वयं में एक संश्लिष्ट अवधारणा है- साहित्य-सर्जक के लिए, रचनाकार के लिए। प्रतिबद्धता केवल स्वीकृति नहीं है। इसमें स्वीकार की चेतना है, तो अस्वीकार का साहस भी। प्रतिबद्धता में तोड़ना और बनाना दोनों ही शामिल हैं। मुक्तिबोध में यथास्थिति के विरुद्ध विद्रोह का भाव है। साथ ही एक नये भविष्य की कल्पना के लिए सजग साहस भी दिखाई पड़ता है। यह सब मुक्तिबोध की प्रतिबद्धता के भीतर है। यह खास प्रतिबद्धता है रचना कर्म के प्रति; फॉर्म अथवा रूप-विन्यास के प्रति भी है। वाह्य और अभ्यंतर के भेद से प्रतिबद्धता की परिभाषा साहित्यकार नहीं करता- वह उसे अपनी संपूर्ण चेतना का पर्याय बना लेता है। एक प्रतिबद्ध लेखक के लिए साहित्य-सञ्जन

अथवा रचना कर्म अपने-आप में एक समर्थ प्रयोजन है जिसे उपयोगितावाद की सीमाओं में आँकना जरूरी नहीं। उचित भी नहीं।

प्रतिबद्धता अनिवार्य छर्त है लेखन की- हरिश्चंकर परसाई

प्रतिबद्धता हर प्रकार के लेखन की अनिवार्य छर्त है। यह समझ और विश्वास भी जरूरी है कि आप व्यापक सामाजिक संघर्ष में किस पक्ष के साथ खड़े हैं। आपकी सहानुभूति किसके साथ है। प्रतिबद्धता के बिना तो गलत और निष्कर्ष ही प्रायः निकलते हैं। कुछ लोग साहित्य को राजनीति से अलग रखने की बात करते हैं; किंतु साहित्य और राजनीति का अलगाव एक भ्रम अथवा छलमात्र है। साहित्य का सरोकार संपूर्ण मानव-जीवन से है।

राजनीति आज के मनुष्य की नियति की एक निर्णायक शक्ति है। मानव-मूल्यों की प्रतिष्ठा, समता, सामाजिक न्याय, शोषण-मुक्ति आदि राजनीतिक आंदोलनों के मुख्य लक्ष्य होते हैं। यदि लेखक इन आंदोलनों को नकार दे, तब तो वह मनुष्य के बेहतर जीवन की आकांक्षाओं से ही कट जाएगा। इसलिए भी साहित्य कभी राजनीति से अलग नहीं हो सकता और न ही किया जा सकता है।

उल्लेखनीय है कि समाज-कल्याण राजनीतिक शक्तियाँ भी करती हैं और गैर-राजनीतिक शक्तियाँ भी; किंतु समाज-कल्याण में आमूल परिवर्तन करके समाज के कल्याण का मार्ग राजनीति ही प्रशस्त करती है। जब साहित्य समाज-कल्याण करने वाली राजनीति से विमुख होता है, तब वह अपने दायित्व से भी विमुख हो बैठता है। कोरा मानवतावाद वायवी (हवाई) चीज है। राजनीतिक-वैज्ञानिक मानवतावाद के द्वारा समाज-कल्याण करने की चेष्टा करती है।

यहीं एक प्रष्ठन उठता है कि साहित्य राजनीति से भला किस रूप में जुड़े। नारे और अखबारी टिप्पणी कतई साहित्य नहीं है, पर यह भी झूठ है कि साहित्य के कोई अपने आंतरिक मूल्य हैं। सच तो यह है कि साहित्य के मूल्य जीवन-मूल्यों से बनते हैं। ये जीवन-मूल्य क्या हैं- इन्हें साहित्यकार स्वयं समझें और अपने साहित्य में उतारें। इस तरह, साहित्य अपने-आप बिना ढिंढोरा पीटे कल्याणकारी और समाजोपयोगी राजनीति

से जुड़ जाती है। यह जरूरी भी है।

यदि कोई साहित्यकार किसी राजनीतिक विचार-धारा को स्वीकार करता है, तब कोई कारण नहीं है कि वह उस राजनीति का समर्थक न हो। समाजवाद का समर्थन करने वाला लेखक क्या पूँजीवाद का प्रचार कभी करेगा? किसी राजनीतिक दृष्टिकोण को समर्थन देना- पूर्वाग्रह नहीं, विश्वास है।

साहित्यिक और राजनीतिक दृष्टिकोण जैसी अलग-अलग कोई चीज नहीं है। दृष्टिकोण एक ही होता है। अगर चिली में निर्वाचित वामपंथी सरकार को अमेरिकी षड्यंत्र के चलते गिरा दिया जाता है तब इसका विष्णुद्व साहित्यिक दृष्टिकोण क्या होगा? क्या यह होगा कि हाय, वहाँ के राष्ट्रपति (तत्कालीन) अयेंदे को

मार डाला गया। हाय, प्रख्यात कवि पाब्लो नेरुदा मारा गया। यह हाय-हाय का रुदन सही साहित्यिक दृष्टिकोण नहीं है। इसमें जो राजनीतिक दृष्टिकोण है, वही साहित्यिक दृष्टिकोण भी है।

यदि कोई लेखक अपने विश्वास के अनुसार नारे लगाता है, तो उसे यह हक है। वह साहित्य है अथवा नहीं, यह इस बात से तय होगा कि उसकी इन रचनाओं में वास्तविक जीवन और जीवन-मूल्य कितनी सच्चाई के साथ अभिव्यक्त हुए हैं।

वरिष्ठ उप संपादक 'आज'
बैंक रोड, गोरखपुर-273001(उ.प्र.)
संपर्क: 09451202409

**पूर्वोत्तर रेलवे सोशल मीडिया के माध्यम से भी
राजभाषा के प्रयोग-प्रसार में सतत प्रयत्नशील है।**

**गोरखपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
की गतिविधियाँ इंटरनेट पर भी उपलब्ध है।
इसे <http://tolicgkp.blogspot.com>
पर देख सकते हैं**

**पूर्वोत्तर रेलवे पर मुख्य परिचालन प्रबंधक सह मुख्य राजभाषा अधिकारी
श्री ज्ञान दत्त पांडेय जी के निर्देशानुसार परिचालन विभाग की ई-पत्रिका
तैयार की गई है। इस ई-पत्रिका में परिचालन विभाग से संबंधित विषयों
के साथ-साथ अन्य रोचक विषयों का समावेश किया गया है। इसे आप
<http://railoperating.blogspot.com>
पर देख सकते हैं।**

**जग वसंत बहार या मल्हार गाए,
छलछलाए दष्ट, अधर उर मुस्कराए,
आग उगले या शिष्टिशिर अनुराग बरसे,
मैं अछूते तार में हूँ तुम कहाँ हो?
मैं मगन मझधार में हूँ, तुम कहाँ हो?**

आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री

◆ लेख ◆
आदर्श संत स्वामी विवेकानंद
के.के.यादव

भारत आदिकाल से ही ऋषि-मुनियों का देश रहा है। देश के विभिन्न कालों में महान संत जैसे महावीर स्वामी, गौतम बुद्ध, गुरु गोरक्षनाथ, स्वामी रामकृष्ण परमहंस रहे हैं। पश्चिम बंगाल की राजधानी कोलकाता में पूर्व रेलवे का एक स्टेशन सियालदह स्थित है। सियालदह स्टेशन से लगभग 2 किमी. की दूरी पर सिमुलिया नाम का एक मुहल्ला (वर्तमान में गौर मोहन मुखर्जी स्ट्रीट) है। उस स्थान पर एक संभ्रांत परिवार रहा करता था। इस परिवार के मुखिया का नाम श्री विष्णुनाथ दत्ता तथा इनकी धर्मपत्नी का नाम श्रीमती भुवनेश्वरी देवी था। परिवार हर तरह से समृद्ध था तथा कोलकाता में इस परिवार को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। भुवनेश्वरी देवी ने 12 जनवरी 1863 को एक तेजस्वी बालक को जन्म दिया जिसका नाम बड़े लाड़-प्यार से नरेंद्रनाथ दत्ता रखा गया। कायस्थ परिवार होने के कारण घर का वातावरण शिक्षा के लिए पहले से ही उपयुक्त था। नरेंद्रनाथ की शिक्षा भी अन्य बालकों की तरह होने लगी। नरेंद्रनाथ पढ़ने में बहुत ही कुशाग्र बुद्धि के छात्र थे। नरेंद्रनाथ जो भी पढ़ते वह एक बार में ही याद हो जाता था। माता-पिता को अपने संतानों से यह आशा होती है कि वे भविष्य में डाक्टर, इंजीनियर, नामी वकील बनेंगे या प्रशासनिक सेवा के उच्च पदों पर आसीन होकर अपने कुल का नाम रोशन करेंगे तथा वज्ज्वावस्था में अपने माता-पिता के बुढ़ापे का सहारा बनेंगे। लेकिन नरेंद्र के माता-पिता को क्या पता था कि उनका यह पुत्र गृहस्थ जीवन में न रहकर सन्यासी जीवन अपनाने को आतुर है। श्री नरेंद्रनाथ की माता जी बहुत ही धार्मिक विचारों की स्त्री थीं। पूजा-पाठ में उनका लगाव अत्यधिक रहता था। माता के धार्मिक विचारों का प्रभाव नरेंद्रनाथ पर ज्यादा पड़ा था। श्री नरेंद्रनाथ का मन पढ़ने-लिखने में ज्यादा नहीं लगता था। उनका मन इधर-उधर भटक रहा था। मन की जिज्ञासा की छाँति के क्रम में एक दिन इनकी मुलाकात उस काल के प्रसिद्ध संत स्वामी रामकृष्ण परमहंस से हुई। स्वामी रामकृष्ण परमहंस भागीरथी के पावन तट पर

दक्षिणेश्वर नामक स्थान पर सपत्नीक आध्यात्मिकता की अलख जगा रहे थे। नरेंद्रनाथ स्वामी रामकृष्ण परमहंस की सेवा करने लगे। वह इनसे इतने प्रभावित हुए कि उनके साथ-साथ अध्यात्म में रम गए। ऐसा कहा जाता है कि स्वामी रामकृष्ण परमहंस एक बार बीमार पड़े थे उनको गले का कैंसर हो गया था। एक दिन उनको उल्टी हुई थी तो नरेंद्रनाथ उनकी सेवा में इतने तल्लीन थे कि वह उनकी उल्टी को पी गए। स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने इस शिष्य का नाम विवेकानंद रखा। स्वामी विवेकानंद जी ने अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस की मृत्यु के पष्ठचात् सन 1897 में बेलूर मठ में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। बेलूर मठ दक्षिणेश्वर से कुछ ही दूरी पर भागीरथी के पावन तट पर एक रमणीक स्थल पर स्थित है। स्वामी विवेकानंद ने अपने गुरु के आध्यात्मिक विचारों के प्रचार-प्रसार एवं दुखी मानवता की सेवा हेतु देश के विभिन्न शहरों में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। देश के कोने-कोने का भ्रमण किया। देश के अन्य संतों के विचारों से इतर स्वामी जी ने देश को शिक्षा के प्रचार-प्रसार एवं दीन-दुखियों की सेवा हेतु जगह-जगह शैक्षिक संस्थानों एवं अस्पतालों का निर्माण कराया। देश से अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियों को मिटाने हेतु शिक्षा पर विशेष जोर दिया। इन्होंने भाग्यवाद से इतर कर्म-योग की शिक्षा दी और कहा कि 'मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं होता है।' एक बार स्वामी को भारतीय दर्शन के प्रचार हेतु अमेरिका जाने का अवसर मिला तथा वहाँ के अमेरिकी मित्रों की सहायता से शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में प्रमुख वक्ता के रूप में भारत का प्रतिनिधित्व करने का अवसर मिला तो अपने संबोधन My dear Sisters and Brothers Of America से ही उस सभा में मौजूद सभी लोगों को मंत्र-मुग्ध कर दिया तथा भारत का नाम पूरे विश्व में उँचा कर दिया। स्वामी जी ने गीता, उपनिषद्, वेद की सरल भाषा में व्याख्या कर मानव जीवन की उन्नति के लिए उपयोगी बना दिया। कहा कि मानव सेवा ही सच्ची ईश्वर की आराधना है।

कहा जाता है कि स्वामी जी एक बार बनारस

की गलियों में अकेले घूम रहे थे तो बंदरों के एक झुंड ने उनको दौड़ा लिया। जब स्वामी जी डरकर भागने लगे तभी उनके मन में विचार आया कि मुकाबला करो और स्वामी जी रुक गए तो बंदरों का झुंड भाग गया। उन्होंने कहा कि डर से भागने के बजाय उसका मुकाबला किया जाए तो डर स्वतः भाग जाता है। स्वामी जी का देहावसान 39 वर्ष की अल्पायु में ही दिनांक 04 जुलाई 1902 को बेलूर मठ में हो गया। इस तेजस्वी संत ने अल्पायु में ही अपने विचारों, कर्मों से शिक्षा, अध्यात्म, मानवता एवं दीन-दुखियों की सेवा में देश को छिखर पर पहुँचा दिया जो सामान्य मनुष्य कई जन्मों में भी नहीं कर सकता है। आज के युग में जहाँ चारों तरफ निराशावादी विचार युवा वर्ग को अपने आगोष्ठा में ले रहे हैं, पलायनवादिता बढ़ रही है। समाज अपराधीकरण की तरफ उन्मुख हो गया है। राष्ट्र भ्रष्टाचार की विभीषिका से कराह रहा है, मिलावटखोरी एवं मुनाफाखोरी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। युवा नष्ट की ओर उन्मुख हो रहा है।

अष्टलीलता बढ़ रही है। बलात्कार की घटनाएँ प्रतिदिन घटित हो रही हैं। तलाक का ग्राफ बढ़ रहा है। स्वार्थपरता अपने चरम पर पहुँच गई है। मानव ही मानव का दुष्ट बन बैठा है। ऐसे समय में इस तेजस्वी संत के विचारों को देश का प्रत्येक नागरिक अपने जीवन में उतारे तो देश में जन-जन में व्याप्त वैमनस्यता स्वतः समाप्त हो जाएगी तथा भारत देश अपने खोये हुए पुराने गौरव को प्राप्त कर सचमुच 2020 तक एक महाशक्ति बनकर संपूर्ण विश्व को एक नया नेतृत्व प्रदान कर सकता है। संपूर्ण विश्व में शांति, समृद्धि मानवतावाद को पुनः स्थापित कर विश्व में व्याप्त आतंकवाद पर नियंत्रण पाया जा सकता है। ऐसे महान पुरुष को शत-शत नमन है।

कार्यपालक इंजीनियर/बाढ़
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क: 09794840222

ध्यानम्

ॐ सिंहस्था शशिष्टोखरा मरकतप्रख्यैष्ठ्यचतुर्भिर्भुजैः

श्रृंखं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः श्रोभिता।

आमुक्तांगदहारकंकणरत्नाञ्चीरणनूपुरा

दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्कुंडला॥

-श्रीदुर्गासप्तशत्याम् देवीसूक्तम्

अर्थात् जो सिंह की पीठ पर विराजमान हैं, जिनके मस्तक पर चंद्रमा का मुकुट है, जो मरकतमणि के समान कांतिवाली अपनी चार भुजाओं में श्रृंख, चक्र, धनुष और बाण धारण करती है, तीन नेत्रों से सुशोभित होती है, जिनके भिन्न-भिन्न अंग बाँधे हुए बाजूबंद, हार, कंकण, खनखनाती हुई करधनी और रुनझुन करते हुए नूपुरों से विभूषित हैं तथा जिनके कानों में रत्नजटित कुंडल झिलमिलाते रहते हैं, वे भगवती दुर्गा हमारी दुर्गति दूर करनेवाली हों।

(महर्षि अम्भष्टा की कन्या का नाम वाक् था। यह बड़ी ब्रह्मज्ञानिनी थी।

उसने देवी के साथ अभिन्नता प्राप्त कर ली थी। उन्हीं के ये उद्गार हैं)

◆ पर्यावरण ◆
रेल यानों में बायो डाइजेस्टर-ग्रीन टॉयलेट का प्रयोग
कार्तिकेय सिंह

भारतीय रेलवे की सफाई, स्वास्थ्य

व वातावरण के प्रति प्रतिबद्धता की कड़ी में एक और आयाम जुड़ गया है जिसमें रेलवे यानों के टॉयलेट से गिरने वाले ह्यूमन वेस्ट (मानव उत्सर्जन) को खुले में रेलवे स्टेशन व ट्रैक पर गिरने से रोकने के लिए यानों के टॉयलेट में बायो-डाइजेस्टर टैंक ग्रीन टॉयलेट (बायो टैंक) का प्रयोग शुरू कर दिया गया है।

भारतीय रेल ने डिफेंस रिसर्च व डेवलपमेंट ऑरगेनाइजेशन के साथ मिल कर बायो-डाइजेस्टर टैंक ग्रीन टॉयलेट का विकास किया है। ये टैंक रेलवे यानों के टॉयलेट से निकलने वाले विसर्जन में लगे हैं। इसमें एनोरोविक बैक्टीरिया भरे रहते हैं, जो मानव उत्सर्जन को गैस (मिथेन व कार्बन-डाईऑक्साइड) व पानी में परिवर्तित कर देते हैं। गैस वायुमंडल में निकल जाती है व पानी को क्लोरिनेशन के उपरांत विसर्जित कर दिया जाता है जिसके कारण से मानव उत्सर्जन रेलवे ट्रैक व स्टेशन पर नहीं गिरता है। इससे वातावरण दूषित नहीं होता है। रेलवे ट्रैक व यान का भी कोरोजन (क्षरण) से बचाव होता है। सर्वप्रथम 12.07.2012 को ग्वालियर-वाराणसी बुंदेलखंड एक्सप्रेस के सभी यानों में ऐसे बायो-डाइजेस्टर टैंक को लगाया गया जो कि सफल रहा। इसके उपरांत और 05 ट्रेनों में बायो-डाइजेस्ट टैंक को लगाया गया जो कि सफल रहे। इसकी सफलता को देखते हुए रेलवे ने 2022 तक सभी रेल यानों में बायो-डाइजेस्टर टैंक ग्रीन टॉयलेट लगाने का निर्णय लिया है। अभी तक भारतीय रेल में 3000 से अधिक यानों में बायो-डाइजेस्टर टैंक को लगाया जा चुका है।

कार्य विधि

स्टेनलेस स्टील से बना बायो-डाइजेस्टर टैंक ग्रीन टॉयलेट लगभग 110 किग्रा. का होता है। इसकी धारिता (Capacity) लगभग 400 लीटर होती है। इसमें लगभग 120 लीटर लिक्विड बैक्टीरिया डाला जाता है। बायो-डाइजेस्टर टैंक सात हिस्सों में विभाजित होता है। ये चैंबर पार्टिशन वाल से अलग होते हैं। ये सभी चैंबर

आपस में जुड़े होते हैं। प्रत्येक चैंबर में बैक्टीरिया होता है जो कि मानव उत्सर्जन को डायजेस्ट कर मिथेन व कार्बन-डाईऑक्साइड में परिवर्तित कर देता है। इन सभी पार्टिशन वाल पर नायलॉन की मैटिंग की जाती है जो बैक्टीरिया के वृद्धि में सहायक होती है। अंतिम चैंबर में केवल पानी बचता है जिसे क्लोरिन चैंबर, जो बाहर लगा होता है द्वारा डिस्चार्ज कर दिया जाता है।

एनोरोविक बैक्टीरिया

एनोरोविक बैक्टीरिया की संख्या 6 से 8 घंटे में दोगुनी हो जाती है। ये बैक्टीरिया दो हफ्ते तक सामान्य तापमान पर जीवित रहते हैं। ये बैक्टीरिया शून्य तापमान से लेकर 70°C तक तापमान को सह सकते हैं। इन बैक्टीरिया को डायजेस्ट करने हेतु ऑक्सीजन की आवश्यकता भी नहीं होती है।

एनोरोविक प्रोसेस से ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। अतः ठंडी जगहों में भी चैंबर का तापमान ज्यादा रहता है। बैक्टीरिया को लंबे समय तक डालने की आवश्यकता नहीं होती है। अतः अनुरक्षण की भी आवश्यकता नहीं होती है।

पूर्वोत्तर रेलवे में बायो-डाइजेस्टर का प्रयोग

पूर्वोत्तर रेलवे से प्रथम ट्रेन लखनऊ मुंबई पुष्पक एक्सप्रेस के सभी यानों में बायो-डाइजेस्टर टैंक लगा है। वर्तमान में पूर्वोत्तर रेलवे में 267 यानों में बायो-डाइजेस्टर टैंक लगा है जिसमें से 80 यानों में बायो-डाइजेस्टर के लगाने का प्रावधान पूर्वोत्तर रेलवे गोरखपुर कारखाना व मंडलों द्वारा किया गया है।

भारतीय रेलवे में प्रथम बार ग्वालियर-वाराणसी बुंदेलखंड एक्सप्रेस के 23 यानों का पुनर्कल्पन पी.ओ. एच. का कार्य गोरखपुर यांत्रिक कारखाने द्वारा किया गया जिनकी प्रशंसा सदस्य यांत्रिक द्वारा की गयी थी। रेलवे बोर्ड द्वारा यांत्रिक कारखाना गोरखपुर को 204 यानों में बायो-डाइजेस्टर टैंक ग्रीन टॉयलेट लगाने का लक्ष्य दिया जिसे यांत्रिक कारखाना गोरखपुर पूरा कर लेगा। अभी तक यांत्रिक कारखाना गोरखपुर द्वारा 96 यानों का पुनर्कल्पन पी.ओ.एच. का कार्य किया जा चुका है।

चुनौतियाँ

1. बायो-डाइजेस्टर टैंक को लगाने हेतु लगे बायो-डाइजेस्टर टैंक के होल्डिंग हेतु माउंटिंग ब्रैकेट का प्रावधान करना होता है जिसे पुनर्कल्पन में डाउन हैंड वेल्डिंग द्वारा ही किया जा सकता है। ऐसे में पूरा हेड स्टाक बदलने की स्थिति में ही माउंटिंग ब्रैकेट लगाया जा सकता है जिससे कि बायो-डाइजेस्टर टैंक लगाने की प्रक्रिया में तेजी नहीं आ पा रही थी। परंतु रेलवे ने बोल्टेड डिजाइन का माउंटिंग ब्रैकेट डेवलप किया है। जिससे डाउन हैंड वेल्डिंग की आवश्यकता नहीं होगी व सभी रेल यानों में अतिशुद्ध ही बायो-डाइजेस्टर टैंक का प्रावधान किया जा सकेगा।
2. बायो-डाइजेस्टर टैंक के चोक होने की दृष्टा में सामान्य टॉयलेट जैसा भी प्रयोग करने हेतु ओपनिंग मैकेनिज्म लगाया गया है जो कि जाम होने के कारण चोकिंग की संभावना बनी रहती है। इस दृष्टा में टॉयलेट से ही ओपन करने का प्रावधान किया जा रहा है जिससे चोकिंग की समस्या से निजात मिल सकेगा।
3. रेलवे की वर्तमान वित्तीय स्थिति के कारण फंड आवश्यकता से कम आ रहा है जिससे बायो-डाइजेस्टर

लगाने की गति में अपेक्षित तेजी नहीं आ पा रही है।
4. यात्रियों द्वारा बोटल, नैपकिन, पाली बैग, गुटका इत्यादि टॉयलेट में डालने से बायो-डाइजेस्टर टैंक अकार्यशील हो जा रहा है।

बायो टैंक लगाने से लाभ

बायो-टैंक लगाने से निम्न लाभ होंगे-

1. रेलवे यान व ट्रेक को क्षरण से बचाया जा सकेगा
अतः रिपेयर/रिप्लेसमेंट कम करना पड़ेगा जिससे रेलवे को वित्तीय लाभ होगा।
2. रेलवे स्टेशन व रेलवे ट्रेक साफ-सुथरा रखने में मदद मिलेगी।
3. वातावरण स्वच्छ व बीमारी फैलने की संभावना नगण्य रहेगी।
4. रेलवे यान व ट्रेक का अनुरक्षण कर्मचारियों द्वारा बिना किसी गंदगी के सही प्रकार से किया जा सकेगा, जिससे संरक्षा बढ़ेगी।

सहायक कार्य प्रबंधक
यांत्रिक कारखाना
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क: 979484

हंसः स्यात् सारमादत्तेयः श्रोता विविधाच्छ्रूतात्।

दुग्धेनैक्यं गतात्तोयाद् यथा हंसोऽमलं पयः॥

-श्रीमद्भागवतमहात्म्यम्

चतुर्थोऽध्यायः ॥13॥

अर्थात् जैसे हंस दूध के साथ मिलकर एक हुए जल से निर्मल दूध ग्रहण कर लेता और पानी को छोड़ देता है, उसी प्रकार जो श्रोता अनेकों शास्त्रों का श्रवण करके भी उसके सारभाग अलग करके ग्रहण करता है, उसे 'हंस' कहते हैं।

कवलयति नरकनिकरं परि हरति मृष्टालिकां ध्वाक्षः।

यदतोऽस्तु मा स्मयस्ते, स्वभ्यस्तं सर्वदास्वदते॥

अर्थात् कौवा कमल ततुओं का त्याग कर नरक (तथा नरक जैसे अन्य मैले द्रव्यों) के ढेर का भक्षण करता है। परंतु इसमें तुम्हें आश्चर्य करने का कोई कारण नहीं है क्योंकि जिसके सेवन का अच्छा अभ्यास हो जाए वह द्रव्य (दुर्गंधित, घृणित, अस्वादिष्ट होने पर भी) सदैव स्वादिष्ट ही मालूम पड़ता है।

◆ व्यक्तित्व ◆
राष्ट्रपति डा. जाकिर हुसैन
चंद्रभूषण ओझा

जीवन परिचय:

स्वतंत्र भारत के तीसरे राष्ट्रपति डॉ. जाकिर हुसैन का जन्म 8 फरवरी 1897 को हैदराबाद में एक संपन्न पठान परिवार में हुआ था। जन्म के कुछ ही वर्ष बाद इनका परिवार हैदराबाद छोड़ उत्तर प्रदेश रहने चला गया था। जाकिर हुसैन ने युवावस्था में ही अपने माता-पिता को खो दिया था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा इस्लामिया हाई स्कूल, इटावा में हुई। आगे की पढ़ाई के लिए डा. जाकिर हुसैन ऐंग्लो-मुस्लिम ओरियंटल कॉलेज, जिसे अब अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के नाम से जाना जाता है, गए थे। उन्होंने जर्मनी विष्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में पी.एचडी. की डिग्री भी प्राप्त की। डा. जाकिर हुसैन का राजनीति के प्रति रुझान कॉलेज के दिनों में ही हो गया था। कॉलेज में उनकी छवि एक प्रभावी छात्र नेता की थी।

व्यक्तित्व: डॉ. जाकिर हुसैन एक व्यावहारिक और आशावादी व्यक्तित्व के इंसान थे। इनका जन्म एक शिक्षित और आर्थिक रूप से संपन्न पठान परिवार में हुआ था। उनके परिवार की संपन्नता और समृद्धि की छाप उनके व्यक्तित्व पर साफ दिखाई पड़ती थी। शिक्षा के प्रति उनका रुझान उनके परिवार की ही देन है। उनके पिता ने भी कानून के क्षेत्र में अच्छी ख्याति प्राप्त की थी। वह शिक्षा के महत्व को भली-भाँति जानते थे। माता-पिता का देहांत होने के बाद भी उन्होंने अपनी पढ़ाई को बिना किसी रुकावट के जारी रखा।

राजनैतिक सफर: मात्र 23 वर्ष की आयु में डॉ. जाकिर हुसैन ने अपने कुछ सहपाठियों और सहयोगियों के साथ मिलकर नेशनल मुस्लिम यूनिवर्सिटी जामिया मिलिया इस्लामिया की नींव रखी। इसके तुरंत बाद वह अर्थशास्त्र में पी.एचडी. की डिग्री लेने के लिए जर्मनी चले गए। 1927 में जब वह भारत लौटे उस समय जामिया मिलिया यूनिवर्सिटी बंद होने के कगार पर थी। तब उन्होंने इसे बंद होने से रोकने और इसकी दशा सुधारने के लिए इसका संचालन पूर्ण रूप से अपने अधीन कर लिया। अगले 20 वर्षों तक उन्होंने इस संस्थान, जो ब्रिटिश अधीन भारत को स्वराज्य दिलाने के लिए निरंतर कार्य कर रहा था, को उच्च कोटि की

दक्षता प्रदान करते हुए सुचारू रूप से चलाया। स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद उन्हें जामिया मिलिया इस्लामिया का उप कुलपति नियुक्त किया गया। डॉ. जाकिर हुसैन ने शिक्षा सुधार के क्षेत्र में अपनी सक्रिय भूमिका निभाई। उनकी अध्यक्षता में विष्वविद्यालय शिक्षा आयोग को शिक्षा का स्तर बढ़ाने के उद्देश्य से गठित भी किया गया। जामिया मिलिया में अपना कार्यकाल समाप्त करते हुए 1956 में वह राज्य सभा अध्यक्ष के रूप में चयनित हुए। लेकिन लगभग एक वर्ष बाद ही 1957 में वह बिहार राज्य के गवर्नर नियुक्त हो गए और राज्य सभा की सदस्यता त्याग दी। उन्होंने इस पद पर 1962 तक कार्य किया। 1962 में वह देश के तीसरे राष्ट्रपति के रूप में निर्वाचित हुए।

सम्मान: शिक्षा और राजनीति के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान देने के लिए वर्ष 1963 में डॉ. जाकिर हुसैन को भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया।

निधन: 3 मई 1969 को डॉ. जाकिर हुसैन का असमय देहांत हो गया। वह भारत के पहले राष्ट्रपति हैं जिनकी मृत्यु अपने ऑफिस में ही हुई थी। डॉ. जाकिर हुसैन को जामिया मिलिया इस्लामिया के परिसर में ही दफनाया गया था।

डॉ. जाकिर हुसैन एक महान शिक्षाविद् होने के साथ-साथ नेतृत्व की क्षमता में भी बेजोड़ थे। वह अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के उप कुलपति रहने के अलावा भारतीय प्रेस आयोग, विष्वविद्यालय अनुदान आयोग, यूनेस्को, अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा सेवा तथा केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से भी जुड़े रहे थे। 1962 में वह भारत के उप राष्ट्रपति भी रहे। सन 1969 में असमय देहावसान के कारण वह अपना कार्यकाल नहीं पूरा कर सके। लेकिन भारतीय राजनैतिक और शैक्षिक इतिहास में महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए उन्हें हमेशा याद किया जाएगा।

पत्रकार, दैनिक जागरण
पडरौना, कुशीनगर
संपर्क: 09452454037

◆ लेख ◆
भारत में रेलवे का विकास
हीरा लाल

सन् 1320 में ग्रीस में पत्थरों को बिछाकर कुछ सामान ढोया गया था। कुछ लोग इसे ही रेलवे की शुरुआत मानते हैं जबकि अधिकांश लोग इस मत को अस्वीकार करते हैं और सन् 1604 में इंग्लैंड के वोलाटन (Wollatan) में लकड़ी के ट्रैक पर घोड़े द्वारा कैरियेज खींचे जाने को रेलवे की शुरुआत मानते हैं।

फरवरी 1804 में ब्रिटेन के इंजीनियर रिचर्ड ट्रिविथिक (Richard-Trivithick) ने 'आयरन फैक्टरी' पेनीडरेन (Penydarren) में मेटिथियर कार्डिफ कैनाल (Metithyr- Cardiff Canal) तक 5 वैगन में 10 टन लोहे को 70 यात्री के साथ प्रथम ट्रायल रेलगाड़ी चलाया था। यह यात्री गाड़ी नहीं थी अपितु एक ट्रायल ट्रेन थी। परंतु रेल के इतिहास में मील का पत्थर जैसा कदम था।

सन् 1821 में अंग्रेज वूलेन व्यापारी एडवर्ड पीज (Edward Pease) को अपने यात्रा के दौरान विचार आया कि वेस्ट डरहम (West Durham) कोलियरी से स्टाकटन तक कोयला ढोने के लिए यदि सड़क की जगह रेल रोड रहता और कोयला वैगन में ढोया जाता तो कितना अच्छा रहता? इस ख्याल से उत्साहित होकर पीज ने स्टाकटन से डार्टिंगटन (Stockton to Dartington) के बीच रेल रोड निर्माण हेतु एक कंपनी बना ली। यह बात किलिंगवर्थ कोलियरी (Killing worth Colliary) के मैनेजर सर निकोलस वूड एवं उनके चीफ इंजीनियर जार्ज स्टीफेंसन तक पहुँची तो उन्होंने पीज से मिलकर उनके इस कदम को बहुत सराहा तथा खुद स्टीम इंजन बनाने का वादा करके रेल रोड निर्माण कार्य को आगे बढ़ाने में जुट गये।

27 सितंबर 1825 को दुनिया की प्रथम रेलगाड़ी 'स्टाकटन से डार्टिंगटन' के बीच चलाई गई थी। इसके इंजन को किलिंगवर्थ कोलियरी के चीफ इंजीनियर सर जार्ज स्टीफेंसन ने ही बनाया था। इस ट्रेन में कुल 36 वैगन थे जिसमें से 12 में कोयला और आटा, 6 में गेस्ट, 14 में वर्कमैन जबकि 6 वैगन खाली थे। इस पूरे कार्य का श्रेय वूलेन व्यापारी, एडवर्ड पीज, किलिंग वर्थ कोलियरी के मैनेजर सर निकोलस वूड तथा चीफ

इंजीनियर जार्ज स्टीफेंसन को जाता है।

सन् 1840 में ब्रिटिश इंडिया (अब भारत) के कोलकाता और बांबे प्रेसीडेंसी में कुछ अंग्रेज अधिकारियों ने रेल निर्माण को सोचा और यह बात जहाँ-तहाँ उठने लगी।

सन् 1843 में लार्ड डलहौजी ने ब्रिटिश इंडिया के बांबे, कोलकाता और मद्रास को रेल कम्युनिकेशन से जोड़ने की बात कही। इसी वर्ष बांबे प्रेसीडेंसी के चीफ इंजीनियर जार्ज क्लार्क ने सोचा कि बांबे को थाने से जोड़ा जाए।

सन् 1844 में सर आर. मैकडोनाल्ड स्टीफेंसन की Practicability and advantage of the Introduction of Railway into British India नामक लेख प्रकाशित हुआ था। इस लेख के बाद इंडिया में रेल निर्माण के विषय पर ग्रेट ब्रिटेन में दो गुट हो गये। एक पक्ष में और दूसरा विपक्ष में। विपक्षी गुट का तर्क था कि Condition in India were quite different from those in Britain. Many British and Indian who had a better understanding about India's topography and geography, opposed the construction of railway as a premature and expensive undertaking and a hazardous and a dangerous venture. Certain opponents doubted the feasibility of introduction of Railway in India citing poverty, extreme climate with torrential rains, violent storm high mountains, sandy desert and dense forest. एक तरफ इंग्लैंड गवर्नमेंट में तर्क-वितर्क चल रहा है वहीं दूसरी तरफ बांबे से कल्याण (Callion) तक रेल सर्वे भी हो रहा था।

सन् 1846 में अमेरिका में कॉटन की फसल बर्बाद हो गयी जिससे ग्रेट ब्रिटेन के मैनचेस्टर और ग्लासगो में टेक्सटाइल व्यापारियों को कॉटन का विकल्प तलाशना पड़ा। उस समय इंडिया में कॉटन बहुतायतता में होता था। यहाँ तक कि उस समय इंडिया में एक मण्डहूर कॉटन कालोनी भी हुआ करती थी। इन सब परिस्थितियों और भविष्य को देखते हुए इंग्लैंड गवर्नमेंट ने इंडिया में तेजी से रेल बिछाने का फैसला किया।

मार्च, 1847 बांबे में 'ग्रेट-इंडियन पेनिनसुलर रेलवे' (GIPR) नामक प्रथम रेल कंपनी का गठन हुआ परंतु 'ईस्ट इंडिया कंपनी' जो उस समय इंडिया में

ग्रासन में थी, ने विरोध किया।

01 अगस्त 1849 को ब्रिटेन-गवर्नमेंट ने 'लार्ड डलहौजी' को (जो कि रेलवे के अनुभवी माने जाते थे) इंडिया का गवर्नर-जनरल बनाकर भेजा। उन्होंने 17 अगस्त 1849 का GIPR एवं EI कंपनी के बीच 5 लाख पाउंड (जो बाद में एक मिलियन पाउंड तक पहुँच गया) का समझौता कराया कि एक Experimental line of Railway बांबे से कलियान (Callian) (अब कल्याण) तक थूल (Thull) एवं भोरघाट होते हुए बनायी जाए। 23 फरवरी 1852 को बांबे में कार्य शुरू हुआ। 18 नवंबर 1852 को बांबे में थाने तक कार्य पूर्ण हुआ। तत्पश्चात 16 अप्रैल 1853 को बांबे से थाने (21 मील) के लिए रेल चलायी गयी। इसमें कुल 3 भाप इंजन (जिनके नाम थे- सिंध, साहिब और सुल्तान), 14 कैरियेज (जिसमें यात्री नहीं बल्कि गेस्ट थे) अपराह्न 03:30 बजे 21 तोपों के सलामी के बाद बोरीबंदर से प्रस्थान की। यही इंडिया की सर्वप्रथम रेल थी। 1953 में भारतीय रेल की 'हीरक जयंती' Diamond Jubily मनायी गयी। तभी से प्रत्येक वर्ष 16 से 23 अप्रैल तक रेल सप्ताह मनाया जाता है तथा अपने कार्य में उत्कृष्ट कार्य करने वाले रेल अधिकारियों/कर्मचारियों को विभिन्न स्तरों पर पुरस्कृत किया जाता है।

यहाँ यह अवगत कराना आवश्यक होगा कि बांबे और कोलकाता में लगभग एक साथ कार्य चल रहे थे और ईस्ट इंडिया कंपनी जो कि उस समय ग्रासन में थी, इंडिया में प्रथम रेल उस समय की राजधानी कोलकाता में ही चलाना चाहती थी। इंग्लैंड से बांबे और कोलकाता के लिए एक ही साथ इंजन और कैरियेज स्टीमर से चले भी थे परंतु बांबे जाने वाला स्टीमर सही समय पर पहुँच गया जबकि कोलकाता जाने वाला इंजन लदा स्टीमर रास्ता भटक कर आस्ट्रेलिया पहुँच गया और कैरियेज लदा स्टीमर सैंडहेड (Sandhead) के निकट समुद्र में डूब गया था। इस तरह संयोग ही था कि बांबे में पहली ट्रेन चल सकी थी।

1851 में लार्ड डलहौजी ने सुझाया था कि पूरे इंडिया में एक समान गेज की चौड़ाई की रेल हो और इसके लिए उन्होंने तीन गेज माप- (1) 4'-8½" (2) 5'-6" (3) 7' सुझाए थे जिसमें से 5'-6" स्वीकार किया गया।

1851 से 1862 तक इसी चौड़ाई की रेल बिछायी जाती रही थी।

1854 से 1860 के बीच कुल 8 निम्नलिखित रेल कंपनियाँ बन चुकी थी-

1. ग्रेट इंडियन पेनिनसुलर रेलवे
2. ईस्टर्न इंडिया रेलवे
3. मद्रास रेलवे
4. बांबे-बड़ौदा सेंट्रल इंडिया रेलवे
5. सिंधिया रेलवे
6. ईस्टर्न बंगाल रेलवे
7. कलकत्ता रेलवे
8. साउथ रेलवे,

उपरोक्त सभी रेल कंपनियों को ईस्ट इंडिया कंपनी जो उस समय ग्रासन में थी, से विचार विमर्श करके ही 5'-6" चौड़ाई की रेल बिछानी पड़ती थी।

1862 में लार्ड मायो ब्रिटिश इंडिया के वायसराय बने। उन्होंने ट्रैफिक के हिसाब से मीटर गेज तथा नैरोगेज को बढ़ावा दिया। इससे प्रेरित होकर 1863 में गायकवाड बड़ौदा स्टेट रेलवे (GBSR) नामक अपनी कंपनी बनाकर 2'-6" चौड़ाई की रेल बिछाना प्रारंभ किया। 1880 में 'दार्जिलिंग हिमालयन रेलवे' ने 51 मील लंबी सिलीगुड़ी से दार्जिलिंग तक 2 फीट चौड़ी रेल बिछायी। 1907 में पटियाला स्टेट के इंजीनियर कालोनेल बाउल्स ने बसाई और सरहिंद के बीच 6 मील लंबी ऐसी डिजाइन तैयार की कि एक सिंगल ट्रैक, सड़क के पैरेलेल बिछाया और उसके सफलता पूर्वक संचलन के बाद इसे आलमपुरा तक बढ़ाया। इस रेल को चाणक्यपुरी के नेशनल रेलवे म्यूजियम में संग्रहित किया गया है। इसे आज भी देखा जा सकता है।

यद्यपि कि कुल 5 तरह की चौड़ाई की रेलवे प्रचलन में हैं।

- | | | | |
|------------------|----|---------|---------|
| 1. ब्राडगेज | BG | 1676 mm | 5'-6" |
| 2. स्टैंडर्ड गेज | SG | 1435 mm | 5'-4 ½" |
| 3. मीटर गेज | MG | 1000 mm | 3' 3¾" |
| 4. नैरो गेज | NG | 760 mm | 2'-6" |
| 5. अति नैरोगेज | NG | 610 mm | 2' |

यहाँ यह अवगत कराना आवश्यक है कि भारत में स्टैंडर्ड गेज नहीं है तथा रेल गेज की चौड़ाई वास्तव में मिलीमीटर में होती है न कि फीट या इंच में।

1904 में बांबे प्रेसीडेंसी के चीफ इंजीनियर डब्ल्यू. एच. हवाईट ने प्रस्ताव रखा कि बांबे बेस की दोनों कंपनियों GIPR एवं BCCI (ग्रेट इंडियन पेनिनसुलर रेलवे एवं बांबे-बड़ौदा सेंट्रल इंडिया रेलवे) को रेल नेटवर्क का विद्युतीकरण करना चाहिए। दोनों कंपनियाँ तैयार भी हो गईं। इंग्लैंड ग्रासन ने मि. मर्ज को नामित भी कर दिया परंतु मि. मर्ज के त्यागपत्र देने के कारण विद्युतीकरण का कार्य विलंबित हो गया। पुनः 1920 में मि. मर्ज अपने पार्टनर मि. मैकलेन के साथ मिलकर सर्वप्रथम बांबे-पुणे-इगतपुरी तथा मद्रास-थंवरम रूट पर विद्युतीकरण का कार्य शुरू किया और आगे बढ़ाया। जिसतरह 16 अप्रैल 1853 को पहली ट्रेन बांबे में चली थी उसकी तरह 3 फरवरी 1925 को बांबे वी.टी. से कुर्ला तक (16 मील) 1500 DC वोल्ट की पहली इलेक्ट्रिक ट्रेन बांबे प्रेसीडेंसी के गवर्नर सर लेसली के ध्वजारोहण के पष्ठचात दौड़ी थी।

1947 में इंडिया का बँटवारा हुआ। उस समय की दो बड़ी रेलवे- 1.बंगाल-असम रेलवे तथा 2.नार्थ-वेस्टर्न(जोधपुर)रेलवे के भी बँटवारे हुए। बंगाल-असम रेलवे का कुछ भाग ईस्ट पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) तथा NWR के कुछ भाग वेस्ट पाकिस्तान में चले गये। रेलवे ऐसेट्स के भी बँटवारे हुए जो निम्नवत थे-

देश	लोको	यात्री कोच	माल डिब्बे	रूट किमी.
इंडिया	7248	20166	210099	54376
पाकिस्तान	1339	4280	40221	11133

26 जनवरी 1950 को भारत के गणतंत्र दिवस के अवसर पर इंडियन रेलवे का नामकरण भारतीय रेलवे के रूप में किया गया।

जून 1950 में रेलवे बोर्ड (रेलवे बोर्ड के इतिहास पर विस्तृत चर्चा आगे है) की संस्तुति पर सभी रेलवे का विलय करके मात्र 6 जोनल रेलवे के गठन की प्रक्रिया अप्रैल, 1951 में शुरू की गयी। यद्यपि कि मैंने यह भी कहीं पढ़ा है कि भारत के आजाद होने तक छोटी बड़ी कुल 108 कंपनियाँ बन चुकी थी परंतु उसका कोई अभिलेख उपलब्ध नहीं है।

1.क-साउदर्न रेलवे (SR) - मुख्यालय मद्रास (अब चेन्नई)।

ख- स्थापना वर्ष-14.04.1951

ग- विलय किए गए रेलवेज- मद्रास रेलवे, साउथ

मराठा रेलवे, साउथ इंडियन रेलवे, मैसूर रेलवे।

घ- तत्कालीन मंडल- मद्रास, मदुरै, पालघाट, त्रिवेंद्रम, तिरुचिरापल्ली, मैसूर, बंगलौर।

ङ- वर्तमान मंडल- चेन्नई, मदुरै, पालघाट, तिरुअनंतपुरम, तिरुचिरापल्ली एवं सलेम। नया मंडल प्रस्तावित है परंतु अभी प्रचलन में नहीं है।

2. क-सेंट्रल रेलवे (CR)- मुख्यालय बांबे वी.टी. अब मुंबई।

ख- स्थापना वर्ष- 05.11.1951

ग- विलय किए गए रेलवेज- ग्रेट इंडियन पेनिनसुलर रेलवे, निजाम रेलवे, सिंधिया रेलवे, धौलपुर रेलवे।

घ- तत्कालीन मंडल- बांबे, शोलापुर, भुसावल, नागपुर, झाँसी, भोपाल, जबलपुर।

ङ- वर्तमान मंडल- मुंबई CST शोलापुर, भुसावल, नागपुर, पुणे नया मंडल

3. क- वेस्टर्न रेलवे (WR)- मुख्यालय बांबे चर्च गेट (अब मुंबई)।

ख- स्थापना वर्ष- 05.11.1951

ग- विलय किए गए रेलवेज- बांबे-बड़ौदा एवं सेंट्रल इंडिया रेलवे, सौराष्ट्रा रेलवे, राजस्थान रेलवे, जयपुर रेलवे।

घ- तत्कालीन मंडल- बांबे सेंट्रल, बड़ौदरा, रतलाम, भावनगर, राजकोट, कोटा, अजमेर, जयपुर।

ङ- वर्तमान मंडल- मुंबई सेंट्रल, बड़ौदरा, रतलाम, भावनगर, राजकोट, अहमदाबाद (नया मंडल)

4. क- नार्दन रेलवे NR- मुख्यालय नयी दिल्ली।

ख- स्थापना वर्ष- 14.04.1952

ग- विलय किए गए रेलवेज- ईस्टर्न पंजाब रेलवे, जोधपुर रेलवे का पश्चिमी पाकिस्तान बनने से बचा हुआ भाग, बीकानेर रेलवे, ईस्ट इंडिया के कुछ भाग तथा पश्चिम रेलवे का दिल्ली-रेवाड़ी फाजिल्का खंड।

घ- तत्कालीन मंडल- दिल्ली, इलाहाबाद, लखनऊ, मुरादाबाद, अंबाला, फिरोजपुर, बीकानेर, जोधपुर।

ङ- वर्तमान मंडल- दिल्ली, लखनऊ, मुरादाबाद, अंबाला, फिरोजपुर।

5. क- नार्थ-ईस्टर्न रेलवे NER- मुख्यालय गोरखपुर

ख- स्थापना वर्ष- 14.04.1952

ग- विलय किए गए रेलवेज-अवध-तिरहुत रेलवे,

- असम रेलवे का पूर्वी पाकिस्तान बनने से बचा हुआ भाग तथा पश्चिम रेलवे का कानपुर-अछनेरा खंड।
- घ-** तत्कालीन मंडल- वाराणसी, लखनऊ, इज्जतनगर, सोनपुर, समस्तीपुर।
- ङ-** वर्तमान मंडल- वाराणसी, लखनऊ, इज्जतनगर तथा थावे (नया मंडल प्रस्तावित है अभी प्रचलन में नहीं है)
- 6. क- ईस्टर्न रेलवे ER-** मुख्यालय कलकत्ता फेयरलीप्लेस
- ख-** स्थापना वर्ष- 14.04.1952
- ग-** विलय किए गए रेलवेज- ईस्ट इंडिया रेलवे, बंगाल-नागपुर रेलवे का पूर्वी पाकिस्तान बनने से बचा हुआ भाग।
- घ-** तत्कालीन मंडल- हावड़ा, सियालदह, दानापुर, धनबाद, मालदा टाउन, आसनसोल तथा मुगलसराय
- ङ-** वर्तमान मंडल- हावड़ा, सियालदह, मालदा टाउन तथा आसनसोल।
- देखा की भौगोलिक स्थिति, विकास, आवश्यकता तथा प्रशासनिक सुविधा हेतु बाद में 3 नये जोन का गठन किया गया।
- 7. क-साउथ ईस्टर्न रेलवे SER-** मुख्यालय कलकत्ता गार्डनरिच
- ख-** स्थापना वर्ष- 15.08.1955
- ग-** विलय किए गए रेलवेज-पूर्व रेलवे के बंगाल-नागपुर हिस्से को अलग करके स्वतंत्र जोन बनाया गया।
- घ-** तत्कालीन मंडल- आद्रा, चक्रधरपुर, खड़गपुर, बिलासपुर, संभलपुर, खुर्दारीड, बाल्टेयर तथा नागपुर।
- ङ-** वर्तमान मंडल- आद्रा, चक्रधरपुर, खड़गपुर, राँची (नया मंडल)
- 8. क- नाथ ईस्ट-फ्रांटियर रेलवे NFR-** मुख्यालय गौहाटी अब मालीगाँव
- ख-** स्थापना वर्ष- 15.01.1958
- ग-** विलय किए गए रेलवेज- इंडिया के बँटवारे के बाद बने पूर्वी पाकिस्तान (अब बंगलादेश) के कारण असम रेलवे का संपर्क भारत से कट गया था। अतः जनवरी 1948 में ही असम-रेल-लिंक प्रोजेक्ट बनाया गया। यह भाग बड़ी-बड़ी नदियों, पहाड़ों तथा घने जंगलों वाला होने के कारण समस्याग्रस्त था। इस प्रोजेक्ट के तैयार होने के बाद असम रेल लिंक तथा पूर्वोत्तर रेलवे के असम रेलवे को मिलाकर इस जोन का गठन किया गया।
- घ-** तत्कालीन मंडल-लम्बडिंग, अलीपुरद्वार, कटिहार तथा तिनसुकिया।
- ङ-** वर्तमान मंडल-लम्बडिंग, अलीपुरद्वार, कटिहार, तिनसुकिया तथा रंगिया (नया मंडल)
- 9. क-साउथ सेंट्रल रेलवे SCR-** मुख्यालय सिकंदराबाद
- ख-** स्थापना वर्ष- 02.10.1966
- ग-** विलय किए गए रेलवेज- सेंट्रल रेलवे तथा साउदर्न रेलवे के कुछ-कुछ हिस्सों को मिलाकर इस रेलवे का गठन किया गया।
- घ-** तत्कालीन मंडल- सिकंदराबाद, हैदराबाद, विजयवाड़ा, हुबली तथा गुंटकल।
- ङ-** वर्तमान मंडल-सिकंदराबाद, हैदराबाद, विजयवाड़ा, गुंटकल तथा नांदेड़ और गुंटूर (नये मंडल)
- उपरोक्त जोन में लगभग 36 वर्षों तक कोई बदलाव नहीं किया गया। माननीय रामबिलास पासवान जी ने अपने रेलमंत्रित्व काल में पूरे भारतीय रेलवे को पुनर्गठित कर कुल 17 जोन का गठन किया।
- 10. क-ईस्ट कोस्ट रेलवे ECoR-** मुख्यालय भुवनेश्वर
- ख-** स्थापना वर्ष-08.08.1996
- परंतु 01.04.2003 से प्रभावी
- ग-** विलय किए जाने मंडल- साउथ ईस्टर्न रेलवे के तीन मंडलों-खुर्दारीड, संभलपुर तथा वाल्टेयर को अलग कर स्वतंत्र जोन बनाया गया।
- घ-** वर्तमान मंडल-खुर्दारीड, संभलपुर और वाल्टेयर।
- 11. क-नार्थ सेंट्रल रेलवे NCR-** मुख्यालय इलाहाबाद
- ख-** स्थापना वर्ष-28.08.1996
- परंतु 01.04.2003 से प्रभावी।
- ग-** विलय किए गए मंडल-उत्तर रेलवे के इलाहाबाद मध्य रेलवे के झाँसी मंडल को अलग करके तथा नये मंडल आगरा का गठन करके।
- घ-** वर्तमान मंडल- इलाहाबाद, झाँसी, आगरा (नया मंडल)
- 12. क- ईस्ट सेंट्रल रेलवे ECR-** मुख्यालय हाजीपुर
- ख-** स्थापना वर्ष- 08.09.1996
- परंतु 01.09.2002 से प्रभावी

ग- विलय किए गए मंडल- पूर्वोत्तर रेलवे के दो मंडलों सोनपुर तथा समस्तीपुर और पूर्व रेलवे के तीन मंडलों दानापुर, धनबाद तथा मुगलसराय का विलय करके।

घ- वर्तमान मंडल- सोनपुर, समस्तीपुर, दानापुर, धनबाद और मुगलसराय।

13.क-नार्थ वेस्टर्न रेलवे NWR- मुख्यालय जयपुर।

ख- 17.10.1996 परंतु 01.10.2002 से प्रभावी

ग- विलय किए गए मंडल- उत्तर रेलवे के दो मंडलों जोधपुर तथा बीकानेर और पश्चिम रेलवे के दो मंडलों अजमेर तथा जयपुर का विलय करके।

घ- वर्तमान मंडल- जोधपुर, बीकानेर, अजमेर तथा जयपुर

14.क-साउथ वेस्टर्न रेलवे SWR- मुख्यालय हुबली

ख- स्थापना वर्ष-01.11.1996

परंतु 01.04.2003 से प्रभावी।

ग-विलय किए गए मंडल-साउथ सेंट्रल के हुबली मंडल तथा साउदर्न रेलवे के दो मंडलों बंगलौर तथा मैसूर का विलय करके।

घ- वर्तमान मंडल- हुबली, बंगलौर और मैसूर।

15.क- साउथ ईस्ट सेंट्रल रेलवे SECR- मुख्यालय बिलासपुर

ख- स्थापना वर्ष- 20.09.1996

परंतु 01.04.2003 से प्रभावी।

ग- विलय किए गए मंडल- साउथ ईस्टर्न रेलवे के दो मंडलों नागपुर और विलासपुर तथा एक नये मंडल रायपुर का गठन करके।

घ-वर्तमान मंडल- नागपुर, विलासपुर और रायपुर।

16.क-वेस्ट सेंट्रल रेलवे WCR-मुख्यालय जबलपुर।

ख-स्थापना वर्ष- 08.12.1996

परंतु 01.04.2003 से प्रभावी।

ग- विलय किए गए मंडल- सेंट्रल रेलवे के दो मंडलों जबलपुर तथा भोपाल और वेस्टर्न रेलवे के कोटा मंडल को मिलाकर।

घ- वर्तमान मंडल- जबलपुर, भोपाल और कोटा।

कोंकण रेलवे- जहाँ एक तरफ पूर्व में बंगाल की खाड़ी से सटे उड़ीसा एवं आंध्र प्रदेश के पूर्व तटीय क्षेत्र में अंग्रेजों ने कलकत्ता से मद्रास तक रेलवे का निर्माण किया था वहीं दूसरी तरफ पश्चिम में अरब सागर से

सटे कोंकण क्षेत्र में मुंबई से मंगलौर तक न ही रोड, न ही रेल रोड का विकास किया था। मुंबई से मंगलौर की यात्रा पुणे-बंगलौर के रास्ते की जाती थी। आजादी के बाद इस रूट का रेल सर्वे किया गया।

1964 में मुंबई से मंगलौर के बीच दिवा से पनवेल तक रेल कार्य शुरू किया गया। 1996 में इसका विस्तार अष्टा तक कर दिया गया परंतु राजनीतिक, भौगोलिक, बाढ़, भू-स्खलन, दलदल एवं घने जंगल होने के कारण रेल कार्य स्थगित रहा। अतः मुंबई से सीधे मंगलौर को जोड़ने के मकसद से 1970 में NH-17 का निर्माण किया गया। 1990 के दशक में देश के दो बड़े नेता श्री मधु दंडवते एवं जार्ज फर्नांडीज के प्रयास से इस खंड पर 'रोहा से ठोकुर' तक रेल कार्य में गति आई। 1989 में जार्ज फर्नांडीज ने कोंकण रेलवे कार्पोरेशन लिमिटेड KRCL नामक प्राइवेट फर्म का गठन किया तथा इसके मैनेजिंग डायरेक्टर मण्णाहूर रेल इंजीनियर ई.श्रीधरन जी को नियुक्त किया।

KRCL का मुख्यालय बेलापुर, नवी मुंबई में बनाया गया तथा 15 सितंबर, 1989 को इसकी आधारशिला रखी गई। श्रीधरन जी ने लगभग 740 किमी. के इस खंड को महाद, रत्नागिरि, कुदाल, पड़जी, करवार एवं उदापि नामक लगभग 100-100 किलोमीटर के छोटे-छोटे सात खंडों में विभक्त कर प्रत्येक खंड को एक-एक चीफ इंजीनियर को सौंप दिया।

अगस्त 1997 में रोहा से मंगलौर तक सिंगल लाइन, नॉन इलेक्ट्रीफाइड, एंटीकोलाइड डिवाइस युक्त बी.जी. रूट बनकर तैयार हुआ। मजोरदा तथा मरगांव के बीच डबल लाइन की तरह दो पैरेलल ट्रैक हैं जिसमें से एक ट्रैक कोंकण रेलवे की तथा दूसरी साउथ सेंट्रल रेलवे की है। इस रूट पर कारवूड नामक 6.5 किमी. देश की सबसे लंबी सुरंग सहित कुल 91 सुरंगें तथा जूरी नदी पर 1319 मीटर (4327 फीट) लंबे पुल सहित कुल 200 पुल हैं। पिछले पाँच दशकों में KRCL विध्वंस का सबसे बड़ा प्रोजेक्ट रहा है।

26 जनवरी 1998 को भारत सरकार ने इसे देश को समर्पित किया और वर्तमान में यह रेलवे का 17वाँ जोन है। कोंकण रेलवे में अन्य जोन की तरह कोई मंडल नहीं है। इसके दो रिजनल मुख्यालय प्रथम रत्नागिरि में (महाराष्ट्र) जिसका अधिकार क्षेत्र रोहा से

रावतवाड़ी तक तथा दूसरा करवार में (कर्नाटक) है जिसका अधिकार क्षेत्र परनैम (गोवा) से सुरथकल (कर्नाटक) तक है।

रेलवे बोर्ड का गठन

सन 1901 में सर थॉमस राबर्टसन कमिटी ने रेलवे बोर्ड के गठन के लिए प्रस्ताव रखा था। सन् 1905 में लार्ड कर्जन की सरकार ने रेलवे बोर्ड का गठन किया। तब रेलवे कामर्स एंड इंड्रीज विभाग के अधीन थी। उस समय बोर्ड में कुल चार सदस्य नियुक्त हुए-

1. एक चेयरमैन- जो रेलवे आफिसर थे।
2. एक मैनेजर- जो इंग्लैंड के नॉन-रेलवे नामित व्यक्ति थे।
3. दो एजेंट- GIPR एवं EIR कंपनियों से एक-एक व्यक्ति थे।

एकवर्थ कमिटी की संस्तुति के बाद 1 अप्रैल 1924 को रेलवे एवं रेलवे बोर्ड को स्वतंत्र किया गया। इस समय बोर्ड में मामूली संशोधन करते हुए सदस्यों की संख्या 4 ही रखी गई थी

1. एक आयुक्त- तकनीकी और पालिसी मामलों हेतु।
2. एक वित्त आयुक्त- वित्त संबंधी कार्यों के लिए।
3. दो सदस्य-

प्रथम- 'वे एंड वर्क्स' प्रोजेक्ट तथा स्टोर्स मामलों हेतु।

द्वितीय- सामान्य प्रशासन, स्टाफ एवं ट्रैफिक मामलों हेतु।

1929 में एक सदस्य का पद सृजित किया गया जो तीसरे सदस्य बने वे पूर्णतः सामान्य प्रशासन एवं स्टाफ मामले देखने लगे। इसप्रकार दूसरे सदस्य के पास केवल ट्रैफिक (ट्रांसपोर्टेशन एवं कामर्शियल) विभाग ही रह गए। पहला भारतीय सदस्य होने का गौरव श्री फ्रैंक-डिसूजा के नाम है।

आजादी के बाद 1951 में मुख्य आयुक्त के पद को समाप्त कर यह निर्णय लिया गया कि वर्तमान तीन सदस्यों में से वरिष्ठतम चेयरमैन का भी कार्य भार देखेंगे। इसप्रकार कुल चार सदस्य ही रह गए। अक्टूबर 1954 में पुनः निर्णय लिया गया कि 'चेयरमैन रेलवे बोर्ड' स्वतंत्र होंगे जो रेलवे के तकनीकी और पालिसी से संबंधी कार्य देखेंगे। साथ ही एक सदस्य का पद भी सृजित किया गया चूँकि सदस्य यातायात, सदस्य इंजीनियरिंग, सदस्य कार्मिक तथा एक वित्त आयुक्त पहले से ही थे इसलिए इस नये सदस्य को संभवतः सदस्य यांत्रिक बनाया गया होगा। 1988 में पाँचवे सदस्य का पद सृजित कर इन्हें सदस्य विद्युत एवं सिगनल दूर-संचार का नाम दिया गया। इसतरह वर्तमान में रेलवे बोर्ड में एक चेयरमैन, एक वित्त आयुक्त तथा कुल पाँच सदस्य- कार्मिक, यातायात, इंजीनियरिंग, यांत्रिक, विद्युत तथा सिगनल एवं दूर-संचार के साथ दो महानिदेशक स्वास्थ्य एवं आर.पी.एफ. पदासीन हैं।

मुख्य गाड़ी नियंत्रक
सेंट्रल कंट्रोल, गोरखपुर
संपर्क: 9794840945

राजभाषा नियम 1976 यथा संशोधित 1987 के उप नियम 6 हिंदी और अंग्रेजी के प्रयोग

अधिनियम की धारा 3 के उपधारा (3) में निर्दिष्ट सभी दस्तावेजों के लिए हिंदी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व होगा कि वे यह सुनिश्चित कर लें कि ऐसे दस्तावेज हिंदी और अंग्रेजी दोनों में तैयार किए जाते हैं, निष्पादित किए जाते हैं और जारी किए जाते हैं।

◆ लेख ◆ श्रद्धा का प्रकटीकरण आवश्यक

सुनील कुमार

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।

श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः॥

हे भारत! सब लोगों की श्रद्धा अपने-अपने सत्त्व के अनुसार अर्थात् प्रकृष्ट स्वभाव के अनुसार होती है। मनुष्य श्रद्धामय है, जिसकी जैसी श्रद्धा रहती है, वह वैसा ही हो जाता है।

आज सर्वत्र अनैतिकता का बोलबाला है, जहाँ स्वार्थी और धूर्तों का ही बाहुल्य है। सच्चे और सत्पात्रों का अत्यंत अभाव सा हो गया है। आज न तो तीव्र उत्कंठा रखने वाले शिष्य हैं और न सच्चा पथ-प्रदर्शित करने वाला चरित्रवान, तपस्वी, दूरदर्शी और अनुभवी गुरु। ऐसी स्थिति में गुरु-शिष्य संबंध की महत्वपूर्ण आवश्यकता पूरा हो पाना कठिन हो रहा है। शिष्य चाहते हैं कि उन्हें कुछ करना ही न पड़े और गुरु जी प्रसन्न होकर सब कुछ दिला दें। गुरुओं की मनोवृत्ति भी यह है कि शिष्यों को उल्लू बनाना और उनसे आर्थिक लाभ उठाया जाए। उनकी अंध श्रद्धा को दुहा जाए। ऐसे जोड़े-‘लोभी गुरु लालची चेला, दुहूँ नरक में ठेलम ठेला।’ ऐसे ही लोगों की अधिकता के कारण यह महान गुरु-शिष्य संबंध शिथिल सा हो गया है। तभी तो किसी को गुरु बनाना एक आडंबर में फँसना और किसी को शिष्य बनाना एक प्रकार का झंझट मोल लेना समझा जाता है। दोनों ही पक्ष संबंध जोड़ते हुए कतराते हैं। फिर भी आज की विषम परिस्थिति में भारतीय धर्म की मूलभूत आधारशिला का महत्व कम नहीं हो सकता है।

कीचड़ में फँसे हुए हाथी को दूसरा हाथी ही निकालता है। पानी में बहते जाने वाले को कोई तैरने वाला ही पार निकालता है। राजा की सहायता करना किसी राजा को ही संभव है। एक आत्मा में ब्रह्म-ज्ञान जाग्रत करना, उसे ब्राह्मीभूत, ब्रह्म-परायण बनाना केवल उसी के लिए संभव है जो स्वयं ब्रह्म-तत्त्व से ओत-प्रोत हो। जिसमें स्वयं अग्नि होगी वही दूसरों को प्रकाश और गर्मी दे सकेगा। अग्नि के आकर्षक से चित्र से न तो प्रकाश ही मिल सकता है और न ही गर्मी।

कई व्यक्ति साधु-महात्माओं को भेष बना लेते हैं, पर उनमें ब्रह्म-तेज की अग्नि नहीं होती। जिसमें साधुता हो

वही महात्मा है, जिसको ब्रह्म का ज्ञान हो वही ब्राह्मण है। जिसने अपने मन को रागों से बचा लिया है वही वैरागी है। जो स्वाध्याय में, मनन में लीन रहता है वही मुनि है। जिसने अहंकार को, मोह-ममता को त्याग दिया है वही संन्यासी है। जो तप में प्रवृत्त है वह तपस्वी है। ब्रह्म-परायण होने के लिए कोई भेष बनाने की आवश्यकता नहीं है, गुण-कर्म होना चाहिए। सादा वस्त्र, सादा वेश-भूषा और सादा जीवन में ही महानतम आत्मिक साधना हो सकती है। आज सादा जीवन में ही आत्मिक विकास की प्रबल संभावना है। मुख्य चीज तो श्रद्धा का प्रकटीकरण है जिसकी अत्यंत आवश्यकता है। श्रद्धा के कारण ही मिट्टी, पत्थर और धातु की मूर्तियाँ हमारे लिए देव बन जाते हैं।

एकलव्य भील मिट्टी का द्रोणाचार्य बनाकर उससे बाण-विद्या सीखना प्रारंभ कर दिया और उस मूर्ति ने उस भील को बाण-विद्या में इतना पारंगत कर दिया था कि उसने अपने बाणों से कुत्ते का मुँह सी दिया था। इस निपुणता से द्रोणाचार्य के शिष्यों को भी ईर्ष्या हुई थी। स्वामी रामानंद के मना करते रहने के बावजूद भी कबीर उनके शिष्य बन बैठे। कबीर को अपनी तीव्र श्रद्धा के कारण वह लाभ प्राप्त हुआ जो उनके विधिवत दीक्षित शिष्यों को प्राप्त नहीं हो सका था। श्रद्धा के अभाव में किसी महापुरुष के साथ दिन-रात रहने पर भी कोई लाभ नहीं मिल सकता जबकि श्रद्धा होने पर दूरस्थ व्यक्ति भी लाभ उठा सकता है। आंतरिक श्रद्धा व्यवहार में प्रकट होकर जब तक साधक के मन को परिपुष्ट नहीं करती तब तक उसे मूर्त रूप नहीं दिया जा सकता। धार्मिक कर्मकांड, दान, पुण्य, व्रत, उपवास, हवन, पूजन, कथा, कीर्तन आदि सब प्रयोजन आंतरिक श्रद्धा को विकसित करने का साधन मात्र है।

प्राचीन काल में यह नियम था कि शिष्य जब गुरु के पास जाता था तो कुछ वस्तु भेंट के लिए अवश्य ही ले जाता था। चाहे वह स्वल्प मूल्य की ही क्यों न हो? समिधा की लकड़ी हाथ में लेकर शिष्य गुरु के सम्मुख जाते थे, इसे ‘समित्पाणि’ कहते थे। ये समिधाएँ उनकी श्रद्धा के प्रतीक मात्र थीं। उल्लेखनीय है कि शुकदेव जी महाराज राजा जनक के पास ब्रह्म-विद्या की

शिक्षा लेने गए, तो राजा जनक मौन रहे। उन्होंने एक शब्द भी उपदेश नहीं दिया। शुकदेव जी वापस लौट आए। बाद में उन्हें ध्यान में आया कि भले ही मैं संन्यासी हूँ और राजा जनक गृहस्थ हैं। परंतु जब मैं उनसे कुछ सीखने गया था, तो अपनी श्रद्धा का प्रतीक अवष्टय साथ लेकर जाना चाहिए था। दूसरी बार शुकदेव जी हाथ में समिधा लेकर नम्र भाव से उपस्थित हुए तो राजा जनक ने उनको विस्तारपूर्वक ब्रह्म का रहस्य समझाया।

भगवान भी मात्र श्रद्धा के ब्रह्मपात्र में फँसकर भक्त के गुलाम बनते हैं। ईश्वर को परास्त करने का एटम बम श्रद्धा ही है। इस महानतम दैवी सम्मोहन अस्त्र बनाने और चलाने का प्रारंभिक अभ्यास भी गुरु से ही किया जाता है। जब यह शस्त्र भलीप्रकार हाथ में आ जाता है तो

उससे साधक भगवान को वश में कर सकता है। तभी तो गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी अपने 'रामचरितमानस' में श्रद्धा और विष्णुवास स्वरूप श्री पार्वती जी और श्री शंकर जी की वंदना करते हुए कहते हैं-

‘भवानीशंकरौ वंदे श्रद्धा विष्णुवासरूपिणौ।

याभ्यां बिना न पश्यंति सिद्धाः स्वांतःस्थमीश्वरम्॥’

वस्तुतः श्रद्धा के बिना अंतःकरण में स्थित ईश्वर को देख पाना संभव नहीं हो सकता।

वरिष्ठ अनुवादक
केंद्रीय हिंदी अनुभाग
मुकाधि कार्यालय, गोरखपुर
संपर्क: 9794840672

तकनीकी रेल विषयों पर हिंदी में मौलिक लेखन पुस्तकों के लिए 'लाल बहादुर शास्त्री तकनीकी मौलिक लेखन पुरस्कार योजना (आधार वर्ष 2014)

रेलों से संबंधित तकनीकी विषयों पर मूल रूप से हिंदी में पुस्तक लेखन को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से रेल मंत्रालय (रेलवे बोर्ड) की उपर्युक्त योजना लागू है।

इस योजना के अंतर्गत प्रतिवर्ष निम्नलिखित तीन नकद पुरस्कार दिए जाने की व्यवस्था है:-

प्रथम पुरस्कार (एक) : ₹ 15, 000/-

द्वितीय पुरस्कार (एक): ₹ 7, 000/-

तृतीय पुरस्कार (एक) : ₹ 3, 300/-

इस योजना की मुख्य-मुख्य शर्तें निम्नलिखित हैं:-

1. पुस्तक मौलिक रचना होनी चाहिए अर्थात् वह किसी अन्य भाषा में लिखी गई पुस्तक का अनुवाद न हो।
2. जिस मौलिक पुस्तक को इस पुरस्कार के लिए प्रस्तुत किया जाए वह पुस्तक पुरस्कार वर्ष से पिछले तीन वर्षों में लिखी गई हो अथवा प्रकाशित हुई हो।
3. पुस्तक का विषय रेल संचालन या रेल प्रबंधन से संबंधित होना चाहिए।
4. जिन पुस्तकों को इस पुरस्कार योजना के लिए पहले प्रस्तुत किया जा चुका हो उन्हें दोबारा प्रस्तुत नहीं किया जाए।
5. जिन पुस्तकों को भारत सरकार या राज्य सरकार या संघ शासित प्रदेश के प्रशासन की किसी योजना के अधीन एक पुरस्कार दिया जा चुका होगा। उन्हें इस योजना में शामिल नहीं किया जाएगा।
6. प्रतियोगी को पुस्तक की दो मुद्रित अथवा दो टंकित प्रतियाँ निर्धारित आवेदन पत्र के साथ भेजनी होगी।
7. एक लेखक पुरस्कार योजना के लिए एक से अधिक प्रविष्टियाँ भेज सकते हैं। यद्यपि, किसी वर्ष विशेष में, एक लेखक को सिर्फ एक पुरस्कार दिया जाएगा।
8. पुस्तक सामान्यतः 100 पृष्ठों से कम नहीं होनी चाहिए। तथापि इससे छोटी पुस्तकों पर निर्णायक मंडल अपने विवेकानुसार विचार कर सकता है।

तकनीकी रेल विषयों पर हिंदी में मौलिक लेखन 'लाल बहादुर शास्त्री तकनीकी मौलिक लेखन पुरस्कार योजना' आधार वर्ष 2014 के लिए प्रविष्टियाँ भेजने की अंतिम तिथि 29 अप्रैल 2015 है।

(रेलवे बोर्ड में प्राप्त होने की अंतिम तिथि 29 मई 2015)

(प्राधिकार: रेलवे बोर्ड का दिनांक 12.01.2015 का पत्रांक हिंदी-2015/प्र-7/2)

◆ यात्रा वृष्ठांत ◆
मेरी बछ्मनगंज यात्रा
ष्ठायाम बाबू शर्मा

एक विवाहोत्सव के निमंत्रण पर हमें, मतलब हम पाँच दोस्तों यानी दिलीप, विकास, राजकुमार, हेमंत और मुझे बछ्मनगंज जाने का अवसर प्राप्त हुआ। हमने प्लान बनाया कि हम अपने निजी साधन से बछ्मनगंज जाएँगे, मेजबान को कष्ट नहीं देंगे। अपना साधन होगा तो मस्ती भी अपने मन की रहेगी। कोई बंदिष्टा नहीं रहेगी। इसके लिए हमने मुहल्ले के ही भाड़े पर गाड़ी चलाने वाले गाड़ी मालिक सह ड्राइवर परवेज आलम से बात की। परवेज भाई काफी मिलनसार और खुशमिजाज व्यक्ति हैं। हमने इससे पूर्व भी कई बार उनकी गाड़ी का उपयोग किया हुआ है। इनके साथ सफर का पता ही नहीं चलता। तय हुआ कि हम सुबह दस बजे तक यहाँ से यानी अपने घर, हनुमंतनगर कालोनी, पादरी बाजार से बछ्मनगंज के लिए चल देंगे। निश्चित समय पर गाड़ी हमारे दरवाजे पर लग गई, पर हमारे मित्र राजकुमार और विकास को सजने-सँवरने में टाइम लग रहा था। इतना समय तो औरतें भी नहीं लेती हैं। लग रहा है यही लोग दुल्हा बनेंगे क्या? किसी तरह होते-हवाते 10.30 बजे हम यहाँ से निकल सके। अरे! एक बात तो मैं बताना भूल ही गया कि बछ्मनगंज हमारे घर से मात्र 65 किमी. की दूरी पर है यानी कुल मिलाकर हद से हद डेढ़-दो घंटे का सफर है। फिर इसके लिए हमें सुबह ही क्यों निकलना पड़ा, जबकि बारात तो शाम को निकलनी है। इसका कारण भी हमारे मित्र विकास भाई रहे। प्रस्थान की पूर्व संध्या पर हम सब मित्रगण पूर्व की भाँति इकट्ठा हुए और अगले दिन के कार्यक्रम पर विचार-विमर्श करने लगे तो इस दौरान विकास भाई ने कहा कि हम आपको शाम को चार-पाँच बजे के करीब कैपियरगंज चौराहे पर मिलेंगे और वहीं से आप लोगों को ज्वाइन करेंगे। पूछा गया कि ऐसा क्यों? उन्होंने कहा कि हमें सुबह ही आवश्यक काम से अपनी ससुराल मेहदावल जाना है। मेहदावल कैपियरगंज से 15 किमी. दक्षिण दिशा में है। हमारे ग्रुप के सबसे हँसोड़ और चुलबुले दिलीप ने चुटकी लेते हुए कहा कि हम सब भी तो आपके साथ ही आपकी ससुराल चल

सकते हैं। बेचारे विकास! क्या कहे। कोई चारा नहीं था। पिंड छुड़ाएँ भी तो कैसे अपने इन नामुराद दोस्तों से? अंत में उन्हें हथियार डालना ही पड़ा। तय हुआ कि साथ-साथ सभी पहले विकास भाई की ससुराल मेहदावल चलेंगे। दोपहर में उनके ससुराल में छेनेगी और शाम को बछ्मनगंज की बारात में।

करते-कराते, होते-हवाते हम सब 10.30 बजे अपने निवास से बछ्मनगंज की ओर निकल पड़े। बछ्मनगंज गोरखपुर-सोनौली सड़क मार्ग (एन.एच. 29) पर आनंदनगर के निकट है। वैसे बछ्मनगंज पूर्वोत्तर रेलवे के लखनऊ मंडल का एक छोटा स्टेशन भी है। हम चाहते तो पैसंजर ट्रेन से भी बछ्मनगंज जा सकते थे, लेकिन यह हमें सूट नहीं कर रहा था। इसीलिए हम लोगों ने सड़क मार्ग का रास्ता चुनना बेहतर समझा। परवेज भाई ने गोरखपुर जेल रोड से बरगदवाँ बाईपास पकड़ा और सीधे बरगदवाँ जाकर गोरखपुर-सोनौली मार्ग पर आ गए। रास्ते में मानीराम से आगे परवेज भाई ने कहा- साहब, यहाँ का एक ढाबा अपनी चाय के लिए बड़ा मशहूर है। जब भी हम सवारी लेकर निकलते हैं यहाँ की चाय जरूर पीते हैं। हमलोगों ने कहा- चलो, फिर वहीं रोकना। बाकई उस ढाबे की चाय काफी स्वादिष्ट रही। वैसी स्वादिष्ट चाय बहुत कम ही पीने को मिलती है। हमलोगों ने वहाँ चाय तो पी ही, साथ में छोले-टिक्की का भी आनंद लिया। खाने-पीने के बाद हमारा आगे का सफर शुरू हुआ। परवेज भाई एक कुश्ताल ड्राइवर हैं। वह सऊदी अरब हो आए हैं। वहीं की कमाई से उन्होंने अपनी खुद की टाटा सूमो खरीदी, मुहल्ले में घर बनाया और आज परिवार के साथ रह रहे हैं। मुहल्ले वाले सब यही जानते हैं कि परवेज भाई अरब से बहुत कमा कर आए हैं। पर अंदरखाने की बात वही जानें। परवेज भाई ने बताया कि वे सऊदी अरब में भी ड्राइवरी किया करते थे। ग्लोबों और उनकी बेगमों-बच्चों की गाड़ी चलाते थे। रास्ते में हमलोगों द्वारा कुरेदने पर उन्होंने अपने अरब प्रवास के अनुभव बताए।

परवेज भाई ने कहा- साहब, अपने घर में मिलने वाली आधी रोटी किसी अजनबी देश में मिलने वाली

पूरी रोटी से बेहतर है। उन्होंने कहा कि सऊदी अरब में भारतीय कामगार जानवरों की तरह खरीदे-बेचे जाते हैं। जो जानवरों की तरह हाड़-तोड़ मेहनत-मशक्कत करते हैं। वे कमा-कमा कर घर भेजते हैं और घर वाले खुश होते हैं कि हमारा पति-बेटा-भाई अरब में कमा रहा है, पर इसकी कीमत उसे किस तरह चुकानी पड़ती है यह तो वो ही जानते हैं। परवेज भाई ने कहा कि वे अपने दोस्तों-रिश्तेदारों से कर्ज लेकर एजेंट के माध्यम से अरब गए थे। वे खुशकिस्मत रहे कि उन्हें वहाँ ड्राइवरी का काम मिला और उनका मालिक बहुत दयालु था। पर सभी मालिक इतने दयालु नहीं होते हैं। वहाँ जाने पर उन्हें पता चला कि उनके दूर के रिश्ते का बहनोई भी ड्राइवरी के लिए यहाँ आया है तो वे उनके पते पर गए तो देखा कि उनका कथित बहनोई पसीने से तर-बतर खजूर के पेड़ पर चढ़ा खजूर तोड़ रहा था। पूछने पर उन्होंने भीगी आँखों, रुधे कंठ से बताया कि यहाँ रहने का कोई मतलब ही नहीं है। मुझे वापस भारत जाना है। मैं यहाँ भूखा रहकर दिन-दिन भर पेड़ काटता हूँ या खजूर तोड़ता हूँ। वहाँ (भारत में) मैं आम के पेड़ पर भी नहीं चढ़ पाता था और यहाँ खजूर के सीधे पेड़ पर चढ़ना पड़ता है। शुरू के कुछ दिन तक तो मैंने हाजियों से बतौर टिप मिलने वाली एक रोटी प्रतिदिन पर गुजारा किया है। एजेंट ने 15 से 20 हजार रुपए तक मासिक वेतन का आश्वासन दिया था, परंतु दुष्ट मालिक ने अभी तक कुछ नहीं दिया गया है, बेगारी कराता है। पासपोर्ट भी जब्त कर लिया है। मैंने कोशिश की कि मेरा पासपोर्ट मुझे वापस मिल जाए, लेकिन जब भी पासपोर्ट मांगता हूँ, मारता-पीटता है और फिर सजा के तौर पर 14 से 15 घंटे तक काम लेता है। एशिया से, विशेष रूप से भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश से, वहाँ पहुँचने वाले हजारों लोग जानवरों की तरह खरीदे-बेचे जाते हैं। पासपोर्ट जब्त कर लिए जाने के कारण बिना पासपोर्ट के वे असहाय हैं। परवेज भाई की रामकहानी सुनकर मेरे मन ने कहा- छयाम, दूर के ढोल सुहावने होते हैं। हमें लगता है कि फलों व्यक्ति विदेश कमाने गया, पैसा भेजता है। किसी ने यह नहीं सोचा कि वह वहाँ कैसे रहता होगा, क्या खाता होगा। परवेज भाई के अनुभव ने मन विचलित कर दिया।

परवेज भाई की बातों में हम इतने तल्लीन हो

गए कि पता ही नहीं चला कि कब कैपियरगंज आ गया। कैपियरगंज माननीय श्री फतेहबहादुर सिंह जी का विधानसभा क्षेत्र है, जो कि उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री स्व. वीरबहादुर सिंह जी के सुपुत्र हैं। फतेहबहादुर सिंह जी की धर्मपत्नी श्रीमती साधना सिंह जी हमारे गोरखपुर जिला पंचायत की अध्यक्ष हैं। हाल ही में उन्होंने भाजपा ज्वाइन किया है। कैपियरगंज गोरखपुर का विकसित विधानसभा क्षेत्र है। यहाँ की पक्की सड़कें, बिजली आपूर्ति, पेयजल व्यवस्था इसकी समृद्धि का प्रतीक है। कैपियरगंज से दक्षिण करीब 15 किमी. की दूरी पर मेहदावल रोड पर सुनौरा गाँव में हमारे मित्र विकास भाई की ससुराल है। हमारा पहला पड़ाव वहीं होना है और दुपहरिया भी वहीं छननी है। खैर हम सुनौरा गाँव पहुँचे। हमारी अगवानी के लिए स्वयं विकास भाई के बड़े साले साहब बाबू मार्कंडेय सिंह जी मौजूद थे। बाबू मार्कंडेय सिंह रौब-दाब व्यक्तित्व वाले दिखे। साथ ही वह बड़े हँसमुख भी थे। दो-तीन घंटे कैसे बीत गए, पता ही नहीं चला। चाय-नाश्ते का दौर चला। हम मित्रों ने गाँव का थोड़ा चक्कर मारने का विचार किया। गाँव घूमने पर हमने देखा कि यह एक विकसित गाँव है। इस गाँव में हिंदी-अंग्रेजी माध्यम के दो इंटर कालेज, एक महाविद्यालय तथा क्षेत्र के युवाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण देने के लिए एक आई.टी.आई. भी है। महाविद्यालय में सभी विषय पढ़ाए जाते हैं। एक इंटर कालेज तो बाबू मार्कंडेय सिंह का स्वयं का है। इनका एक ईंट-भट्ठा भी चलता है। कुल मिलाकर पैसे वाले व्यक्ति हैं बाबू मार्कंडेय सिंह जी। अपनी पारंपरिक क्षत्रिय गान-श्रौकत को निभाते हुए उन्होंने हमारी आवभगत के लिए कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी। हमने भी छककर ससुराल का माल काटा। हमारे मित्र की ससुराल तो हमारी ससुराल। खाते-पीते दोपहर के दो बज गए। हम लोगों ने ससुराल में ज्यादा देर तक रुकना उचित नहीं समझा। क्योंकि जितनी देर हम वहाँ रहेंगे, मार्कंडेय बाबू अपना सारा जरूरी काम-काज छोड़कर हमारी आवभगत में ही लगे रहेंगे।

इस समय दोपहर के दो बज रहे थे। अभी भी हमलोगों के पास काफी समय बचा था। गोरखपुर से बारात को ग्राम चार बजे निकलना था। अब क्या किया जाए। इसी उधेड़-बुन थे कि राजकुमार भाई ने ही सुझाया कि बल्लमनगंज

के रास्ते में ही लेहड़ा-माई का दरबार पड़ता है। क्यों न वहाँ भी हो लिया जाए। लेहड़ा माई मंदिर के बारे में कहा जाता है कि यह मंदिर ईसा पूर्व छठीं शताब्दी से ही जन-आस्था का केंद्र रहा है। गौतम बुद्ध के जन्म के समय (लगभग 563 ईसा पूर्व) से ही इस मंदिर के संबंध में पौराणिक व ऐतिहासिक संदर्भ मिलने लगे थे। उस समय के कोलिय गणराज्य के अधीन आने वाला यह क्षेत्र पुरातात्विक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। उपलब्ध बौद्ध साक्ष्यों के अनुसार गौतम बुद्ध की माता माया देवी कोलिय गणराज्य की कन्या थीं। ऐसे में बुद्ध का बाल्यकाल इन्हीं क्षेत्रों में व्यतीत हुआ। फरेंदा तहसील मुख्यालय से महज आठ किमी. की दूरी पर स्थित लेहड़ा देवी के संबंध में कई किंवदंतियाँ प्रचलित हैं। पौराणिक संदर्भों के अनुसार इस मंदिर की स्थापना पांडवों ने अज्ञातवास के समय की थी। मान्यता के अनुसार धर्मराज युधिष्ठिर ने इसी स्थान पर यक्ष के प्रष्ठों का सही उत्तर देकर अपने चारों भाइयों को पुनर्जीवित किया था। बाद में पाँचों भाइयों ने यहाँ पीठ की स्थापना कर पूजा अर्चना प्रारंभ की। ऐतिहासिक तथ्यों पर गौर करें तो चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी अपने यात्रा वृत्त में इस देवी-स्थल का उल्लेख किया है। वार्षिक व श्रावदीय नवरात्र में यहाँ आस्था का सैलाब उमड़ता है। हम सबने भी माता जी की पवित्र भूमि पर कुछ पल बिताए। स्मृति-स्वरूप हमने कुछ फोटो खींचे और खिंचवाए। शाम के चार बजे तक हम माता के दरबार में रहे। उसके पष्ठचात हम फिर अपने गंतव्य ब्रह्मनगंज की ओर निकल पड़े।

ब्रह्मनगंज वहाँ से लगभग 14 किमी. की दूरी पर है। रास्ते भर हरे-भरे खेत-खलिहान, गाँव देखते-देखते हम साढ़े चार-पौने पाँच के करीब ब्रह्मनगंज कस्बे में प्रवेश कर गए। समस्या थी ठहरा कहाँ जाए। सोचा गया कि चलो ब्रह्मनगंज रेलवे स्टेशन ही हो आया जाए, वहीं

फ्रेष्ठ भी हो लिया जाएगा। परवेज भाई ने गाड़ी स्टेशन के समीप पार्क की। हम सभी स्टेशन मास्टर से मिले और उनको अपना परिचय दिया। हम सभी मुख्यालय के वरिष्ठ रेल कर्मचारी हैं, यह जानकर उन्होंने हमारा स्वागत करते हुए हमें वेटिंगरूम में रुकने के लिए कहा। छोटा स्टेशन होने के कारण वेटिंगरूम प्रायः बंद ही रहता था। इसलिए उसमें सीलनभरी अजीब सी दुर्गंध आ रही थी। हम सबने वेटिंगरूम की जगह प्लेटफार्म पर ही टहलकर समय काटना उचित समझा। छोटा स्टेशन होने के नाते यहाँ केवल पैसेंजर गाड़ियों का ही ठहराव रहता है।

सवा पाँच बजे के करीब हम सबने कन्यापक्ष के घर की ओर प्रस्थान किया। हमें जनवासे में ले जाया गया। बारात से पहुँचने वाले हम पाँच पहले बराती थे। आवभगत हुई। निश्चित समय पर बारात आई और गाजे-बाजे के साथ हम कन्यापक्ष के घर की ओर चल पड़े। द्वार पूजा हुआ, अन्य वैवाहिक कार्यक्रम हुए। हम सब खा-पीकर पुनः घर वापसी के लिए परवेज भाई के हवाले हो गए। लौटते समय रास्ते में काफी कोहरा मिला। पर परवेज भाई दक्ष ड्राइवर हैं, आखिर हों भी क्यों न, सऊदी अरब रिटर्न जो हैं। हँसते-गाते अगली यात्रा की प्लानिंग करते हुए साढ़े बारह-एक बजे के करीब हम घर वापस आ गए। आज भी हमें ब्रह्मनगंज यात्रा की एक-एक घटना याद आती हैं तो मित्रमंडली सहित किसी अन्य यात्रा पर जाने का मन लालायित हो उठता है।

वरिष्ठ अनुवादक
राजभाषा विभाग/मुख्यालय
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क: 09794840674

जीत की खातिर बस जुनून चाहिए
जिसमें उबाल हो ऐसा खून चाहिए
आसमां भी आएगा जमीन पर,
बस इरादों में जीत की गूँज चाहिए।

◆ लेख ◆
शिक्षा और छात्र शक्ति
सुरेष्ठा महतो

हमारे अंदर जो प्रतिभा, गुण, शक्ति सुषुप्तावस्था में निहित है, उन्हें जाग्रतावस्था में लाने वाली शक्ति ही शिक्षा है। दूसरे शब्दों में हम में जन्म लेने वक्त जो कमी रह जाती है, उसे शिक्षा ही पूरा करती है। ये पंक्तियाँ उद्धृत करने का मेरा अभिप्राय है कि मानव को मानवीय बनाये रखने में जिसकी अहम् भूमिका है, वह शिक्षा है।

बहुत दुख के साथ कहना पड़ता है कि हम आज शिक्षा के मूल मंत्र से भटक गये हैं। शिक्षा के उद्देश्य को विकृत कर दिया गया है। हम आज जितने शिक्षित, समझदार बन रहें हैं, उतने ही समाज के लिए अनुपयोगी भी। आज शिक्षा का मतलब येन-केन-प्रकारेण जीविकोपार्जन और धनोपार्जन तक सीमित रह गया है। यह ठीक है कि शिक्षा अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाती है, पर इसका मतलब यह नहीं कि पेट भर लें और इंसानियत खो दें। बाइबिल का संदेश है कि 'उस व्यक्ति को क्या लाभ जो संसार को प्राप्त कर ले और आत्मा को खो दे।'

आज के संदर्भ में शैक्षणिक स्थिति पर ईमानदारीपूर्वक समीक्षा करें तो एक बात स्पष्ट होती है कि हम शिक्षा के मूल लक्ष्य से भटक चुके हैं। नैतिक मूल्यों, आदर्शों और हजारों वर्ष पुरानी हमारी महानतम सांस्कृतिक धरोहरों का जिस कदर पतन हो रहा है उससे तो यही सिद्ध होता है कि आज की शिक्षा मनुष्य को मनुष्य बनाये रखने में निर्मूल साबित हो रही है।

जो शिक्षा चरित्र-निर्माण, समाज-निर्माण, राष्ट्र-निर्माण और अंततः विष्टव-कल्याण का मार्ग प्रशस्त नहीं करती, क्या वह शिक्षा है? इसी प्रसंगवशा महान दार्शनिक रुसो की एक पंक्ति याद आती है- 'कला और विज्ञान के विकास ने मानव को खराब बना दिया है।'

तो क्या रुसो के इस कथन को सत्य मानकर कला और विज्ञान के विकास पर रोक लगाई जानी चाहिए? हरगिज नहीं।

कला, धर्म और विज्ञान का उद्देश्य सर्वगुण संपन्न मानव का सञ्जन करना है न कि अपने आकर्षण में फँसकर समाज को उसके मूल उद्देश्यों से गुमराह करना।

पर जब ज्ञान-विज्ञान, कला का उद्देश्य झूठ और फरेब की कलाबाजी दिखाकर केवल अपना उल्लू सीधा करना हो जाए तो, ऐसी शिक्षा से अशिक्षा भली। तभी तो तिलक ने भी कहा था- 'तथाकथित ऊँचे कहे जाने वाले लोग शरीर और आत्मा से मूढ़ हैं। जो कुछ आशा है वह जनसाधारण में है।'

एक प्राचीन उक्ति है जिसकी चर्चा करना यहाँ समीचीन लगती है-

'साहित्य, संगीत, कला विहीना, साक्षात् पशु पुच्छविषाणहीना।'

अर्थात् जिसमें साहित्य, संगीत और कला नहीं है वह पुच्छ और सींग विहीन साक्षात् पशु के समान है।

पर, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह पंक्ति सटीक नहीं उतरती। आज इसका अर्थ उलट-सा गया है। आज जीवन के हर क्षेत्र में अराजकता, अव्यवस्था फैली हुई है। इसका दोषी कौन? अनपढ़ या सुशिक्षित वर्ग? जाहिर है कि समाज के नीति-नियंता सुशिक्षित वर्ग ही होते हैं। कला, साहित्य और विज्ञान के धुरंधरों के रहते हुए भी करोड़ों लोगों की आधारभूत आवश्यकताएँ यदि अपूर्ण हैं, मानव के रहने लायक सामाजिक वातावरण का अभाव है, तो इसके मूल में कौन है? वही कला, साहित्य, धर्म, विज्ञान और राजनीति के पुरोधा जो अपने वर्चस्व के संघर्ष में अपने उच्चादर्शों-उच्चकर्मों को ताक पर रख बैठे हैं।

कला, साहित्य, धर्म या राजनीति में हर जगह सीनियर अपने जूनियर का दोहन कर रहे हैं। जूनियर के बौद्धिक, आध्यात्मिक या भौतिक उन्नति के मार्ग में सीनियर बाधक बने हुए हैं। उन्हें भय है कि इनके स्वाभाविक प्रगति से उनका स्थान छीन न जाए। क्या इसे दर्शन की दरिद्रता न कहेंगे? मानव की संकीर्णता न कहेंगे, तो क्या कहेंगे?

पहले शिक्षा जहाँ चंद लोगों की मुट्ठी की वस्तु थी, आज उसका सार्वजनीकरण, व्यापीकरण हो रहा है, यह सराहनीय है। पर जिसतरह कला, साहित्य या धर्म का संदेश लोगों तक पहुँच रहा है वह चिंताजनक है।

जहाँ तक कला, साहित्य या विज्ञान के व्यावसायीकरण का सवाल है तो कुछ हद तक यह लाजिमी हो सकता है। पर, इससे 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' के उद्देश्यों को

नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए।

शिक्षा का प्रचार-प्रसार मल्टी-मीडिया से संभव हो पा रहा है। परंतु, ऐसी शिक्षा के प्रसार का क्या औचित्य जो स्वच्छ मानसिकता वाले योग्य नागरिक को उत्पन्न करने में अक्षम हो।

पत्र-पत्रिकाओं द्वारा अश्लील साहित्य, टी.वी. और सिनेमा द्वारा घटिया कार्यक्रम परोसने से हमारे किशोर-किशोरियाँ मानसिक और आत्मिक रूप से अपंग हो रहे हैं। कला की दुनिया में महारत हासिल करने वाले निर्माता-निर्देशकों के आदेश पर नायक-नायिकाओं द्वारा जिस तरह कला की कम, जिस्म की नुमाईश अधिक की जा रही है, उससे तो वातावरण विषाक्त बनता जा रहा है। जनमानस की सोच निम्न होती जा रही है।

फिल्म और टेलीविजन आज के युग में ज्ञान-विज्ञान के संचार के लिए महत्वपूर्ण उपकरण हैं। क्या कागज के चंद टुकड़ों की खातिर निर्माता-निर्देशकों को इन उपकरणों के जरिए स्तरहीन कार्यक्रम प्रस्तुत कर समाज को दूषित करने का अधिकार है? कतई नहीं।

जनतांत्रिक राज्य में जनता की आधारभूत आवश्यकताएँ—रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा और स्वास्थ्य के साथ-साथ स्वस्थ मनोरंजन की गारंटी सरकार पर है। पर, जहाँ सरकार ही भ्रष्टाचार में आकंट डूबी हुई हो तो शिक्षा और स्वास्थ्य की परवाह किसे रहेगा? यहाँ एक शोर उद्ध्वल करना लाजिमी होगा—

श्रीश्री की अदालत में, पत्थर की गवाही है।

कातिल ही मुहाफिज है, कातिल ही सिपाही है।

आधुनिक शिक्षा पद्धति पर गंभीरतापूर्वक विचार करें, तो एक बात दृष्टिगोचर होती है कि हम बी.ए., एम.ए., डाक्टरेट की उपाधि तो पा लेते हैं, पर वर्ण, वर्ग, धर्म, संप्रदाय के कटघरे से ऊपर उठ नहीं पाते हैं। इसकी जड़ में क्या है? इसकी एक ही वजह है आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा का अभाव।

आजादी के इतने वर्षों के बीतने पर भी देश में एक-समान राष्ट्रीय शिक्षा नीति का अभाव है। बड़ी साजिश के तहत देश में दोहरी शिक्षा-नीति चल रही है। एक ओर सरकारी स्कूलों में जहाँ छत है तो छात्र नहीं, टीचर है तो फर्नीचर नहीं... की स्थिति में किसान-मजदूर के बच्चे शिक्षा ग्रहण करते हैं, वहीं दूसरी ओर देश के आला अफसरों और नेताओं के बच्चे अंग्रेजी माध्यम के आलीशान स्कूलों में शिक्षा लेते हैं।

शिक्षा की यह दोगली नीति ही यह तय कर देती है कि कौन कुर्सी ढोएगा और कौन कुर्सी पर बैठेगा। देश में सबके लिए एक समान शिक्षा का अवसर उपलब्ध कराकर ही समतामूलक समाज की स्थापना संभव है।

आज देश की शैक्षणिक हालत बहुत दयनीय है। सकल घरेलू उत्पाद का दस फीसदी शिक्षा पर खर्च करना है। पर, जी.डी.पी. का मात्र तीन-चार फीसदी ही शिक्षा पर व्यय करना इसकी निम्न हालात के लिए जिम्मेवार है।

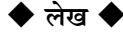
सरकार की शिक्षा नीति ऐसी हो जिसमें हर व्यक्ति को ऊँची से ऊँची तालिम हासिल करने का अवसर मिले। पर, आज स्थिति ठीक इसके विपरीत है। शिक्षा का भी व्यावसायीकरण हो गया है। जिसके पास पैसा है वही कालेज का मुँह देख सकता है, वरना प्रतिभावान होकर भी घास खोदते रहिए।

एक और हैरतअंगेज करने वाली बात है—यूनिवर्सिटी जो उच्चतम व्यक्तित्व की सञ्चन-स्थली है, वहाँ रैगिंग, छूरेबाजी और बालिकाओं के साथ दुर्व्यवहार जैसी घटनाओं का होना शर्मनाक है। आखिर जो छात्र ऐसी ओछी गतिविधियों में लिप्त रहते हैं, उनके मस्तिष्क का निर्माण कहाँ हुआ है? उनकी शिक्षा भी तो हमारे परिवार, समाज या कहीं विद्यास्थली में ही मिली होती है। अतः शिक्षा ऐसी हो जो मनुष्य को पूर्णता की ओर अग्रसर करे।

आश्चर्य की बात तो यह है कि छात्र नौजवान होते हैं और कहा जाता है कि जिसकी जवानी उसका जमाना। पर, अराजक सामाजिक, शैक्षणिक स्थिति के शिकार बनने से छात्र-शक्ति भी वंचित नहीं है। सरकारी दफ्तरों में या कालेजों में एडमिशन के लिए उन्हें भी नजराना पेछा करना पड़ता है।

अंत में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि छात्रों में अद्वितीय शक्ति है, क्योंकि इनमें शारीरिक और बौद्धिक दोनों शक्तियों का समन्वय है। और जहाँ दोनों शक्तियाँ हैं, विजय वहीं है। पर, दुख की बात है कि छात्र-शक्ति को हमारे राजनेताओं ने विभिन्न खंडों में विभाजित कर रखा है। जबकि तमाम छात्रों का एक संगठन होना चाहिए, एक उद्देश्य होना चाहिए—उच्च व्यक्तित्व की प्राप्ति और अराजकता की समाप्ति।

राजभाषा सहायक, सिगनल कारखाना
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क: 07860793130



साहित्य और मनोविज्ञान अंतस्तात्त्विक (ष्ठाष्टवत) संबंध

डा. हरिष्ठांकर कुमार सिन्हा

साहित्य

मन का दर्पण है। साहित्य का संबंध मन से। मनोविज्ञान को मन का विज्ञान कहा जाता है। मनोविज्ञान मन-उन्मन-आदिनाथ-प्रकाशपुंज है जिसकी अभिव्यक्ति अचेतन मन को झकझोरती हुई साहित्य-द्वारा से चेतन मन में होती है। अगर मन स्वस्थ और निर्विकार होगा तो साहित्य भी सत्यं शिवं सुंदरम से युक्त होगा। साहित्य में सहित का भाव होता है। साहित्य दर्पणकार ने कहा है-

‘सहितानाम् भाव इति साहित्यः।

अर्थात् जिसमें सहित का भाव है वही साहित्य है। साहित्य का भाव अंतः-सूझ एवं अंतः-चक्षु से प्रकट होता है। वह मन की संपूर्ण दृष्टियों पर आधारित है एवं उसमें सभी इंद्रियों की गतिविधियों के प्रभाव परिलक्षित होते हैं। साहित्य जहाँ विचार प्रस्तुत करने वाला मंत्री है वहाँ मन सभी इंद्रियों का राजा है। इसलिए श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने विभूति-योग के अध्याय 10 श्लोक 22 पष्ठ संख्या 134 के अंतर्गत कहा है-

इंद्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥22॥

अर्थात् ‘इंद्रियों में मन हूँ और भूतप्राणियों की चेतना अर्थात् जीवनी-शक्ति हूँ’ (तभी तो साहित्य के द्वारा कुछ ऐसे भावों का प्रकटीकरण हो जाता है जिसे पढ़कर स्वयं रचनाकार (लेखक या कवि) आश्चर्यचकित हो जाता है- ‘यह कैसे लिखा गया’ जिसका ज्ञान स्वयं रचनाकार को भी नहीं था। वे इसके लिए ‘देव-कृपा’ मानने लगते हैं। जबकि सच्चाई यह है कि ऐसी अभिव्यक्ति के अचेतन मन के सक्रिय होने से परोक्ष रूप से होता है। इससे ‘साहित्य और मनोविज्ञान के अंतस्तात्त्विक संबंध’ का पता चल जाता है। साहित्य-रचना करते समय ऐसे मनोवैज्ञानिक स्वरूप का ज्ञान स्वयं रचनाकार को नहीं रहता है। चाहे वह स्वयं मनोवैज्ञानिक ही क्यों न हो? कुछ भाव मन में दमित होते हैं जो साहित्य में स्वरूप प्राप्त कर अभिव्यक्त होते हैं। मनोविज्ञान की उपज ‘साहित्य’ है। यही कारण है कि मनोविज्ञान के रस से ही साहित्य संचित और पुष्ट होता है तथा साहित्य से मनोविज्ञान के क्षेत्र में कतिपय क्षितिज का संधान होता है। साहित्य- रचनाकार और पाठक अपनी मनःस्थिति

को साहित्य के द्वारा पढ़ लेते हैं और उनके मन में दमित वे सभी तथ्य एक-एक करके बाहर निकल आते हैं जिससे साहित्य-रचनाकारों की प्रतिष्ठा में चार-चाँद लग जाते हैं और साहित्य पढ़ने-लिखने की ओर अधिक प्रेरित होने लगते हैं। इस प्रेरणा के कारण रचनाकार को ‘स्व-मनोविज्ञान’ का पता नहीं चल पाता है। वे ‘स्व-मनोविज्ञान’ से बिलकुल अनभिज्ञ रहते हैं। ‘स्व मनोविज्ञान’ के अंतर्गत उसकी मनोवृत्ति, अंतर्वृत्ति, अंतः सूक्ष्म, व्यक्तिगत अनुभूति, स्व-प्रत्यक्षीकरण और निज-अनुभवों का सूक्ष्म अनुसंधानात्मक अध्ययन मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से हो जाता है।

साहित्य मनोविज्ञान का गुप्त धन है। इससे मनुष्य को उत्तम पद और मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह गुप्त धन मानव के अंदर पाया जाता है दूसरे प्राणी में नहीं। इसीलिए कवि या लेखक की रचना ब्रह्मा की रचना से श्रेष्ठ मानी जाती है। इसी बात को लक्ष्य कर कहा गया है- ‘कविर्मनीषी परिभूस्वयंभू।’ तुलसीदास जी ‘श्रीरामचरितमानस’ (उत्तर कांड, दोहा सं. 42, चौपाई-4, पष्ठ 41) में लिखते हैं-

बड़े भाग मनुष्य तनु पावा

सुर दुर्लभ सब ग्रंथहिं गावा।

साधन धाम मोच्छ कर द्वारा॥

अर्थात् ‘बड़े भाग्य से यह मनुष्य शरीर मिला है। सब ग्रंथों ने यही कहा है कि यह शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है। यह साधन का धाम और मोक्ष का द्वार है।’ मनोविज्ञान का नेत्र विद्या है। सभी भाषाओं का अपना-अपना साहित्य होता है। ‘विद्या-प्राप्ति’ का मूल साधन ‘साहित्य’ है। विद्या से विनय और विनय से पात्रता मिलती है। पात्रता से धन की प्राप्ति होती है, धन से धर्म होता है और धर्म से मोक्ष की प्राप्ति होती है। अविद्या नरक का मार्ग प्रशस्त करती है। महाभारत (ष्ठांति पर्व) भाग-2 के मोक्ष धर्म पर्व, अध्याय-169, श्लोक-33 पष्ठ सं. 931 (प्रधान संपादक डा. पंडित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मंडल) में कहा गया है-

नास्ति विद्या समं चक्षुर्नास्ति विद्यासमं बलम्।

नास्ति रागसमं दुःखं नास्ति त्यागसमं सुखम्॥33॥

अर्थात् 'विद्या के समान नेत्र, विद्या के समान बल, राग के समान दुःख और त्याग के समान दूसरा कोई सुख नहीं है।' मनुष्य चेतन स्तर पर साहित्य की रचना करके अमर हो जाता है। जो मनुष्य हीनता का शिकार हो चुका है वह अपने को श्रेष्ठ प्रमाणित करने के लिए अपनी हीनता से मुक्त होना चाहता है। इसके लिए समाज के द्वारा मान्यता प्राप्त साधन की खोज उसके अचेतन मन में होता रहता है। ऐसे भी मनुष्य में महान बनने की इच्छा रहस्यमय आवरण में छिपी रहती जो अवसर की तलाश करता रहता है। इसके लिए उचित अवसर स्वप्न और उन्मादग्रस्त अवस्था ही होता है। प्रतिष्ठा के साथ उनके रहस्यमय आवरण में छिपी हुई इच्छाएँ उनकी साहित्य-रचनाओं में प्रतिफलित हो जाती है। जो मनुष्य साहित्य-रचना की ओर प्रेरित होता है उसे कल्पित लोक अधिक रुचिकर और प्रिय लगता है। साहित्यकारों और वैज्ञानिक आविष्कारकों के ही त्याग और दुःख पर सारी मानवता सदियों से लेकर आज तक जीवित है। साहित्य रचनाकार व्यक्तिगत रूप से निर्दोष एवं शुद्ध मनुष्य है, लेकिन उसके व्यक्तित्व को जानने के लिए उसके मनोविज्ञान को समझना होगा। इसके लिए उसके अतीत की जिंदगी से लेकर वर्तमान तक की जिंदगी का गहन मनोवैज्ञानिक अध्ययन एवं उसकी मानसिक रचनाओं का मनोवैज्ञानिक विष्टलेषण करने की आवश्यकता है जो एक जटिल प्रक्रिया है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना मनोविज्ञान होता है जिसके द्वारा अचेतन मन से लेकर चेतन मन तक वह अपना

कार्य करता है। साहित्य-रचना उसके मनोविज्ञान का स्वच्छ दर्पण है। उसकी विद्या एवं लेखनी उसके मनोविज्ञान का नेत्र है। साहित्य रचनाओं के कारण वह कुंठाग्रस्त नहीं हो पाता है। समाज में उसके विचारों को सम्मान दिया जाता है। इसके साथ-साथ उसके विचारों की अभिव्यक्ति के लिए एक सुंदर मंच प्रदान किया जाता है। इसके द्वारा उसे सामाजिक प्रतिष्ठा मिलती है और अर्थ की प्राप्ति होती है।

उपर्युक्त व्याख्या से यह स्पष्ट हो जाता है कि साहित्य मनोविज्ञान का सबसे अच्छा दर्पण है जिसके द्वारा साहित्य रचनाकारों (लेखकों, कवियों और कलाकारों) में स्थित सभी चेतन-अचेतन मनोग्रंथियों का अध्ययन एवं मनोविष्टलेषण सरलतापूर्वक किया जा सकता है। यही कारण है कि साहित्य और मनोविज्ञान में घनिष्ठ संबंध है। दोनों का घनिष्ठ संबंध व्यक्ति के जीवन से है। मनुष्य के हर कदम पर मनोविज्ञान दिखता है। साहित्य में वही आईना बनकर मानव-जीवन का बोध कराता है।

मनोविज्ञान और साहित्य में बहुत ही अंतस्तात्त्विक (शाष्टवत) संबंध है क्योंकि दोनों का अंतस्तत्त्व लगभग एक ही समान है।

मुहल्ला-पोखरा
(वीमेंस कालेज के पश्चिम)
कचहरी रोड, हाजीपुर
वैष्णाली-844101 (बिहार)
संपर्क: 09204527041

**चिंता ज्वरो मनुष्याणां क्षुधां निद्रां बलं हरेत्।
रूपमुत्साह बुद्धिं श्रीं जीवितं च न संश्रयः॥**

अर्थात् चिंता और ज्वर मनुष्यों की क्षुधा, निद्रा, शक्ति, सुंदरता, उत्साह, वृष्टि, बुद्धि, लक्ष्मी और आयु इन सब का नाश करता है, इसमें संदेह नहीं है।

**न थी हाल की जब हमें अपनी खबर
रहे देखते औरों के एब-ओ-हुनर
पड़ी अपनी बुराइयों पे जो नज़र
तो निगाह में कोई बुरा न रहा।**

बहादुर शाह जफ़र

◆ कहानी ◆
रेल में रेगिस्तान
हुस्न तबस्सुम 'निहाँ'

रात एक बजे का समय। बंगलौर

की ओर प्रस्थान करने वाली कर्नाटक एक्सप्रेस जलगाँव के समीप कुछ आगे जाकर ब्रेक हो गई। ड्राइवर ने देखा सामने एक जानवरनुमा मनुष्यों के झुंड को चौकड़ी भरते हुए। जेहन में एक धमाका सा हुआ-

‘...नक्सलिस्ट...?’

‘...रेल के श्लेष कर्मचारी लपक के ड्राइवर के केबिन में आ गए। वेटिंग टिकट पर जा रहे यात्रियों को हड़का-हड़का कर दूने दाम पर टिकट बना रहे टीसियों का काला झुंड इधर-उधर भागने लगा।

‘...अब क्या होगा...?’ -खिड़कियों से झाँक-झाँक टोह लेने का प्रयास करते रहे। पर चारों ओर घुप्प अंधकार के सिवा कुछ भी ना दिखा। अंततः वे भी ड्राइवर के केबिन की तरफ भागे। कुछ ही क्षणों में ड्राइवर का केबिन ठस्स हो गया। यात्रियों के डब्बों में अजब खसपसाहट गूँज रही थी। महिलाएँ अपने-अपने इष्टों को अपनी-अपनी तरह पटा रही थीं-

‘...हे कष्ट भगवान, रक्षा करो एक एक सौ एक रुपये का प्रसाद चढ़ाऊँगी।’

कुछ महिलाएँ जो गहने पहने थीं, फटाफट उतार कर ब्रा में खोस लिए। बोगी नं. 54 में एक बच्चे ने जन्म लिया। अजब छीछा लेदर। बाकी यात्री नाक में कपड़ा ठूस के इधर-उधर भाग खड़े हुए। कुछ अदद महिलाओं ने प्रसव करवाया। कि एक बूढ़ी महिला की स्मृति ताजा हो गई-

‘...और तो और, ये तो रेल है मेरी बहू को तो लोकल बस में बेटा पैदा हुआ। बड़ा भभभड़। आखिर जरवल स्टॉपेज पर बस रुकी और हमारे कष्ट कम हुए। लेकिन दुष्ट ड्राइवर बड़ा हेठी। नेगचार करने लगा। बोला- ‘एक सौ इक्यावन रुपये दो तब नीचे उतरने देंगे। दोनों दरवाजे भेड़ लिए। खैर बच्चे की खुशी थी। हमने भी खुशी-खुशी नेग दिया और जच्चा-बच्चा को घर लिवा लाए।’

तभी एक चाय वाला गुजरा और हौले से फुसफुसाया-

‘...अपने सामान सहेजिए। नक्सलवादियों ने गाड़ी

रोक ली है।’

जच्चा को धक्का-सा लगा-

‘हे ईश्वर कैसी घड़ी में मैंने बच्चा जन्मा है।’

उसका पति कभी इधर दौड़ता कभी उधर भागता। अन्य दूसरी महिलाएँ अपनी-अपनी तरह से जच्चा-बच्चा को संभालने में लगी रहीं। कि एक पचपन-पचास साल के व्यक्ति ने एक भारी भरकम वायलेट निकाल कर एक महिला को पकड़ाया-

‘...बहन जी, इसमें भारी रकम है, आप जरा इसे सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देतीं तो अच्छा होता।’

महिला ने तेजी से लेकर अपने ब्लाउज में खोस लिया। एक मनचले ने दूसरे को आँख मारी-

‘...यार गाँधी ही बढ़िया। आज भी आराम से महिलाओं के ब्लाउज में घुस कर बैठ जाता है।’

‘...श्राप यार... मुझसे ऐसी बात नहीं, मैंने ब्रह्मचर्य अपनाया हुआ है।’

...दूसरे ने ठिठोली की तो पहले वाला समीप आ कर बोला-

‘...कौन सा ब्रह्मचर्य... गाँधी वाला ब्रह्मचर्य...?’ फिर दोनों का ठहाका बोगी में फैल गया। इस पर उस अधेड़ व्यक्ति ने आँखें तरेरी-

‘...तुम्हें शर्म नहीं आती कि हम संकट में हैं और कुछ ही देर में हम सब लूट लिए जाएँगे।’

‘...क्या करूँ अंकल, हमारे पास कुछ लुटने के लिए है ही नहीं। बेरोजगार हूँ। जान भी ले लेंगे तो भी हम फायदे में रहेंगे। कम-से-कम बेरोजगारी की टाँगों पे सात-आठ जनों के भूखे पेटों का बोझ उठाने से तो बच जाएँगे।’

‘...और अंकल... ये लुटेरे हमसे अच्छे, भला अपने परिवार का पेट तो भर पा रहे हैं।’ -दूसरा लड़का बात को आगे बढ़ाता बोला। महिलाओं सहित उस अधेड़ व्यक्ति ने उन लड़कों को एक हिकारत भरी नजर से देखा और अपने काम में लग गई। दूसरी बोगी का हाल भी कुछ ऐसा ही था। खिड़की के पास बैठे तिलकधारी पंडित जी उँगलियों में पड़ी माला के मनके बड़ी रफ्तार से घुमाए जा रहे थे। सामने वाली सीट पर एक जोड़ा

बैठा था। लड़की फनफना रही थी-

‘...तुम्हारे चक्कर में ना... कहाँ से कहाँ मैं तुम्हारी बातों में आ गई।’

‘...क्या मतलब, तुम्हारी मर्जी नहीं थी। क्या तुम प्यार नहीं करतीं मुझे। सिर्फ मेरे कहने से भाग आई हो।’

‘...मैं क्या जानती थी ये आफत आने को है।’

‘...और मैं जानता था?’

‘...उफ! अब इस बहस से कोई फायदा नहीं, रास्ता सोंचो।’

‘...वो जेवर की पोटली अपने ब्लाउज में रख लो...’

‘...ओह वह ब्लाउज में कहाँ से आएगी, थैला थोड़े ही है ब्लाउज।’

‘...कैसे भी रख लो...’

लड़की बैग से पोटली निकाल कर ब्लाउज में खोंसने लगी। सम्मुख बैठे पंडित जी की नजर उसके उरूजों पर जाकर टिक गई। लड़की का आँचल नीचे सरक-सरक आया था। पंडित जी की उंगलियाँ थम गईं। लड़के ने उनकी ओर घूर कर देखा तो वह सकपका गए। उंगलियाँ फिर तेज-तेज चलने लगीं। अचानक बिजली भी गुल हो गई। हर तरफ हाय-तौबा मच गई। कि तभी ट्रेन में तेज-तेज डंडे पटकने की आवाजें आने लगीं। फिर कई आवाजें एक साथ बोगियों की दीवारों से टकराने लगीं-

‘...कोई हिलना नहीं... हिलने का नहीं... नाय तो नुकसान उठाओगे...’ -लोग सकपका गए। एक तेज आवाज गूँजी- ‘...सभी अपने-अपने सामान आगे कर दो।’

लोगों ने बगैर चूँ किए अपने-अपने सामान आगे कर दिए। वे सारे लप-झप में सामान यहाँ-वहाँ करने लगे। एक लड़का छोटी सी टार्च लिए प्रकाश कर रहा था। हालाँकि ये प्रकाश पर्याप्त नहीं था। खैर...।

बोगी नं. 54 में नवजात शिशु जन्म ले चुका था किंतु अभी भी नाल से जुड़ा हुआ था। महिलाएँ जच्चा-बच्चा को घेरे बैठी थीं। बच्चा चीख-चीख के अपने आगमन की खबर फैलाए जा रहा था। लगेज सारे सीटों के नीचे इधर-उधर बिखरे पड़े थे। तभी कुछ लोग आ पहुँचे। उनमें से एक व्यक्ति गरजा-

‘...अपने-अपने सामान सामने लाओ वरना चक्कू मार दूँगे।’

इतना सुनना था कि उनमें से वृद्ध महिला गिड़गिड़ाई- ‘...अरे बेटा चाकू हो तो जरा हमको दे दो, बच्चे की नाल काट दूँ। बेचारे दोनों माँ-बेटे परेशान हो रहे हैं।’

लुटेरों को ज्यों साँप सूँघ गया। चक्कू हो तब ना। कुछ सोंच कर उनमें से एक व्यक्ति ने दूसरे से आदेशात्मक स्वर में कहा-

‘...रे भनुवा... जा आगे से चक्कू ले कर आ।’

उनमें से भनुवा नामक युवक किसी ओर चला गया। बाकी ने सामानों की तलाशी लेनी शुरू कर दी। उनके साथ एक बड़ा सा थैला था। जिसमें वे सामान फटाफट डाले जा रहे थे। तब तक भनुवा नामक युवक वापस आ गया। उसके हाथ में एक छोटा-सा सब्जी काटने वाला चाकू था। घायल रेल की कैंटीन से उठा लाया था। उसने चाकू वृद्धा को पकड़ा दिया-

‘...ये लो माँ जी।’

वे अपने काम को अंजाम दे चुके और आगे बढ़ गए। वृद्धा से चाकू लेकर अपने काम में लग गए। करीब चालीस-पचास लोग पूरी रेल में फैले पड़े थे। लगभग एक घंटे उन्होंने ट्रेन को खंगाला और फिर ड्राइवर को हरी झंडी देते हुए दफा हुए-

‘...धन्यवाद डरेबर साब, अब लेई जावो गाड़ी...’

ड्राइवर की जान में जान आई। ट्रेन चल दी। लाइट जल पड़ी। सबने राहत की साँस ली। रेलवे-स्टाफ सभी बोगियों को चैक करने में लग गया। कहीं कोई घायल या हताहत तो नहीं हुआ? यात्री स्वयं अपने-अपने सामान चैक करने लगे। सबकी आँखें फैल गईं। रेलवे-स्टाफ भी दंग रह गया।

‘...आखिर चक्कर क्या है?’

नवजात शिशु की नाल काट दी गई थी। अब वृद्धा पानी ढूढ़ रही थी कि बच्चे को नहलाया जाए। मगर पानी की एक भी बोतल नहीं। पति कह रहा था- ‘...अभी तो छः बोतल ले के आया था।’ -वृद्धा ने समझाया- ‘...कोई बात नहीं खतम हो गया होगा, आगे से और ले आओ।’ -वह चुँधियाया-सा आगे बढ़ गया। किंतु कहाँ? रेल में रेगिस्तान उतर चुका था। यहाँ से वहाँ तक पानी का नामोनिशान नहीं। गर्मी और पसीने की गंध से नाक नहीं दी जा रही थी। बच्चे प्यास के मारे रोने

चिल्लाने लगे थे। कैटीन तक में पानी नहीं था। ब्लाउज में गहने छुपाए लड़की ने गहने की पोटली बाहर निकाल ली। लड़के ने पसीना पोंछते हुए अपना बैग आगे खिसकाया और पानी की बोतल ढूँढ़ने लगा। बोतलें न पाकर वह झल्लाया- ‘...सालों ने बोतलें किधर लुढ़का दीं..!’ -फिर चकित सा बोला- ‘...ये... सामान तो सारा है साले ले क्या गए’ -धीरे-धीरे ऐसी खबरें प्रत्येक बोगी से आने लगीं। और फिर पूरी ट्रेन में यही चर्चा गर्माने लगी। दूसरी ओर गर्मी के कारण पानी के लिए त्राहि-त्राहि मच गई। बच्चे प्यास से चिल्ला रहे थे। नवजात शिशु को बगैर नहलाए ही कपड़े में लपेट के रख दिया गया। ड्राइवर अपने किसी अधिकारी से बतिया रहा था।

‘...सर क्या ऐसा भी होता है।’

‘...होता तो नहीं है, पहले कभी ना हुआ। पर अब होता है, होता ही रहेगा। दरअसल जिस स्थान से आप

लोग गुजर रहे थे वहीं रेलवे लाइन से करीब सौ दो सौ किलोमीटर की दूरी पर एक गाँव उँचवा है। वहाँ का जलस्तर काफी नीचे जा चुका है। अब वहाँ पानी की एक बूँद तक नहीं शेष है। जल-संरक्षण जैसे प्रयास भी वहाँ विफल हो गए हैं। इस गाँव की आधी आबादी पलायन कर चुकी है। जो बचे हैं वे पानी लूटते हैं। उनकी दृष्टि में अब सोना-चाँदी इत्यादि का कोई मूल्य नहीं रहा। अब वे मात्र पानी के लुटेरे बन के रह गए हैं। एक दिन यह लूट पूरे भारत में फैल जाएगी। यू नो... अगला विष्व-युद्ध पानी के लिए होगा। ये घटना उसी विष्व-युद्ध का एक छोटा सा नमूना है।’

महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विष्वविद्यालय

गाँधी हिल्स, वर्धा-442005

(महाराष्ट्र)

संपर्क: 09415778595

रेल यात्रा-वर्षांत पुरस्कार योजना (आधार वर्ष-2015)

रेल कर्मियों सहित जनसाधारण के रेल यात्रा संबंधी अनुभव प्राप्त करने और उन अनुभवों के आधार पर रेलों द्वारा अपनी छवि को बेहतर बनाने के उद्देश्य से रेल मंत्रालय को ‘रेल यात्रा-वर्षांत पुरस्कार योजना’ अखिल भारतीय स्तर पर प्रचलित है। इस योजना के अंतर्गत प्रत्येक कैलेंडर वर्ष में हिंदी में लिखित सर्वोत्तम प्रथम तीन वर्षांतों के विजेताओं को निम्नलिखित नकद पुरस्कार दिए जाने का प्रावधान है:-

प्रथम पुरस्कार (एक) - ₹ 4000/-

द्वितीय पुरस्कार (एक) - ₹ 3000/-

तृतीय पुरस्कार (एक) - ₹ 2000/-

यात्रा-वर्षांत कागज के एक ओर डबल स्पेस में टाइप होना चाहिए जिसके चारो तरफ कम से कम एक इंच का हाशिया छोड़ा गया हो। यात्रा-वर्षांत कम से कम 3000 शब्दों में हो।

पुरस्कार अखिल राजभाषा सप्ताह समारोह अथवा उपयुक्त अवसर पर प्रदान किए जाएँगे।

यात्रा वर्षांत के लिए लेखक को प्रमाण-पत्र देना होगा कि उसके लेख को किसी अन्य योजना के अंतर्गत पुरस्कार नहीं किया गया है।

यात्रा-वर्षांत भेजने की अंतिम तिथि: 29 अप्रैल 2015

(रेलवे बोर्ड में भेजे जाने की अंतिम तिथि: 29 मई 2015 है।)

पुरस्कार की विस्तृत जानकारी हेतु राजभाषा विभाग से संपर्क किया जा सकता है।

(प्राधिकार: रेलवे बोर्ड का दिनांक 12.01.2015 का पत्रांक हिंदी-2015/प्र.-7/7)

◆ थाई लोककथा ◆
फ़िकुल की कहानी
कुसंसष्टि मिश्र

बहुत पुरानी बात है। थाईलैंड में फ़िकुल नाम की एक सुंदर लड़की रहती थी। वह जितनी सुंदर थी उतनी ही दयालु और मधुर व्यवहार वाली थी। उसकी माँ का निधन हो गया था और अब घर में उसकी सौतेली माँ और माली नाम की सौतेली बहन रहती थीं। वे दोनों बहुत दुष्ट स्वभाव की थीं और फ़िकुल को बहुत सताती थीं। घर का सारा काम-काज फ़िकुल को ही करना पड़ता था।

एक दिन धान कूटने के बाद वह झरने से पानी लेने गई। जब वह पानी लेकर लौट रही थी तो उसे एक बूढ़ी महिला मिली जो बहुत बीमार दिखाई दे रही थी। उसके कपड़े भी मैले-कुचैले थे। बूढ़ी महिला ने फ़िकुल से पीने के लिए पानी माँगा। फ़िकुल महिला की दृष्टा देखकर करुणा से भर गई और उसे पानी दे दिया। उसने महिला से कहा कि वह आराम से पानी पी ले और अपने शरीर को भी साफ कर ले। अगर पानी कम पड़ गया तो वह और पानी ला देगी। वह बूढ़ी महिला वास्तव में भेष बदल कर आई हुई देवी थी। वह फ़िकुल के व्यवहार और करुणा देखकर बहुत प्रसन्न हुई और उसे वरदान दिया कि जब भी वह दया भावना से बोलेगी उसके मुँह से सुनहरे फूल गिरेंगे।

घर आकर फ़िकुल ने परिवार वालों को सारी बात बताई। उसके मुख से सुनहरे फूल गिरने लगे। सुनहरे फूल देखकर दुष्ट सौतेली माँ बहुत खुश हुई। वह रोज फूल बाजार में बेचकर धन इकट्ठा करने में लग गई। उसका लालच बढ़ता गया। वह और ज्यादा बोलने के लिए फ़िकुल को मजबूर करने लगी। अधिक बोलने से उसकी आवाज चली गई।

सौतेली माँ ने इस बार अपनी पुत्री माली को पानी लेने के लिए झरने पर भेजा। जब वह पानी लेकर वापस आ रही थी उसे रास्ते में मँहगे कपड़े पहने हुए एक सुंदर महिला मिली। महिला ने माली से पीने के लिए पानी माँगा। माली को उस महिला की सुंदरता और वस्त्रों से ईर्ष्या होने लगी थी। इसलिए उसने महिला को पानी पिलाने से साफ मना कर दिया। वह महिला वास्तव में वही देवी थी जिसने फ़िकुल को वरदान दिया था।

उसने अप्रसन्न होकर माली को घ्राप दिया कि जब भी वह किसी से गुस्से में बात करेगी उसके मुख से कीड़े निकलेंगे। घर आकर माली ने अपनी माँ को सारी बात बताई। गुस्से में बोलने के कारण उसके मुख से कीड़े निकलने लगे और सारा घर कीड़ों से भर गया। इससे बौखलाई सौतेली माँ ने फ़िकुल पर आरोप लगाया कि उसने बूढ़ी महिला से मिलने का सही मार्ग माली को नहीं बताया और फ़िकुल को पीटकर घर से बाहर निकाल दिया।

अकेली फ़िकुल दुःखी होकर जंगल में भटक रही थी। वहाँ उसे एक राजकुमार मिला जिसने उससे दुःख का कारण पूछा। जब फ़िकुल ने राजकुमार को अपनी कहानी बताई तो आस-पास का जंगल उसके मुख से निकले सुनहरे फूलों से भर गया। यह देखकर राजकुमार बहुत खुश हुआ और फ़िकुल के सामने विवाह का प्रस्ताव रख दिया। फ़िकुल की सहमति से विवाह संपन्न हुआ और दोनों सुखपूर्वक निवास करने लगे।

169, बन्नुवाल नगर फेस-3
डेलापीर मिनी बाई पास
बरेली-243122(उ.प्र.)
संपर्क: 09411048379

वीणा की नव चिर-परिचित तव वाणी सुनकर उठूँ तुरंत
समझूँ जीवन के पतझड़
आया हँसता हुआ वसंत।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'



जानें- आधुनिक जीवन शैली में मोटापे से रोक-थाम के उपाय

कु. अंजना लाल

इस भागदौड़

भरी दुनिया में हर इंसान अपने-अपने रोजमर्रा के कामों में इतना व्यस्त है कि अपने लिए किसी को समय नहीं कि वह अपने शरीर पर ध्यान दे सके। जहाँ लोग आजकल अपने कार्यों को लेकर व्यस्त हैं वहीं आधुनिक समय में लोग अपने शरीर को लेकर बहुत चिंतित भी हैं। जी हाँ आजकल सबसे ज्यादा लोग मोटापे को लेकर चिंतित हैं। मोटापा कोई समान्य समस्या नहीं है। यह एक गंभीर विषय है। जिससे आजकल लाखों लोग त्रस्त हैं। कोई भी नहीं चाहता कि वह बेडौल और भद्दा दिखे। मोटापा से केवल शरीर ही भद्दा नहीं दिखता बल्कि हजारों बीमारियों को बुलावा भी देता है। इससे छुटकारा पाया जा सकता है। बस जरूरत है अपने शरीर के प्रति जागरूक और केंद्रित होने की।

मोटापे का कारण

1. अनियमित खान-पान
2. असमय सोना
3. थर्डराइड
4. अनियंत्रित हार्मोन
5. फास्ट-फूड
6. दवाइयाँ

मोटापे से होने वाली बीमारियाँ

1. मोटापे से शरीर में आलस्य एवं थकान बना रहता है।
2. आर्थ्रोपेडिक परेष्ठानियाँ जैसे- कमर दर्द, घुटने का दर्द, गर्दन का दर्द आदि।
3. शुगर, बी.पी.
4. साँस का फूलना।
5. विवाहित युवतियों को गर्भधारण करने में परेष्ठानी उत्पन्न करना।
6. हृदय रोग।
7. कभी-कभी मोटापा भी कैंसर का कारण हो सकता है।

निवारण

खान-पान में नियंत्रण (क्या न खायें)

1. फास्ट-फूड जैसे- चाउमीन, बर्गर, पिज्जा आदि।

2. कोल्ड-ड्रिंक

3. वसा-युक्त भोजन

4. बिना चिकित्सकीय सलाह के वजन कम करने वाली दवाइयाँ न लें।

5. मिठाई, चीनी, मैदा आदि से बनी चीजों से परहेज करें।

क्या खायें

खाने में कुछ भी खायें पर एक सीमा में, परंतु हम अपने जीभ के स्वाद को नियंत्रित नहीं कर पाते हैं और अपने भूख से ज्यादा खाते हैं।

खाने में क्या लें

1. सादा भोजन लें।

2. बाहर की बनी चीजों से परहेज करें।

3. घर के भोजन को प्राथमिकता दें तथा ज्यादा से ज्यादा हरी सब्जी, रेशेदार फल, सूप, जूस को अपने भोजन में शामिल करें।

मोटापे से बचाव के उपाय

1. प्रत्येक दिन की शुरुआत हमेशा प्रसन्न मन से करें। सुबह घर से निकले तो खूब अच्छी डाइट (नाश्ता) लें, ताकि आप दिन भर काम करें तो शरीर में ऊर्जा बनी रहे।, कोशिश करें कि सुबह के नाश्ते में दूध, भींगे बादाम, दलिया जैसी चीजों को प्राथमिकता दें।

2. कभी भी भूखे पेट रह कर या डाइटिंग करके वजन कम न करें। ऐसा करने से शरीर पर दुष्प्रभाव पड़ेगा और अनेक प्रकार की बीमारियों से ग्रसित होने का भय भी रहेगा।

3. प्राकृतिक तरीके से वजन कम करें। जैसे- टहलना, साईकिल चलाना, रस्सी कूदना तथा हल्के-फुल्के व्यायाम।

4. खाने में अगर आप चार रोटी लेते हैं तो खाने से पहले सलाद को प्राथमिकता दें। यानी कि दो रोटी की जगह सलाद लें ताकि आपके भोजन का संतुलन बना रहे। इससे आपकी भूख भी मिटेगी और आपके शरीर का संतुलन भी बना रहेगा।

5. सलाद से पाचन क्रिया भी अच्छी रहती है और भोजन को पचाने में भी मदद करता है। पाचन क्रिया ठीक न होने के कारण भोजन का पूर्णरूपेण पाचन नहीं

हो पाता जिससे मोटापा बढ़ता है।

6. ध्यान रहे कभी भी बिना खाये या कम खाने या डाइटिंग करके वजन कम न करें। बस इतना ध्यान रखें कि क्या खा रहे हैं और अपने मन व जीभ के स्वाद को कंट्रोल करें।

7. सबसे महत्वपूर्ण है- नियमित व्यायाम और योग। केवल कुछ समय अपने शरीर को दें जैसे शरीर के पोषण के लिए भोजन जरूरी है उसीप्रकार शरीर को स्वस्थ रखने के लिए व्यायाम और योग भी जरूरी है। व्यायाम और योग से कई प्रकार की बीमारियों से मुक्ति पायी जा सकती है। व्यायाम और योग रोग को आगे बढ़ने से रोकता है। व्यायाम और योग का असर धीरे-धीरे होता है और शरीर को सुडौल और सुंदर बनाने में मदद करता है।

8. इस बात का ध्यान जरूर दें कि कोई व्यायाम या योग बिना किसी सम्यक ज्ञान या प्रशिक्षण के बिना न करें। किसी अच्छे फिजियोथेरेपिस्ट और योग के जानकार से सलाह लें।

9. ध्यान रहे हर कसरत सबके लिए नहीं होता क्योंकि

हर इंसान को उसके शरीर की जरूरत के हिसाब से कसरत एवं योग बताई जाती है। अपने मन से गलत कसरत एवं योग न करें क्योंकि इसका शरीर पर दुष्प्रभाव भी पड़ता है।

10. फिजियोथेरेपिस्ट बताते हैं कि गरदन, घुटना, कमर दर्द आदि की शिकायत आज घर-घर में है। इसका मुख्य कारण बदलती जीवन-शैली है। इससे बचने के लिए शारीरिक व्यायाम के साथ-साथ उचित खान-पान पर विशेष ध्यान देना होगा।

आपका स्वस्थ शरीर ही आपकी सबसे बड़ी दौलत है, क्योंकि ईश्वर ने आपको अच्छा दिमाग एवं सुंदर व स्वस्थ शरीर दिया है जिसे आपको ही संभाल कर रखना है।

ध्यान रहे- इलाज से कहीं बेहतर है बचाव।

अवर लिपिक

फिजियोथेरेपिस्ट

मुचिनि कार्यालय

पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

संपर्क: 07607046878

राजभाषा अधिनियम 1963 यथासंशोधित 1967 की धारा 5

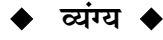
केंद्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिंदी अनुवाद

1) नियत दिन को और उसके पष्ठचात् शासकीय राजपत्र में राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित-

क) किसी केंद्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का, अथवा

ख) संविधान के अधीन या किसी केंद्रीय अधिनियम के अधीन निकाले गए किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि का, हिंदी में अनुवाद उसका हिंदी में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

2) नियत दिन से ही उन सब विधेयकों के, जो संसद के किसी भी सदन में पुनः स्थापित किए जाने हो और उन सब संशोधनों के, जो उन के संबंध में संसद के किसी भी सदन में प्रस्तावित किए जाने हों, अंग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथ-साथ उनका हिंदी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किया जाएगा, जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाए।



मेरे अवतार बनने की संभावना

रण विजय सिंह

बीते जमाने

की बात है तब धान रोपा नहीं बोया जाता था और बुआई बारिष्ठा पर निर्भर थी। अक्सर बरसात शुरू होने में देर होती थी। चार दिन की भी देरी हुई नहीं कि सभी हैरान-परेष्ठान। सबसे अधिक परेष्ठान तो हलवाहे होते थे। जल्दी बरसात होगी तो काम जल्दी खत्म होगा। धान भी अच्छा होगा। पता नहीं धान के अच्छे होने से उन्हें क्या फायदा होता? मजदूरी तो बढ़ती नहीं फिर भी मालिक से अधिक चिंता उन्हें रहती थी।

गंगा पंडित वैसे तो महीने में दो ही तीन बार आते थे। वही एकादशी, पूर्णमासी और कभी बीच में एकाध बार और। पर बरसात में देरी होने पर लगभग रोज आने लगते थे। आकर बरामदे में बैठ जाते। हलवाहे नीचे खड़े सूखी परी (पड़ी-पड़ेगा) का महाराज?— का सवाल पूरी विनम्रता से पूछते थे। मुस्कराते हुए गंगा पंडित उन्हें शांत रहने का इशारा करके पत्रा खोलना शुरू करते। थोड़ी देर अंगुलियों पर गणना करते। इस बीच हलवाहे बेसब्री से उनकी भविष्यवाणी का इंतजार करते थे। अंत में गंगा पंडित चिंता झलकाती गंभीर वाणी में घोषणा करते थे।

‘अर्द्रा (आर्द्रा) में तो पानी बहुत कम है। पुनर्बसू (पुनर्वसु) में अच्छी बरसात होगी।’—

और इसके साथ ही— अर्द्रा धान, पुनर्बसू पैया; रोवै किसान, जो बोवै चिरैया— की कहावत एक हलवाहे के मुँह से शुरू होकर गंगा पंडित तक पहुँच जाती थी। विभिन्न नक्षत्रों में धान की बुआई और उसे फसल की पैदावार के विषय में घाघ की यह कहावत गाँव के छोटे-बड़े सभी को याद थी। वे समय-समय पर इसे दोहराते थे।

गंगा पंडित की भविष्यवाणी का प्रसारण दोपहर को घर जाते समय बगडू पूरे गाँव में कर देता था—

‘जोतखी काका (गंगा पंडित का लोक प्रचलित नाम) कह रहे हैं कि इस साल अर्द्रा में पानी बहुत कम है। लग रहा है, सूखा पड़ेगा। धान-पिसान का राम ही मालिक है।’

थोड़ी ही देर में आसन्न सूखे से पूरा गाँव चिंतित हो जाता था। गाँव की यह चिंता बहुत दिनों तक नहीं रहती। दूसरे-तीसरे दिन ही झमाझम बारिष्ठा हो जाती थी। हलवाहे भी गंगा पंडित की भविष्यवाणी भूलकर धान की बुआई में लग जाते थे। भविष्यवाणी पर कोई चर्चा नहीं होती थी और आगे दो-चार दिन पानी न बरसने पर फिर गंगा पंडित से ही

बरसात की संभावना पर वैसे ही प्रश्न पूछे जाते थे।

पंडित जी अब रहे नहीं। उनके उत्तराधिकारी सरकारी स्कूल में अध्यापक हो गए। वे पत्रा नहीं देखते। यजमानी भी दूसरे को सौंप ही चुके हैं। सब कुछ बदल चुका है पर पानी बरसेगा या नहीं का छाष्टवत प्रश्न ज्यों का त्यों है। यह अलग बात है कि अब उत्तर रेडियो और टेलीविजन से मौसम विभाग देता है। सारे परिवर्तनों के बावजूद भविष्यवाणी की सत्यता में कोई परिवर्तन नहीं आया है। सिर्फ उसके प्रति लोगों का व्यवहार बदला है। पहले भी गंगा पंडित की भविष्यवाणियाँ अक्सर गलत होती थीं पर लोगों का उनमें विश्वास था कि कहीं न कहीं वह सच जरूर होगी।

मौसम विभाग की भविष्यवाणी पर भी लोगों में विश्वास का भाव है। दृढ़ता के स्तर तक। बरसात की भविष्यवाणी पर वे कपड़े धुलने लगते हैं। अचार, पापड़ और बड़ियाँ छत पर सूखने के लिए डाल देते हैं और धूप की सूचना पर तुरंत इन्हें अंदर कर लेते हैं।

मौसम विभाग उन्हें कबीर जैसा लगता है। हमेशा उलटबाँसी में संवाद करता हुआ।

सब कुछ ठीक चल रहा था पर पता नहीं कैसे इस साल मौसम विभाग की साख को कई तगड़े झटके लगे। हदहद तूफान और ठंड में कई बार बरसात के बारे में की गयी उनकी भविष्यवाणी को पहले वाली परंपरा के तहत नकारने वाले लोगों को मुँह की खानी पड़ी। अतः अब धीरे-धीरे कुछ लोग मौसम विभाग की भविष्यवाणियों को गंभीरता से लेने लगे।

इधर ज्योतिष ने भी अपने पाँव पसार लिए थे। जीवन के हर क्षेत्र में अनिश्चितता के कारण लोगों का इसमें विश्वास बढ़ता जा रहा था। उसके साथ एक सुविधा यह भी थी कि प्रायिकता के सिद्धांत (थियरी ऑफ प्रोबेबिलिटी) के आधार पर कुछ भविष्यवाणियों को सही होना ही था। और यहाँ तो यदि दस हजार में से एक भी सही हो जाती थी तो चर्चा उसी की होती थी। इसतरह इसके श्रद्धालुओं की संख्या में वृद्धि निरंतर जारी थी।

इस सब भूमिका का कारण है एक छोटी सी घटना जिसके कारण लोग मुझे पहले बड़ा ज्योतिषी मानने लगे। फिर ज्योतिषी होने से मेरे बार-बार मना करने पर वे मुझे अवतार घोषित करना चाहते हैं जिस पर मैं भी गंभीरतापूर्वक विचार कर रहा हूँ।

घटना रेल बजट की है। छब्बीस फरवरी 2015 को

‘न्यूज नेशन’ समाचार चैनल पर मुझे रेल बजट पर चर्चा के लिए आमंत्रित किया गया था। स्टुडियो में 7.45 तक पहुँचना था क्योंकि 8.00 बजे से चर्चा आरंभ होनी थी। मैं जब वहाँ पहुँचा तो अच्छी धूप निकली हुई थी। स्टुडियो में बंद होने से पहले कैमरामैन ने धूप की तेजी की ओर इशारा करते हुए मजाकिया लहजे में कहा- ‘मौसम विभाग ने आज बारिश की भविष्यवाणी की है।’

वे शायद अभी मौसम विभाग के पुराने दिनों में ही खोये हुए थे। उसकी उसी साख के साथ।

आठ बज गए। एंकर के लंबे भाषण के बाद विशेषज्ञों की बारी आयी। रेल बजट में क्या-क्या विशेषता होनी चाहिए? सबको इसी बारे में अपने विचार रखने थे। अधिकांश बिंदुओं पर सबके विचार समान थे, पर मैंने एक ऐसी बात कही जिसे बाकी तीन विशेषज्ञों और एंकर ने हँसी उड़ा दिया। मैंने कहा कि इस बजट में नयी ट्रेनों की घोषणा नहीं होनी चाहिए। कोई मानने को तैयार नहीं था कि रेल बजट आये और नयी ट्रेनों की घोषणा न हो। वे इसे असंभव मान रहे थे।

पूर्व चर्चा नौ बजे समाप्त हुई। हम स्टुडियो से निकल आये। बाहर बूँदा-बाँदी हो रही थी। मौसम विभाग को हल्की राहत। दस बजे से हमें फिर स्टुडियो में जाना था। तब तक बारिश थोड़ा जोर पकड़ चुकी थी। इस बीच हमारा कुछ खास काम नहीं था। पहले तमाम जगहों के लोगों की रेल बजट से क्या अपेक्षाएँ हैं- देखते रहे। 11.00 बजे से संसद का प्रश्नकाल और फिर एक घंटे बाद घंटे भर का रेल मंत्री का बजट भाषण जो कि करीब एक बजे खत्म हुआ। बजट में किसी नयी ट्रेन की घोषणा नहीं की गयी थी। सभी लोग चकित थे। उन्हें लग रहा था कि या तो मुझे बजट की बातें पहले से पता थीं या मैं बहुत बड़ा ज्योतिषी हूँ। बजट बहुत गोपनीय होता है इसलिए पहली बात खारिज करके उन्होंने दूसरी पर विश्वास कर लिया। न केवल विश्वास अपितु दृढ़ विश्वास। कोई अन्य उपाय भी तो नहीं था।

हमलोग दोपहर बाद तीन बजे खाली हुए। बाहर तेज बारिश हो रही थी। मौसम विभाग को पूरी राहत देती हुई। इसकी चर्चा होनी चाहिए थी पर यहाँ मौसम विभाग की सटीक भविष्यवाणी के बजाय मेरे अनुमान पर चर्चा हो रही थी। प्रशंसा चल रही थी।

मेरे बड़े ज्योतिषी होने की अफवाह शाम तक पूरे शहर में फैल चुकी थी। रिपोर्टर और कैमरामैन वहाँ से सीधे एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में गए थे। वहाँ दर्जनों पत्रकार रहे होंगे। पूरे शहर किसी बात को बिजली की तेजी से फैलाने के लिए

इससे अधिक क्या चाहिए?

शाम को एक विवाह समारोह में कई मित्र मिले। सभी मेरी भविष्यवाणी पर ही चर्चा कर रहे थे। मैंने उन्हें बताया कि यह एक अनुमान था। सुझाव था। वे मान गये पर फिर भी चर्चा उसी की चलती रही। अनसर्टेन एज वेदर- इसके केंद्र में था क्योंकि दोपहर वाली बरसात न केवल थम गयी बल्कि आसमान भी साफ हो चुका था।

अनंत जी बड़े ज्योतिषी होने के साथ ही अच्छे विचारक भी हैं। वे कमाई के नये-नये नुस्खे लोगों को बताते रहते हैं। यम देवता का मंदिर कहीं नहीं है। यदि उनका मंदिर बनाया जाए तो वहाँ काफी भीड़ होगी केवल इतना कहना होगा कि इस देवता की पूजा से आयु बढ़ेगी। मेरे बारे में भी उनका अलग ही सुझाव आया-

ठीक है, आप ज्योतिषी मत बनिये। इसमें बड़े खतरे हैं। लोग हर चीज पर आपसे भविष्यवाणी की अपेक्षा करेंगे। कुछ ही दिनों में पोल खुल सकती है। वैसे भी इसमें बहुत कमाई नहीं है।

मुझे लगा कि उनकी बात पूरी हो गयी है पर ऐसा कुछ नहीं था। वे आज की घटना को एक कमाऊ कार्यक्रम में बदलने वाले सुझाव के साथ हाजिर थे। दुबे जी भी उनके साथ थे-

‘आप ज्योतिषी नहीं अवतार हैं। इसकी घोषणा हम करेंगे। कुछ कहानियाँ और गढ़ कर जनता में फैलानी होगी। आपको केवल मौन रहना होगा। आपके मौन की व्याख्या हम करेंगे। हाथ को बीच-बीच में उठाना होगा। लोगों को आश्विवाद देने के लिए। देखियेगा कितना चढ़ावा आता है। हमारे साथ-साथ आपका भी रंग चोखा। आखिर पुजारी को चढ़ावे का भाग मिलता है तो भगवान को भी भोग तो मिलता ही है। क्या करूँ मैं खुद ही अवतार बन जाता पर भोग से मेरा काम नहीं चलने वाला। मुझे तो अधिक चाहिए। भाग चाहिए! भाग।’-

हमलोगों ने विवाह में समारोहपूर्वक भाग लिया और भोजन का भोग लगाने के बाद अपने-अपने स्थान को प्रस्थान कर गये।

वह दिन और आज का दिन- मैं अपने अवतार बनने की संभावना पर सोते-जागते विचार करता रहता हूँ। अनंत जी तब से मिले नहीं यदि फिर मिले और आग्रह किया तो शायद ‘न’ नहीं कर पाऊँगा।

भूतपूर्व मुख्य परिचालन प्रबंधक
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क: 07839057367

◆ कविता ◆

आवारा कुत्ता

ठाकुर अतुल्य कुमार श्रीवास्तव

ड्राइंग रूम के
सोफे पर
बैठे
मिस्टर डॉग
अखबार पढ़ रहे थे
और
बीच-बीच में
चाय की
गरम-गरम चुस्की के साथ
किसी
विशेष समाचार पर
बगल में बैठी
मिसेज डॉगी
की राय ले रहे थे।
सामने
फर्श पर फुदकते
इंसान के बच्चों के आगे
बिस्कीट के टुकड़ों
को फेंक
उन टुकड़ों पर
बच्चों को झपटते देख
अपने भाग्य पर इतरा
मंद-मंद मुस्करा रहे थे।
तभी
मिसेज डॉगी
चाय की चुस्की लेती
मिस्टर डॉग से पूछी-
क्या
कुछ खास समाचार है
उत्तर था-
कुछ खास नहीं
रोज की तरह
वही
धर्म व मजहब की लड़ाई
चोर ने की
कोतवाल की पिटाई
किसी की लुगाई
किसी ने भगायी
नारी ने मिलकर
कन्या भ्रूण की हत्या करायी
कौरव और पांडव ने
कष्ट के विरुद्ध
नई पार्टी बनायी

राम हो गये
रावण के सगे भाई
हनुमान व विभीषण की
हो रही
जग हँसायी।
यह सुन
मिसेज डॉगी कही-
बड़ा बुरा हो रहा है
आदमी ही आदमी को छल रहा है।
अब
हमें ही कुछ करना होगा
दिग्भ्रमित इंसान को
फिर से
इंसान बनाना होगा
संस्कार का
नये सिरे से पाठ पढ़ाना होगा।
यह सुनते ही
मिस्टर डॉग गुस्से से बोला
चुप कुतिया-
इंसान जो कर रहा है
करने दे
जाति-पाति, धर्म व मजहब
के नाम पर लड़ रहा है
उसे लड़ने दे
भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी
लूट व बलात्कार में
उलझा है
उसे उसी में उलझे रहने दें।
नहीं तो-
हमें फिर इस ड्राइंग रूम के
सोफे से उतर
उनके गलियों में जाना पड़ेगा
चाय व श्रीपटीन बिस्कीट
की जगह
उनका जूठन खाना पड़ेगा
और
मिस्टर डॉग की जगह
आवारा कुत्ता
कहलाना पड़ेगा।

सहायक कार्य प्रबंधक, सिगनल कारखाना

गोरखपुर छावनी

संपर्क: 09794840899

◆ कविताएँ ◆
ओमप्रकाश पांडेय आचार्य जी

छोड़ो शिकायत करना

चाह रहे जीवन बगिया को यदि खुशियों से भरना,
सुख की है जो चाह तुम्हें तो छोड़ो शिकायत करना।

सेवा, त्याग, स्नेह, ममता से अपना जग को बना लो
ईश्वर निर्मित जगत है इसमें मत कुछ कमी निकालो।

नित सत कर्म पंथ अपनाओ पर निंदा से डरना,
सुख की है जो चाह तुम्हें तो छोड़ो शिकायत करना।

छोटा-बड़ा यहाँ ना कोई, ना कोई ऊँच या नीचा,
सूरज, चंदा धरा गगन है, एक मेघ ने सींचा।

एक राम रम रहा है सब में कैसा अंतर करना,
सुख की है जो चाह तुम्हें तो छोड़ो शिकायत करना।

मातृभूमि हित तन-मन जीवन कर दो अर्पित अपना
विश्व गुरु बन जाये भारत, नित देखो यह सपना।

क्या खोया, मैंने क्या पाया, प्रतिपल चिंतन करना,
सुख की है जो चाह तुम्हें तो छोड़ो शिकायत करना।

माँ से दूध, अन्न, धरती, नदियों से जल तू पाया,
अन्न, दूध, जलवायु कर्ज है क्या तूने लौटाया?

लिया जगत से दिया मैं क्या, यह सोच हृदय में धरना
सुख की है जो चाह तुम्हें तो छोड़ो शिकायत करना।

भारत माटी की परिपाटी

कितनी अनकही सही बातें उसमें तो छिपी रही होगी
भारत माटी की परिपाटी गौरव गाथा भी कही होगी।
भारत भूमि से होकर जब भी पुरुवा हवा बही होगी।

साबरमती के आश्रम से चरखे की गूँज उठी होगी
सेवा, त्याग, अहिंसा, निष्ठा, सत्कर्म लगन भी जुटी होगी।
गाँधी की आँधी पूरब से पछिचम की ओर बही होगी,
भारत भूमि से होकर जब भी पुरुवा हवा बही होगी।

रामानुज, रमन, चरक, भाभा, पाणिनी, पतंजलि, सुश्रुत, भाष
बंकिम, टैगोर, तिलक, भावे, आजाद, भगत, बिस्मिल, सुभाष
इनकी यष्टि-गाथा की चर्चा उसमें तो छिपी रही होगी,
भारत भूमि से होकर जब भी पुरुवा हवा बही होगी।

रावी, झेलम, सतलुज, चिनाब, गंगा, जमुना, सरयू-धारा
ब्रह्मपुत्र, गंडकी, महानदी, कष्णा, कावेरी जल प्यारा
पतित पावनी गोदावरी की महिमा भी छिपी रही होगी
भारत भूमि से होकर जब भी पुरुवा हवा बही होगी।

गिरिजा बाइबिल, मंदिर, गीता मस्जिद-कुरान की आयतें
हिंदू मुस्लिम ईसाई संग बैठ बाँट मिल के खाते
क्रिसमस, ईद, दिवाली, होली की रंग घुली-मिली होगी
भारत भूमि से होकर जब भी पुरुवा हवा बही होगी।

प्रबंधक
आनंदलोक हास्पिटल
गोरखनाथ, गोरखपुर
संपर्क: 9335757473

जाहिं देस पिक मधुकर न गुजर
कुसुमित नहिं कानने छव ऋतु मास
भेद नहि जानिए सहज हि अवल मदने।

कविवर विद्यापति

◆ गज़लें ◆
कृष्ण चंद्र लाल

एक

सफ़ीने इधर से उधर जा रहे हैं
हवादिस की मौज़ों से कतरा रहे हैं।

भरोसा था जिन पै हमारा गज़ब का
वही आज हम पै कहर ढा रहे हैं।

उन्हें आज ग़म है ज़माने के ग़म का
ज़माने से ग़म पै जो इतरा रहे हैं।

मुहब्बत का रिश्ता उन्होंने दिया है
जो वादों से अपने मुकर जा रहे हैं।

अज़ब ज़िंदगी है कि जुल्मो-सितम की
उसी पेंच में लोग आ जा रहे हैं।

पटी है ज़मीं लाष्टा दर लाष्टा यारो
उन्हें देखिये वे ग़ज़ल गा रहे हैं।

दो

दिल थे कभी खुले हुए अब तंग हो गये
जीने के इस सदी में नये ढंग हो गये।

इंसान इस तरह लगा है जोड़-तोड़ में
कायदे-कानून सभी भंग हो गये।

चेहरे सभी हैं स्याह औ लिबास हैं सफेद
चोर और छाह एक रंग हो गये।

हर छाख्स है बदल रहा रोज-रोज रंग
गिरगिट भी देखकर जिसे हैं दंग हो गये।

इंसानियत का आब अब कहीं नहीं रहा
चेहरे इसी से देखिये बदरंग हो गये।

डी-55, सूरजकुंड कालोनी
गोरखपुर-273015
संपर्क: 9451958715

◆ गज़लें ◆
टी.एन.श्रीवास्तव 'वफ़ा गोरखपुरी'

एक

पत्थर दिखाई दे न तो खंजर दिखाई दे
बेखौफ़ अपने मुल्क का मंज़र दिखाई दे।

अपने खुलूसो प्यार से तुम सींचते रहो
धरती मुहब्बतों की न बंजर दिखाई दे।

ये इल्तिजा है तुमसे बताना मुझे ज़रूर
तुमको अगर कमी मेरे अंदर दिखाई दे।

आँखें उसी को पूजती रहती हैं रात-दिन
जो सत्य-शिव दिखे, वही सुंदर दिखाई दे।

ऐ दोस्त दुष्टमनी का मैं कायल ज़रूर हूँ
पर कोई मेरे क़द के बराबर दिखाई दे।

मैं ढूँढ़ता रहा हूँ ग़ज़ल के लिए 'वफ़ा'
मंज़र कोई हसीन कहीं पर दिखाई दे।

दो

माना कि तेरे प्यार के क़बिल नहीं हूँ मैं
लेकिन वफ़ापरस्ती से ग़ाफ़िल नहीं हूँ मैं

हिंदू हमारी आँखें हैं, मुस्लिम हैं सर का ताज
दोनों में भेद-भाव का कायल नहीं हूँ मैं

सच का तमाम उम्र किया मैंने सामना
सच्चाइयाँ समझती हैं, बुज़दिल नहीं हूँ मैं

रस्ता है उसपे चलते ही जाना है ज़िंदगी
ये तो मुझे पता है कि मंज़िल नहीं हूँ मैं

जो मुझ से मिल चुके हैं, ये उनका खयाल है
आसान तो ज़रूर हूँ, मुष्टिकल नहीं हूँ मैं

पहचान है अलग मेरी इस शहर में 'वफ़ा'
क्योंकि किसी गुप में शामिल नहीं हूँ मैं।

मकान सं.-597(वाई)
सेठ गुलाम अली कैपस
असुरन चुंगी, मेडिकल रोड
गीता वाटिका, गोरखपुर-273006 (उ.प्र.)
संपर्क: 09450885485

◆ कविताएँ ◆
अनिल कुमार दत्ता

त्योहार दुःखों का

इस बस्ती में द्वार-द्वार पर
सजा हुआ दरबार दुःखों का
पर्व विवशताओं का है, या
अंतहीन त्योहार दुःखों का

थकना क्या और टूटना क्या
यह किस्मत का रूठना क्या
चक्र, छांख, तिल, रेखाओं से
कब बदला संसार दुःखों का

घिस-घिस कर चंदन हो जाना
तप-तप कर कुंदन हो जाना
हो जाना जड़ का स्पंदन-
है मुझ पर उपकार दुःखों का

चंचल चित का चेतना फिर
सहज सञ्चन को प्रेरणा फिर
मुझे जिंदगी ने ही दिया है
यह अनुपम उपहार दुःखों का

हर पतझड़ का तय बसंत है
हर अंधड़ का नियत अंत है-
हर-एक रात की सुबह सुनिश्चित
तो मानूँ आभार दुःखों का

चाहत हिम्मत लिख जाती है
हिम्मत किस्मत लिख जाती है
संकल्पित संघर्ष निरंतर
एक मात्र उपचार दुःखों का

बुलबुले

कभी जलाशय बुलबुलों से
ऊबा नहीं करते
उन्हें विदित बुलबुले कभी
डूबा नहीं करते....

बदल रही है रंग जिंदगी
ढंग बदलता हुआ समाज
कल तक जिन गमलों में तुलसी
मनीप्लांट उनमें हैं आज
परिवर्तन पर प्रश्न कभी
पूछा नहीं करते...

थकीं, टूटतीं साँसों को जब
दूर किनारा होता है
अक्सर डूब रहे को एक
तिनके का सहारा होता है
ये अदने से तिनके भी कब
अजूबा नहीं करते...

सुस्ताता है थका चाँद
हर एक अमावस रात में
और चमक उठते हैं तारे
मिलजुल कर एक साथ में
उस रात सितारे चाँद को
ढूँढ़ा नहीं करते...

कार्यालय अधीक्षक
विधि कार्यालय/कार्मिक
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क: 09005092337

नवीनता की स्थापना करने वाली तथा सञ्चन की दूती वसंत ऋतु वासंती चुनर ओढ़े सबके मन को लुभाती है। वसंत ऋतु निराशा में आशा का संचार करने वाली और जीवन में प्रेरणा देने वाली भी है-

फूले चाहें दिष्टाआम, भई सुगंधित ठौर सब।
मधु-मधु पी अलिग्राम, मत्तभये झूमत फिरें।

◆ कविताएँ ◆
रीभा तिवारी

कुछ कर जाओ

एक विष्ठवास जगाते हो
एक एहसास दे जाते हो
कुछ कर जाओ
कुछ कर जाओ
जिंदगी चित्र है
इसमें रंग भर जाओ
आशा है निराशा है
ये तो जीवन का पासा है
जिसे खेल समझ मत खेलो
अभी से भी संभल जाओ
समय जो बीत जाए
उसे लौटना है मुष्टिकल
हर समय कुछ नया कर जाओ
समय का उपयोग कर जाओ
अपनी कोई पहचान बना जाओ
ताकि तुम रहो न रहो
नाम तो रह जाए
जहाँ में तेरी पहचान तो रह जाए
तुम में तेरी पहचान तो रह जाए
तुम मिट्टी हो, मिल जाओगे मिट्टी में
भूली बिसरी यादों में
एक स्थान बना जाओ
अपने होने का निष्ठान बना जाओ
लेते तो सभी हैं एक-दो
तुम तो कुछ दे जाओ
कुछ ऐसा कर जाओ
कुछ ऐसा कर जाओ॥

कुछ दूर है

कुछ दूर है
कुछ पास है
हर किसी को
किसी की
तलाश है।
यह जिंदगी
तो एक प्यास है।
जिसे मिल गया
वह पा लिया
जो पा लिया
उसे खो दिया
जिसे नहीं मिला
वो हैरान है
व्यर्थ में परेष्ठान है
यह वो प्यास है
जो बुझती नहीं
सागर में बूँदें
मिलती नहीं
जो ढूँढ़ता है
वह ढूँढ़ता रहे
बिन राह चलता रहे
पास मँजिल रहे
फिर भी भटकता रहे
व्यर्थ ही प्यास रे
कुछ दूर है
कुछ पास है।

पत्नी नागमणि तिवारी
एस.बी. आई. कालोनी के सामने
फैजलगंज, सासाराम
रोहतास-821115 (बिहार)
संपर्क: 0943099016

दुनिया का कोई धर्म पीड़ा से मुक्ति की गारंटी नहीं दे सकता,
लेकिन प्रेम, विष्ठवास, ज्ञान और संकल्प ये गारंटी देते हैं।

टोबाबेटा

◆ कविताएँ ◆
अरुण कुमार मिश्र

अभिलाषा

स्फूर्ति एवं उत्साह संयुक्त।
ध्येय परम निष्ठचल उपयुक्त॥

लक्ष्य अभेद्य विचार कहाँ?
संकल्प निरंतर प्रतिबद्ध जहाँ॥

सुख श्रान्ति सदा जीवन परिपूर्ण।
समृद्धि निरोग जगत संपूर्ण॥

अवसाद रहित नैराश्रय मुक्त।
गतिमय जीवन और आशा युक्त॥

अनुकूल समीर नहीं प्रतिपल।
अवलंब बने पतवार अविरल॥

यथार्थ

देष्टा की सीमा पर सैनिक मुस्तकिल।
चिंता न रक्षा देष्टा की, अस्तित्व की प्रतिपल॥

परे कल्पना मुष्टिकल भरी हैं राह सब।
निष्ठिचंत और बेफिक्र है, साम्राज्य तब॥

नीयत निरंतर अरि बनी दुष्टवार जब।
कठिन संग्राम सीमा पर शुरु हो जाए कब॥

मात खाते रोज फिर भी हार नहीं वो मानते।
आका नहीं थकते तथा हिम्मत नहीं वो हारते॥

वाह क्या हिम्मत, हमारे वीरों ने रखी पाल है।
मुल्क उन पर गर्व करता है, सदा दिन-रात है॥

दौर बीता देष्टा भक्तों का, यहाँ सब लूट है।
राज नेता कर्तबे दिखलाते, नतीजा फूट है॥

न्यायपालिका प्रहरी, और रक्षक रहे इस देष्टा में।
काष्ठा ऐसा हो सके, नागरिक न बसे परदेष्टा में॥

राजभाषा संपर्क अधिकारी
भारतीय जीवन बीमा निगम
मंडल कार्यालय, गोरखपुर
संपर्क: 9415639378

◆ कविता ◆
राष्ट्र को क्या चाहिए
अनामिका सिंह

बंदूक यार का प्यार नहीं हो सकता जग यह जान रहा है
संयत मन निर्मल दिलवाला जो भी ऐसा मान रहा है॥

उस अशोक भारत महान ने किया बड़ा संहार कभी था
श्रान्तिदूत बन बुद्ध मिले तो याचक बन गए ज्ञान सुरुभि का॥

यूनानी वह वीर सिकंदर विष्टव विजय कर क्या पाया था
हाथ पसारे वह आया था रिक्त हाथ ही सोया था॥

याद करो पैगंबर साहब दीन दुखी के रखवाले
पर यजीद ने हत्या कर दी बन कर क्रूर हृदय वाले॥

ईसा ने था दिया प्रेम का संबल दुनिया वाले को
उनको समझ नहीं पाए जन कील पड़ी मतवाले को॥

मन चंचल माया का घेरा ईर्ष्या द्वेष अंधेरा है
हठधर्मी और बुद्धि चपल का बड़ा कठिन यह घेरा है॥

कौन कहे कलि कुटिल जगत को कभी समझ में आएगा?
राष्ट्र हमारा और जगत क्या कभी सुधर भी पाएगा॥

कनिष्ठ अनुवादक
केंद्रीय हिंदी अनुभाग
मुकाधि कार्यालय
पूर्वोत्तर रेलवे
गोरखपुर

आत्मशक्ति
इतनी दृढ़ और गतिशील है
कि इससे दुनियाँ को टुकड़ों
में तोड़कर सिंहासन गढ़े जा सकते हैं।

रिचर्ड सील

◆ कविता ◆
अंधकार में उजियार
सुधीर कुमार 'चंदन'

विकलांगता का न नेक ग़म, ना ही जिंदगी बेकार करो
साहस को सदैव बना सहारा, इसे खुब गुलजार करो
तन-मन तपिष्ठ पर खुद-व-खुद ही 'चंदन' बन छीतलता पाओ
गुण-गंध बिखेर जग से कहो, 'कर्मठता का दीदार करो।'
विकलांगता का न नेक ग़म, ना ही जिंदगी बेकार करो।

गर राह ऊपर रोड़ा अटके, हनुमान-सी हुंकार भरो
विजय वरण कर निज बहादुरी की सदैव जय-जयकार करो
विकलांग तो वे, तन-मन हैं सबल मगर हाथ-पर-हाथ धरे
कर्म-पुजारी! 'चरैवेति-चरैवेति' मंत्र उच्चार करो
विकलांगता का न नेक ग़म, ना ही जिंदगी बेकार करो।

'आष्टा-दीप' लेकर चल पड़ो अंधकार में उजियार भरो
अब तो 'जीवन-सारथी!' अपनी ताकत का एतबार करो
हाथों को पैर, पैरों को हाथ बना लेना मीत मेरे!
पर भूलकर भी किसी हाल शब्द 'लाचार' न उच्चार करो।
विकलांगता का न नेक ग़म, ना ही जिंदगी बेकार करो।

विकलांगता-विविधता बखान कर न मदद की मनुहार करो
फ़र्ज समझ सौंपे जो जन, तन-मन-धन-सेवा स्वीकार करो
नहीं यह कुछ कम कि ज़मीन से फलक छूकर 'अर्जुन' बने हो
कुछ कमाल कर दिखाओ निज उपलब्धियों का प्रचार करो।
विकलांगता का न नेक ग़म, ना ही जिंदगी बेकार करो।

हीन भावना, संकोच, दबूपन सात समुद्र पार धरो
मंजिल मिलेगी मनचाही, बाधाओं का बहिष्कार करो
ऊबड़-खाबड़ रास्तों को श्रम से समतल करके दिखाओ
तुम चाहो तो अपने साथ दूसरों का भी उद्धार करो
विकलांगता का न नेक ग़म, ना ही जिंदगी बेकार करो।

भूतपूर्व निजी सचिव
341, मेकनियर रोड
प्रेमनगर, बरेली-243005
संपर्क: 09997689075

◆ कविताएँ ◆
शंभु नारायण

दलित

अंजलि मांगे भात!
लिए कटोरा किस्मत, मांगे करुणा से सौगात!
अंजलि...
शुष्क झील से, पलक न जाने कैसे अष्टक उलीचें?
सूख रही सपनों की छाखें, किस मेधा से सींचें
तिनकों बनी मड़ैया टूटी, गौरैया पछतात!
अंजलि...
इस मौसम का समा न कोई, रुखा हर कोना
दसो दिशाएँ नाच रही हैं, मंत्र, किए टोना
छाबर मंत्र, विवश बोली है, ठाकुर मारे लात!
अंजलि...

बोध

एक ही पल, कर गयी छल, मौन की छाया
वेदना दे, किस नदी ने, ज्वार छलकाया?
सुघर कोमल स्नेह वत्सल, अभिनवी उद्दाम
मुग्ध के दोनों नयन हैं, भूलते निज नाम
धवल उज्ज्वल, सुहृद तन, स्वर किसका लहराया?
एक ही पल...
वेदना दे...
सो गया वैराग, मीठी नींद से अनजान
संज्ञान की हर तूलिका से, पूछता ज्यों प्राण
आह, से अभिषेक करने, क्या? प्रहर आया
एक ही पल...
वेदना दे...

अवशिष्ट

क्लांत ठहरी छाँव
जिंदगी का है मुसाफिर, धूप देते दाँव! क्लांत ठहरी छाँव
वे कहाँ? थे जो कभी, द्वार दृष्ट के पीर
कौन जो संवेदना के, नित गढ़े प्राचीर
दह रही है, ले बिबाई, अनुभवों के पाँव! क्लांत ठहरी छाँव

मो. छोटे काजीपुर
गोरखपुर

रफ़्तार से ज्यादा जरूरी है दिष्टा

◆ कविता ◆
फागुनी दोहे
दीनानाथ तिवारी

हँसी, ठिठोली, कहकहे, गीत, गुलाल, अबीर,
फागुन लेकर, आ गया, गाता फाग कबीर।

प्यार भरी तक़रार शिकायत, प्रेम फिसलते पाँव
मन मुसाफिर सम्हल चल, फगुनायी हर ठाँव।

दिग्दिगंत फूलों सजे, सजी फूल की हाट
रंग खुशबू गलियाँ सजी, यह फागुन के ठाट।

फागुन फूला अंग अंग, मन फूला कचनार
यौवन की बगिया खिली, फिर फागुनी बहार।

चढ़ वसंत की पालकी, गीतों लगे कँहार
फागुन फागुन गा रहा, बोता रंग फुहार।

पुलक हवा पंखा झले, केसर उवटे धूप
खुशबू हँस नहला रही फागुन ऋतुपति भूप।

फूलों के प्याले भरे, सुबह खिल खिला जाम
तौबा सारे तोड़ मन, हुआ उमर खय्याम।

ढाके की मलमल पहन, नहा चाँदनी नीर
फागुन की यह चाँदनी, तन मन करे अधीर।

झुमके नथ पहने करें कलियाँ हँस मनुहार
फूलों के मन हो गये, मदन महीप कुमार।

फगुनायी आँखों उगे, फिर कुछ ऐसे ख्वाब
तन मन फागुन बो रहा, हँस हँस प्रेम गुलाब।

आँख मार आँखों हँसे कलियाँ करें कटाक्ष
फागुन तुम मन लेत हो देते नहीं छटाक।

हवा चुलबुली हो गई, घूमे रात विरात
राहों में बाँहों भरे, करे रसभरी बात।

टेसू के खिलते, जले, दहे उठे वन बाग
फागुन ने हँस लगा दिया, बिना धुएँ की आग।

फागुन चढ़ते ही हवा, बौरायी बेचैन
धकियाती राहों चले, करे न पल भर चैन।

फूलों का कुर्ता पहन, हाथों लिए गुलाब
फागुन संग रंग खेलने, आया वक्त नवाब।

रसिक बिहारी मन हुआ तन जैसे रसखान
फगुनाये होठों तिर, पद्माकर के गान।

रंगों के झरने झरे झरे गुलाल अबीर
सुबह शाम मन हो रहा फागुन का कष्टमीर।

कचनारी यादें घिरीं, साँसों भरी उमंग
अंग अंग फागुन खिला, रोम रोम अनंग।

देवर जैसे दिन हुए, ननद सरीखी शाम
भाभी सी मधुयामिनी, पिला रही मधु जाम।

1/8 लेबर कालोनी
मोहदीपुर
गोरखपुर

चला जाता हूँ हँसता-खेलता, मौज-ए-हवादिस से।
अगर आसानियाँ हों, जिंदगी दुष्टवार हो जाए॥

असगर गोंडवी

◆ कविता ◆
रेलवे स्टेष्णन के अनाम मेहनतकष्ट
शिवेंद्र कुमार मिश्र

कुहरा इतना घना है
सूरज भी आज अनमना है
ओढ़ा है अभी तक लिहाफ
ड्यूटी नहीं जाना
लगता है ये साफ

रात भी थी
कोहरे में लिपटी
गहरी ठंडी काली
और सारी रात
आटो में ढोई थी
उसने सवारी

ठंड से काँपते थे यात्री
पर यह नहीं काँपा
काफी मजबूत थी
उसकी अँतड़ियाँ
रोज झेलता था
गरमी बरसात सर्दियाँ

काँपता तो काँपता भी कैसे
यह मौसम पर
हमेष्ठा भारी है
क्योंकि उस पर
माँ बहिन बीबी बच्चों की
जिम्मेदारी है।

ऐसे जाने कितनी रात
खुद से जंग लड़ते हुए
घुटने पेट में घुसाकर
अपने आटो में गुजारी है
रोजी और सरदी से
जंग लड़ते हुए।

ये जंग हमेष्ठा चलती रहती है
कभी मौसम के साथ
तो कभी पुलिस विरादारानो
रेल कर्मचारियों या
गुंडे मवालियों के साथ

ऐसे और भी मेहनत कष्ट है
कुली भिखारी पान बीड़ी वाले
रिक्शा चालक वेंडर
बगैरह, बगैरह
ये सब रोज लड़ते हैं
जिंदगी की जंग।

लड़ते लड़ते मर जाते हैं
इनके लिए न मुट्ठियाँ मिचती
न ही होता लाल सलाम
बस पेट में कुड़कुड़ाती
अँतड़ियों के साथ
मर जाते हैं एक दिन
गुमनाम।

24, आशुतोष सिटी
पीलीभीत बाईपास रोड
बरेली-243122(उ.प्र.)
संपर्क: 07351041061

◆ कविता ◆
तारकेष्ठवर शर्मा 'विकास'

कविता मोहब्बत है या
मोहब्बत कविता
मेरी राय है कि लिखी जाएँ
प्रेम पर अधिक से अधिक
कविताएँ
किए जाएँ पुराने
मुहावरे/लोकोक्तियाँ
फिर से चरितार्थ ताकि
कविताओं की हर पंक्ति को
एक अदना पाइक भी
कर ले कंठस्थ।
जानते हैं-
'मन चंगा तो कठौती में गंगा' को
वही आत्मसात कर सकता है
जो होगा माहब्बत के मज़हब का
देवता
और होगी जिसमें
विश्व-बंधुत्व की प्रबल

प्रेम-भावना
दोस्त! अगर कविता को
हम मोहब्बत मान लें
तो एक कवि का धर्म होगा
पवित्र-प्रेम के पौधे को
खाद-पानी डाल बड़ा करना
और पर्यावरण को संतुलित रखना।
प्रेम को कइयों ने पढ़ा, चखा,...
और
बाबा कबीर की तरह 'ढाई
आखर' के प्रेम को
ताउम्र गुना और किया प्रेम को
ऐसे परिभाषित कि
कहीं तात्याना ग्राउज, ईना क्येबिष्ठ,
जूलिया ब्लूसोविच...
और तस्लीमा नसरीन जैसी अनेकों
कवयित्रियाँ हुईं।
प्रश्न उठता है-

कौन होगा प्रेम की कविता का
कीट्स?
कौन होगा मोहब्बत का देवता?
जो देवों का देव था, नहीं रहा
उसकी जरूरत भी नहीं थी
देवों का देव इंद्र किसे चाहिए था
उन्हें जिन्हें कविता को
लस्टम-पस्टम बनाना था
या कुछ और।
दोस्तो! हमें चाहिए पंत, बच्चन,
निराला-सा कवि
सुभद्रा, महादेवी, अमृता-सी
कवयित्री।

क्वार्टर नं.: डब्ल्यू-36, यूनिट-2
न्यू ट्रेफिक कालोनी
इंदा, खड़गपुर -721305
पश्चिम बंगाल
संपर्क: 09933615074

◆ गतिविधियाँ ◆

मुख्यालय

महाप्रबंधक श्री राजीव मिश्र की अध्यक्षता में 19.03.15 को क्षेत्रीय रेलवे राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक आयोजित की गई जिसमें रेलवे के विभिन्न विभागों, मंडलों एवं कारखानों में हिंदी कार्यों के प्रयोग-प्रसार की समीक्षा की गई।

मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री ज्ञान दत्त पांडेय की अध्यक्षता में 18.03.15 को मुख्यालय में 'मधुमेह रोग व हाइपर टेंशन' विषय पर तकनीकी संगोष्ठी आयोजित की गई जिसमें डॉ. नंद किशोर, उप मुख्य चिकित्सा निदेशक/गो. व डॉ. डी.एल. चौरसिया, वरि. मंडल चिकित्सा अधिकारी, ल.ना.मिश्र रेलवे चिकित्सालय/गो. ने विस्तारपूर्वक व्याख्यान देकर उपस्थितजनों को इस रोग के कारणों, संभानाओं व उससे बचाव के तरीके सुझाए।

मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री ज्ञान दत्त पांडेय की अध्यक्षता में 22.01.15 को मुख्यालय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक आयोजित की गई जिसमें रेलवे के विभिन्न विभागों, मंडलेतर इकाइयों, प्रशिक्षण केंद्रों एवं कारखानों में हिंदी कार्यों के प्रयोग-प्रसार की समीक्षा की गई।

रेलवे बोर्ड की व्यक्तिगत नकद पुरस्कार योजना वर्ष 2013 के अंतर्गत श्री जी. एस. पांडेय, मंडल सिगनल व दूर संचार इंजीनियर, गोरखपुर को नकद पुरस्कार व प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ।

मुख्य प्रशासनिक अधिकारी/निर्माण संगठन की अध्यक्षता में 15.03.15 को विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन किया गया।

मुख्यालय में 29.01.15 को चिकित्सा विभाग, 24.02.15 को विद्युत विभाग, 17.03.15 को संरक्षा विभाग की समीक्षा बैठकें तथा 04.02.15 को उप मुविइ/कालोनी व 16.02.15 को उप मुइ/गो. क्षेत्र कार्यालय में स्थापित विभागेतर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन किया गया।

मुख्यालय स्थित पर्यवेक्षक प्रशिक्षण केंद्र में प्रशिक्षुओं के लाभार्थ जनवरी/15 माह में एच.एच.पी.लोकोमोटिव की स्टार्ट करने की विधि, रिसाइक्लिंग करने की विधि तथा पेनाल्टी रिकवर करने की विधि, ब्रेक बाईडिंग के कारण एवं निवारण, डब्ल्यू.डी.जी.-4, डब्ल्यू.डी.पी.-4 तथा

डब्ल्यू.डी.पी.-4डी लोकोमोटिव का सिगनल पासिंग एट डैज र कंडीशन, एच.एच.पी. लोकोमोटिव से संबंधित ट्रबल शूटिंग तथा फरवरी/15 माह में एच.एच.पी. लोकोमोटिव का परिचय, एस.पी.ए.डी. से बचने के उपाय, ब्रेक बाईडिंग के कारण एवं निवारण, इलेक्ट्रिकल लाकोमोटिव, एच.एच.पी.लोकोमोटिव में कंट्रोल स्टैंड चेंज करना, पेनाल्टी रिकवर करना तथा रिसाइक्लिंग करने का तरीका विषयों पर तकनीकी संगोष्ठियाँ आयोजित की गईं।

वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी श्री वी.डुंगडुंग द्वारा 27.02.15 को लखनऊ मंडल के वाणिज्य विभाग तथा 10.03.15 को वाराणसी मंडल के वाणिज्य विभाग में हिंदी के प्रयोग-प्रसार संबंधी कार्यों का निरीक्षण किया गया।

राजभाषा अधिकारी श्री ध्रुव कुमार श्रीवास्तव द्वारा 06.02.15 को मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, लखनऊ 07.02.15 को स्टेशन प्रबंधक कार्यालय, लखनऊ के विभिन्न कार्यालयों, 24.02.15 को इज्जतनगर यांत्रिक कारखाना तथा 25.02.15 को इज्जतनगर मंडल कार्यालय में हिंदी के प्रयोग-प्रसार संबंधी कार्यों का निरीक्षण किया गया।

इज्जतनगर

मंडल रेल प्रबंधक श्री चंद्र मोहन जिंदल की अध्यक्षता में 25.02.15 को मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन किया गया जिसमें मंडल के विभिन्न विभागों, कारखाना व डिपो में हिंदी कार्यों के प्रयोग-प्रसार की समीक्षा की गई। इस अवसर पर 'स्वाइन फ्लू-कारण एवं निवारण' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें मंडल चिकित्सालय के अपर मुख्य चिकित्सा अधीक्षक डा. बी.एन. चौधरी ने स्वाइन फ्लू के बारे में विस्तृत जानकारी दी।

रेलवे बोर्ड की व्यक्तिगत नकद पुरस्कार योजना वर्ष 2013 के अंतर्गत श्री उमाशंकर शर्मा, सहायक मंडल इंजीनियर, मथुरा छावनी (वर्तमान मंडल इंजीनियर) को नकद पुरस्कार व प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ।

विष्व हिंदी दिवस की पूर्व संध्या पर 09.01.15 को मंडल कार्यालय में एक विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें 'विष्वभाषा के रूप में हिंदी की दिशा-दशा' विषय पर विस्तृत चर्चा की गई।

19.02.15 को सहायक मंडल इंजीनियर कार्यालय मथुरा छावनी में हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया

जिसमें कर्मचारियों को राजभाषा अधिनियम 1963 यथा संशोधित 1967 के विभिन्न धाराओं की विस्तृत जानकारी दी गई।

04.03.15 को इज्जतनगर चिकित्सालय में कार्यशाला के माध्यम से 'रेलवे बोर्ड की विभिन्न पुरस्कार योजनाओं' की विस्तृत जानकारी दी गई।

03.02.15 को मुख्य कारखाना प्रबंधक, यांत्रिक कारखाना श्री मनोज विष्टवास की अध्यक्षता में यांत्रिक कारखाना राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक संपन्न की गई। 11.02.15 को महाप्रबंधक महोदय के यांत्रिक कारखाना के निरीक्षण कार्यक्रम के अवसर पर उनके कर-कमलों से 'यंत्रालय दर्पण' बुलेटिन का विमोचन कार्य संपन्न किया गया।

02.02.15 को डीजल श्रेड इज्जतनगर, 19.02.15 को मथुरा छावनी तथा 04.03.15 को चिकित्सालय इज्जतनगर की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन किया गया।

मंडल रेल प्रबंधक श्री चंद्र मोहन जिंदल ने 13.01.15 को कल्याणपुर-फर्रुखाबाद खंड का विंडो ट्रेलिंग निरीक्षण, कल्याणपुर, मंथना, चौबेपुर, बरजपुर, उत्तरीपुरा, बिल्हौर, अरौल मकनपुर, कन्नौज, जशोदा, गुरसहायगंज, फतेहगढ़ एवं फर्रुखाबाद स्टेशनों के निरीक्षण, 30.01.15 को फर्रुखाबाद स्टेशन पर किलाबंदी टिकट जाँच के दौरान निर्धारित चेक लिस्ट पर राजभाषा हिंदी के प्रयोग की जाँच की और निरीक्षण रिपोर्टों में हिंदी संबंधी पैरा भी दर्ज किया। उन्होंने 01.02.15 को नई दिल्ली स्थित रेलवे अधिकारी विश्रामगढ़ लाजपत नगर, 05.02.15 को महाप्रबंधक महोदय के साथ फर्रुखाबाद-कल्याणपुर खंड, 12.02.15 को बरेली सिटी-कासगंज खंड, 21.02.15 को इज्जतनगर-पीलीभीत खंड (गाड़ी सं.15309 द्वारा) पीलीभीत स्टेशन, पीलीभीत-टनकपुर खंड (गाड़ी सं. 52227 द्वारा) एवं टनकपुर स्टेशन के निरीक्षण के दौरान निर्धारित चेक लिस्ट पर राजभाषा हिंदी के प्रयोग की जाँच की और निरीक्षण रिपोर्टों में हिंदी संबंधी पैरा भी दर्ज किया।

अपर मंडल रेल प्रबंधक एवं अपर मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री सोमेश कुमार ने 06.01.15 को कासगंज स्टेशन पर किलाबंदी टिकट जाँच, उझानी-कासगंज खंड का मोटर ट्राली द्वारा निरीक्षण, 20.01.15 को नई दिल्ली स्थित विश्रामगढ़ के निरीक्षण, 17.02.15 को कासगंज स्टेशन पर किलाबंदी टिकट जाँच, 18.02.15 को मथुरा छावनी स्टेशन एवं 24.02.15 को फर्रुखाबाद स्टेशन पर

किलाबंदी टिकट जाँच निरीक्षण के दौरान निर्धारित चेक लिस्ट पर राजभाषा हिंदी के प्रयोग की जाँच की और निरीक्षण रिपोर्टों में हिंदी संबंधी पैरा भी दर्ज किया।

राजभाषा अधिकारी श्री राजेंद्र कुमार द्वारा 03.01.15, 17.01.15, 31.01.15, 16.02.15 व 21.02.15 को लालकुआ स्टेशन स्थित विभिन्न कार्यालयों यथा- स्टेडी तथा सी.से.इंजी.(समाडि) कार्यालय, 10.01.15 को भोजीपुरा स्टेशन पर स्टेशन बेस टिकट जाँच, सी.से.इंजी./रेलपथ एवं कार्य, 17.01.15 व 31.01.15 को लालकुआ स्टेशन, 16.02.15 को 19.02.15 मथुरा छावनी स्टेशनों पर हिंदी प्रयोग का निरीक्षण किया गया।

लखनऊ

श्री अनूप कुमार, मंडल रेल प्रबंधक की अध्यक्षता में 27.02.15 को मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन किया गया जिसमें मंडल के विभिन्न विभागों में हिंदी कार्यों के प्रयोग-प्रसार की समीक्षा की गई।

रेलवे बोर्ड की व्यक्तिगत नकद पुरस्कार योजना वर्ष 2013 के अंतर्गत वरिष्ठ मंडल संरक्षा अधिकारी कार्यालय के श्री लवकुश कपूर, वरिष्ठ लिपिक को नकद पुरस्कार व प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ।

22.01.15 को मंडल कार्यालय में प्रख्यात साहित्यकार महाप्राण पं. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' जी की जयंती का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य वक्ता के रूप में श्री सूर्य प्रकाश दीक्षित, पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष, लखनऊ विश्वविद्यालय ने उनके व्यक्तित्व व कर्तित्व पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला। साथ ही इस अवसर पर एक भव्य कवि सम्मेलन का भी आयोजन किया गया जिसमें प्रांतीय स्तर के नामचीन कवियों ने अपने काव्य-पाठ से उपस्थित श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया।

30.01.15 को सीतापुर स्टेशन पर 'सरकारी कामकाज हिंदी में करने में आने वाली अड़चनें व उनका समाधान' विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें 15 कर्मचारियों ने सहभागिता की। इसी दिन महान छायावादी साहित्यकार जयशंकर प्रसाद जी की जयंती का आयोजन किया गया जिसमें डा.अरुण त्रिवेदी, पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष, आर.एम.पी. डिग्री कालेज, सीतापुर ने प्रसाद के व्यक्तित्व एवं कर्तित्व पर विस्तृत प्रकाश डाला।

21.02.15 को कानपुर अनवरगंज में महान

साहित्यकार सोहनलाल द्विवेदी की जयंती का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य वक्ता के रूप में आमंत्रित डा. रमेश वर्मा, पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष, डी.ए. वी. डिग्री कालेज, कानपुर ने द्विवेदी जी के व्यक्तित्व व कक्षित्व पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला।

21.02.15 को कानपुर अनवरगंज स्टेज पर 'शॉक लगना एवं उसका प्राथमिक उपचार' विषय पर एक तकनीकी संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें व्याख्याता के रूप में आमंत्रित डा. रमेश चंद्र, वरिष्ठ मंडल चिकित्सा अधिकारी ने शॉक लगने की वजहों एवं उसके प्राथमिक उपचार देने के बारे में विस्तार से जानकारी दी।

08.01.15 को संयुक्त कार्यालय गोंडा, 19.01.15 को ऐशबाग, 21.01.15 को लखीमपुर, 27.01.15 को लखनऊ जं., 30.01.15 को सीतापुर, 31.01.15 को मैलानी, नानपारा व बहराइच, 06.02.15 को बस्ती, 07.02.15 को गोरखपुर पश्चिम, 21.02.15 को कानपुर अनवरगंज स्टेजों की स्टेज राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन किया गया।

राजभाषा अधिकारी श्री छैलेष्ठा कुमार मिश्र द्वारा 08.01.15 को संयुक्त कार्यालय/गोंडा, 13.01.15 को बलरामपुर एवं 30.01.15 को सीतापुर, 21.02.15 को कानपुर अनवरगंज व 04.03.15 को बस्ती स्टेज स्थित हिंदी ग्रंथालयों का निरीक्षण किया गया। साथ ही 30.01.15 को सीतापुर, 06.02.15 को बस्ती, 03.03.15 को स्वामी नारायण छपिया व 04.03.15 को गोरखपुर स्टेज स्थित विभिन्न कार्यालयों, 07.02.15 को सी.से.इं./रेलपथ गोरखपुर पूर्व कार्यालय में राजभाषा हिंदी के प्रयोग-प्रसार संबंधी कार्यों का निरीक्षण किया गया।

वाराणसी

श्री अजय विजय वर्गीय, मंडल रेल प्रबंधक की अध्यक्षता में 10.03.15 को मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन किया गया जिसमें मंडल

के विभिन्न विभागों एवं प्रशिक्षण केंद्र में हिंदी कार्यों के प्रयोग-प्रसार की समीक्षा की गई।

रेलवे बोर्ड की व्यक्तिगत नकद पुरस्कार योजना वर्ष 2013 के अंतर्गत भंडार विभाग के श्रीमती ममता श्रीवास्तव, कार्यालय अधीक्षक को नकद पुरस्कार व प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ।

06.01.15 को मंडल कार्यालय, 21.01.15 को मंडुवाडीह स्टेज तथा 22.01.15 को मंडल प्रशिक्षण केंद्र, मंडुवाडीह में हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। 18.02.15 को मंडल प्रशिक्षण केंद्र, मंडुवाडीह में हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें कर्मचारियों को विभिन्न पुरस्कार योजनाओं की जानकारी दी गई।

24.01.15 को सचल प्रशिक्षण यान के द्वारा डीजल लॉबी में 26 कर्मचारियों को 'स्पैड एवं ब्रेक बाईंडिंग' विषय पर प्रशिक्षण दिया गया।

19.02.15 को मंडल प्रशिक्षण केंद्र, मंडुवाडीह में 'संत तुलसीदास: व्यक्तित्व एवं कक्षित्व' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस अवसर पर भूतपूर्व राजभाषा अधिकारी श्री ईश्वर लाल द्वारा विनय पत्रिका के गीतों का संगीतमय प्रस्तुति की गई साथ ही प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का भी आयोजन व पुरस्कार वितरण किया गया।

16.01.15 को वाराणसी सिटी, 16.01.15 को मऊ जं. 21.01.15 को मंडुवाडीह, 23.01.15 को गाजीपुर सिटी, 29.01.15 को आजमगढ़, 05.02.15 को बलिया, 09.02.15 को छपरा, 12.02.15 को भटनी, 19.02.15 को थावे व 26.02.15 को इलाहाबाद सिटी स्टेज राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन किया गया।

राजभाषा अधिकारी श्री संजय सिंह द्वारा 29.01.15 को मंडल के सी.से.इं./सिग. कार्यालय एवं 19.02.15 को मंडल प्रशिक्षण केंद्र/मंडुवाडीह में राजभाषा हिंदी के प्रयोग-प्रसार संबंधी कार्यों का निरीक्षण किया गया।

कर्मयोग एवं सत्कर्म व्यक्ति के आत्मबल को बहुत ऊँचा कर देता है।

उसकी संकल्प-शक्ति बहुत बढ़ जाती है।

ऐसा व्यक्ति किसी भी गलत बात या गलत व्यक्ति के आगे नहीं झुकता।



25.02.15 को इंजतनगर मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक को संबोधित करते श्री चंद्र मोहन जिंदल, मरप्र साध में श्री सोमेश कुमार, तत्कालीन अपर मुराधि व श्री राजेंद्र कुमार, राधि



25.02.15 को इंजतनगर मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक के अवसर पर 'स्वाइन फ्लू' विषय पर संगोष्ठी में व्याख्यान देते डॉ. बी. एन. चौधरी, अपर मुधिधी



27.02.15 को लखनऊ मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में श्री अनूप कुमार, मरप्र से रेलवे बोर्ड की व्यक्तिगत पुरस्कार योजना का पुरस्कार व प्रमाण पत्र प्राप्त करते श्री लखकुश कपूर, वरिष्ठ लिपिक



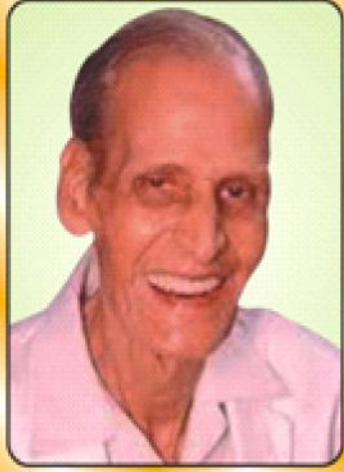
22.01.15 को लखनऊ मंडल में निराला जी की जयंती में उपस्थित मंडल रेल प्रबंधक श्री अनूप कुमार व अन्य अधिकारीगण



10.03.15 को वाराणसी मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में मंडल रेल प्रबंधक श्री एस. के. कश्यप से हिंदी डिक्शनरी का पुरस्कार प्राप्त करते श्री डी.पी.सिंह, वर्ययाई/समाधि



19.02.15 को मंडल प्रशिक्षण केंद्र, मंडुवाडीह में 'संत तुलसीदास: व्यक्तित्व व कृतित्व' विषय पर संगोष्ठी में प्रतियोगिता के सफल प्रतियोगी को पुरस्कार प्रदान करते श्री संजय सिंह, राधि



रामचंद्र नारायण द्विवेदी उर्फ पं. प्रदीप
06.02.1915-11.12.1998
बड़नगर, उन्नाव (य.प्र.)



आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री
05.02.1916-07.04.2011
मुजफ्फरपुर (बिहार)



सर्वेश्वर दयाल सक्सेना
15.09.1927-24.09.1983
बस्ती (उ.प्र.)



जैनेंद्र कुमार
02.01.1905-24.12.1988
अलीगढ़ (उ.प्र.)

श्री ज्ञान दत्त पांडेय, मुख्य राजभाषा अधिकारी, पूर्वोत्तर रेलवे द्वारा प्रकाशित एवं
श्री नानी चुंदूरी, वरि. प्रबंधक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री, पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर द्वारा मुद्रित